श्री श्वेतांबर तपागच्छ मूर्तिपूजक जैन संघ मान्य

धर्मद्रव्य का संचालन कैसे करें ?

१. द्रव्य संचालन मार्गदर्शन

२. संघ संचालन मार्गदर्शन

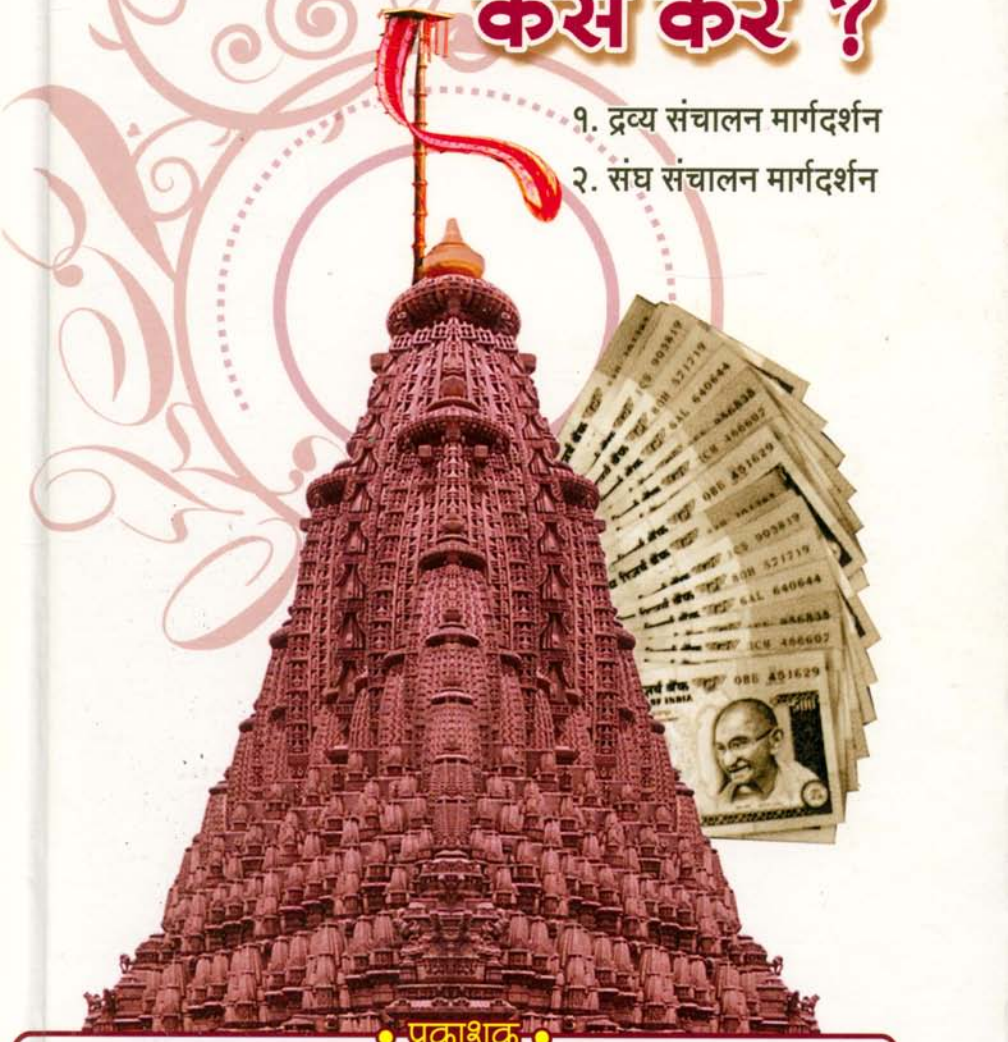

• प्रकाशक •

श्री जैन

धर्मध्वज परिवार

(श्राद्धविधि प्रकरण, द्रव्यसप्ततिका, धर्मसंग्रह आदि ग्रंथों और गीतार्थ गुरु भगवंतों के प्रवचनों में से)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हमारा उत्तरदायित्व

जिनाज्ञानुसार सात क्षेत्र और धर्मद्रव्यों का संचालन - वहीवट करके हम सभी प्रभु महावीर का शासन २१००० वर्ष तक पहुंचाएं। भविष्य के हमारे वारिसदारों को एक सुदृढ व्यवस्था प्रदान कर हमारा उत्तरदायित्व निभाएं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मद्रव्य का संचालन कैसे करें ?

(१-द्रव्य संचालन मार्गदर्शन, २-संघ संचालन मार्गदर्शन)

मार्गदर्शक

तपागच्छाधिराज पू.आ.श्री. विजयरामचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा के शिष्यरत्न
वर्धमान तपोनिधि पू.आ.श्री. विजय गुणयशसूरीश्वरजी महाराजा के शिष्यरत्न
प्रवचनप्रभावक पू.आ.श्री. विजय कीर्तियशसूरीश्वरजी महाराज

प्रकाशक

श्री जैन
॥ धर्मध्वज परिवार ॥

जिनाज्ञानुसार सात क्षेत्र द्रव्य संचालन अभियान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुस्तक का नाम	:	धर्मद्रव्य का संचालन कैसे करें ?
प्रकाशक	:	श्री जैन धर्मध्वज परिवार मालाड - मुंबई
साल	:	वि.सं. २०६८, वी.सं. २५३८, ई.स.२०१२
आवृत्ति	:	तृतीया
प्रति	:	१०००
मूल्य	:	धर्मद्रव्य का जिनाज्ञानुसार सद्उपयोग

: प्राप्तिस्थान :

श्री जैन धर्मध्वज परिवार,

१९/ए, शांतिनाथ शोपिंग सेन्टर, एस.वी.रोड,

बैंक ऑफ बड़ोडा के ऊपर, मलाड (वेस्ट), मुंबई - ४०००६४

संजयभाई शाह - मलाड, मुंबई

Phone : 022 - 28443328 / 09820455443

Fax : 022 - 28443328

बिरेनभाई शाह - ओपेराहाउस, मुंबई

Phone : 09322232391 / 09821133597

धर्मेशभाई शाह - पायधुनी, मुंबई

Phone : 09320284827 / 09322284827

: आभार :

गीतार्थ गुरुभगवंत और कल्याण मित्रों का हम आभार व्यक्त कर रहे हैं जिन्होंने हमें जरूरी मार्गदर्शन दिया है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रम

- प्रकाशकीय IX
- आणाए धम्मो - आज्ञा में धर्म X
- अत्यन्त आवश्यकता XI
- श्री सातक्षेत्र परिचय
  - १. जिनप्रतिमा क्षेत्र. २. जिनमंदिर क्षेत्र XII
  - ३. जिन-आगम क्षेत्र XIV
  - ४. साधुक्षेत्र, ५. साध्वीक्षेत्र XV
  - ६. श्रावकक्षेत्र, ७. श्राविकाक्षेत्र XVII
- सातक्षेत्र का महत्त्व मस्तक समान, जीवदया-अनुकंपा का महत्त्व पैरों समान । XVIII

१. द्रव्य संचालन मार्गदर्शन

धर्मद्रव्य की आय और व्यय : एक शास्त्रीय मार्गदर्शन १

१. जिनप्रतिमा क्षेत्र १

२. जिनमंदिर क्षेत्र १

३. जिनागम क्षेत्र - ज्ञानद्रव्य ४

४-५. साधु-साध्वी क्षेत्र ६

६-७. श्रावक-श्राविका क्षेत्र ८

८. गुरुद्रव्य ८

९. जिनमंदिर-साधारण ९

१०. साधारण द्रव्य ११

११. सर्वसाधारण (शुभ) १३

१२. सातक्षेत्र १३

१३. उपाश्रय-पौषधशाला-आराधना भवन १४

१४. आयंबिल तप १५

१५. धारणा, उत्तरपारणा, पारणा, नवकारसी खाता पौषधवालों को एकाशना एवं प्रभावना आदि खाता १६

१६. निश्राकृत १६

१७. कालकृत १६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८. अनुकंपा १७
१९. जीवदया १७
२०. ब्याज आदि की आय १८
२१. टैक्स (कर) आदि खर्चा १८
२२. पू. साधु-साध्वीजी के कालधर्म के बाद शरीर के अग्निसंस्कार-अंतिम यात्रा निमित्तक बोलियाँ १८
२३. जिनभक्ति हेतु अष्टप्रकारी पूजा की सामग्री संघ को समर्पित करने की बोलियाँ (केशर-चंदन खाता) १८
२४. पर्युषण में जन्म वाचन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ २०
२५. उद्यापन-उजमणा २०
२६. आचार्य आदि पद प्रदान प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ २१
२७. पुजारी के वेतन के बारे में २२
२८. गुरुमंदिर-गुरुमूर्ति आदि संबंधी बोलियाँ २४
२९. पू. साधु-साध्वीजी भगवंत कालधर्म को पाते हैं (स्वर्गवासी बनते हैं) तब बोली जाती बोलियाँ २४
३०. देव-देवियों के बारे में समझ २६
३१. अंजनशलाका-प्रतिष्ठा बोलियों की आय कौन से खाते में जाएगी एवं उसका उपयोग क्या होगा ? एक शास्त्रीय मार्गदर्शन २७
३२. गुरुमंदिर में गुरुमूर्ति/पादुका प्रतिष्ठित करने संबंधी बोलियाँ ३०
३३. रथयात्रा : प्रभुजी के वरघोडे (शोभायात्रा) संबंधी बोलियाँ ३१
३४. मंदिरजी या मंदिरजी से अन्यत्र किसी भी स्थान में परमात्मा के निमित्त जो भी बोलियाँ बुलवाई जाएँ वे सभी 'देवद्रव्य' ही गिनी जाती है । ३२
३५. अलग-अलग बोलियों की विगत ३३
३६. दीक्षा प्रसंग पर की जाती बोलियाँ ३५
३७. सूत्र-ग्रंथ वाचन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ ३७
३८. जिनमंदिर शिलास्थापन प्रसंग की बोलियाँ ३७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३९. लघुशांतिस्नात्र प्रसंग की बोलियाँ ३८
४०. बृहत् शांतिस्नात्र (अष्टोत्तरी) समय की बोलियाँ ३९
४१. प्रभुजी को १८ अभिषेक करते समय बुलवाई जाती बोलियाँ ४१
४२. गुरुमूर्ति/पादुका को ५ अभिषेक करते समय बुलवाई जाती बोलियाँ ४२
४३. सिद्धचक्र आदि पूजन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ ४२

२. संघ संचालन मार्गदर्शन

- **परिशिष्ट-१** 'द्रव्यसप्ततिका'के आधार पर कुछ समझने योग्य तथ्य ४३
- **परिशिष्ट-२** जिनमंदिर विषयक कुछ कार्य जो संघ के अग्रणियों को करना है। ४७
- **परिशिष्ट-३** धर्मसंस्थाओं के संचालकों को महत्वपूर्ण मार्गदर्शन : ४९
- **परिशिष्ट-४** आरती-मंगलदीपक की थाली में रखे गए द्रव्य के विषय में पेढ़ी के दो पत्र ५६
- **परिशिष्ट-५** आपके प्रश्न - शास्त्रीय उत्तर ५८

१. प्रभु की आरती-मंगलदीप में पधराये द्रव्य पर अधिकार किसका ?
२. भगवान के समक्ष अष्टमंगल का आलेखन करना या पूजा करनी ?
३. साधु-साध्वी वैयावच्च खाते की रकम में से विहार स्थान बना सकते हैं या नहीं ?
४. मंदिर में चढ़ी बादामें-श्रीफलादि क्या फिर से चढ़ा सकते हैं ?
५. केसर घिसने एवं प्रक्षाल हेतु पानी-पथ्थर मंदिरजी का उपयोग में लें तो उसमें दोष है ?
६. खास कारण बिना ज्ञानपूजन का द्रव्य देवद्रव्य में डाल सकते हैं ?
७. द्रव्य व्यवस्था के बारे में हमें शंका हो वहाँ पूजा कर सकते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८. प्रभु पूजा का और तिलक करने का केसर एक ही हो यह उचित है ?
९. मंदिरजी में चढ़ाने हेतु लाए फ्रुट्स हों तो घर में इस्तेमाल करने में दोष लगता है ?
१०. संघ की चल-अचल सम्पत्ति बिना आवश्यकता बाजार-कीमत से कम मूल्य में बेचें तो क्या दोष लगता है ?
११. उपाश्रय-पौषधशाला में होस्पिटल एवं प्रसूतिगृह बना सकते हैं ?
१२. उपाश्रय को होस्पिटलादि बनाने हेतु बेचा जा सकता है ?
१३. कुमारपाल की आरती आदि की आय कौनसे खाते में जाती है ?
१४. श्रेयांसकुमार बनने के चढ़ावे की राशि कौनसे खाते में जाती है ?
१५. जीवदया की टीप लिखाने वाले भरपाही देरी से करते हैं तो दोष किसे लगे ?
१६. जीवदया की राशि बैंकों में जमा कर के ब्याज से रकम बढ़ाना सही है ?
१७. जीवदया के फंड से पीड़ित मानव को मदद कर सकते हैं या नहीं ?
१८. जीवदया का चंदा बंद कर के अनुकंपा का चंदा करना जरूरी नहीं है ?
१९. फले-चूंदड़ी की बोली की राशि भूकंप राहतादि में खर्च कर सकते हैं ?
२०. देवद्रव्य की राशि नूतन जिनमंदिर निर्माण में लगा सकते हैं ?
२१. गुरुपूजन की आय (आमदनी) पर किसका अधिकार है ?
२२. साधारण का चंदा कम हो तो पुजारी को वेतन देवद्रव्य में से देना सही है ?
२३. हिसाब-किताब पेश न हो तो संघ के सदस्य क्या करें ?
२४. धर्मद्रव्य की मात्र एफ.डी. ही होती हो तो बोली का पैसा भरना चाहिए या अन्य स्थान पर जमा करें ?
२५. धर्म की आय का उपयोग कहां और कैसे करें ?
२६. स्नात्र में श्रीफल प्रतिदिन नया रखना जरूरी है ?
२७. पूजा के अक्षत, फल, नैवेद्यादिक का बाद में उपयोग कौन करे ?
२८. चढ़ाया गया फल-नैवेद्य का बेचान (विक्रय) कैसे करें ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२९. 'अबोट दीया' का शास्त्र में विधान है ? उसकी क्या जरूरत ?

३०. 'अखंड दीपक' का लाभ क्या है ? यह देवद्रव्य से किया जा सकता है ?

३१. देवद्रव्य से बने उपाश्रय आराधना भवन में कौनसी प्रवृत्तियाँ हो सकती है ?

३२. देवद्रव्य से बने उपाश्रय का उपयोग नकरा दे के करें तो चल सकता है ?

३३. वैयावच्च का द्रव्य व्हील चेयर के लिए किया जा सकता है ?

३४. इन्द्रमाला आदि की बोलियां यतियों की परंपरा में शुरु हुई हैं ! क्या यह बात सही है?

३५. देवद्रव्यादि का विनाश होता हो तो साधु को उसे रोकना चाहिए ?

३६. जिनबिंब ज्यादा हों तो आशातना टालने के लिए क्या कर सकते हैं ?

३७. श्रावक संबंधी प्रभु आज्ञाएं कहां से जानें ?

३८. घर-जिनालय में प्रभु की प्रतिमा के साथ में हनुमानजी आदि हों तो दर्शन करें?

३९. घर-जिनालय और संघ-जिनालय में पंखे या ए.सी. मशीन रखे जा सकते हैं ?

४०. चांदी की चौबीसी के भगवान अलग हो गए हैं ! क्या करें ?

४१. भगवान के अंग पर ब्रास पूजा हो सकती है या नहीं ?

४२. तीर्थों में देवलियों के श्रीफल के तोरण शास्त्रीय हैं ? उसका क्या महत्त्व है?

४३. धार्मिक बातों में विवाद करना व उसे कोर्ट तक ले जाना क्या योग्य है ?

४४. बर्ख मांसाहारी चीज़ है, यह बात क्या सत्य है ?

४५. बर्ख परमात्मा की अंगरचना में प्रयुक्त करना क्या आवश्यक है ?

४६. पूजा के कपड़ों में सामायिक हो सकती है ?

४७. फिलहाल पद्मावती पूजन पढ़ाया जाता है सो योग्य है ?

४८. मंदिरों की ध्वजा का रंग किस तरह का रखना चाहिए ?

४९. साधु-संस्था में इलेक्ट्रिक आदि आधुनिक साधन का उपयोग हो तो क्या करें ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५०. भगवान के अंग से उतरा हुआ वासक्षेप श्रावक ले सकते हैं ?
५१. स्त्री-पुरुषों का एक साथ सामायिक रखना क्या उचित है ?
५२. ध्वजा की परछाई घर पर गिरे तो दोषरूप है या नहीं ?
५३. निर्माल्य पुष्पों का विसर्जन कैसे किया जाए ?
५४. पूज्य साध्वीजी महाराज पुरुषों के समक्ष प्रवचन कर सकते हैं ?
५५. साधर्मिक-वात्सल्य में बूफे-भोज कर सकते हैं ?
५६. वीशस्थानक की पूजा करने के बाद अरिहंत की पूजा हो सकती है या नहीं ?
५७. धर्म क्षेत्र की रकम धर्म क्षेत्र छोड़ अन्य क्षेत्र में लगा सकते हैं ?
५८. भगवान की भिक्षा-झोली बनाकर रुपये-पैसे लेना उचित है ?
५९. धार्मिक या अन्य फटी हुई किताबें कहाँ परठावें ?
६०. मूर्ति के चक्षु, श्रीवत्स, कपाली कैसे लगाए जाएं ?

- **परिशिष्ट-६** देवद्रव्यादि सात क्षेत्रों की व्यवस्था का अधिकारी कौन ? ९४
  एक कोथली से व्यवस्था दोषित है । धर्मद्रव्य के भक्षण, उपेक्षा, विनाश के दारुण परिणाम-शास्त्राधार से । १०२
- **परिशिष्ट-७** शास्त्रानुसारी महत्त्वपूर्ण निर्णय : स्वप्नों की बोली का मूल्य बढ़ाकर यह वृद्धि साधारण खाते में नहीं ले जा सकते हैं । १०३
- **परिशिष्ट-८** स्वप्न की आय देवद्रव्य में ही जाती है । १११
- **परिशिष्ट-९** देवद्रव्य की रक्षा तथा सदुपयोग कैसे करना चाहिए ? १३२
- **परिशिष्ट-१०** प्रभुपूजा स्वद्रव्य से ही क्यों ? १३८
- **परिशिष्ट-११** वर्तमान की समस्या का शास्त्रसम्मत समाधान १४५
  - क्या देवद्रव्य की राशि साधर्मिक भक्ति, स्कूल आदि में इस्तेमाल हो सके ? १४५
  - साधारण द्रव्य की आमदनी के उपाय कौन-कौन से ? १४७
  - धर्मद्रव्य अन्य संघों को देना चाहिए या नहीं ? १४९
  - क्या ट्रस्ट बनाना जरूरी है ? १५०
- **परिशिष्ट-१२** जिनमंदिर के शिखर पर कटहरा लगाना क्या जरूरी है ? १५३
- **वि.सं. १९९० ता. ५-४-१९३४ गुरुवार मुनि सम्मेलन का पट्टक**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

जिनाज्ञा का महत्त्व और सात क्षेत्र महिमा

कलिकाल सर्वज्ञप्रभु **पू. आचार्यश्री हेमचन्द्रसूरिजी महाराज** ने योगशास्त्र में लिखा है कि, **'सूर्य-चंद्र यथासमय उदित होते हैं और अस्त होते हैं, पृथ्वी स्थिर रहती है और जगत को धारण करती है, सागर मर्यादा चूकता नहीं है और ऋतुएँ यथासमय परिवर्तित होती हैं, यह सारा प्रभाव धर्म का है । यह धर्म प्रभु की आज्ञा में रहा हुआ है और प्रभु की यह आज्ञा द्वादशांगी में समायी हुई है ।**

द्वादशांगी-शास्त्र में बताई गई आज्ञा विश्व के सभी जीवों को सुख देती है । जो भी जीव आज्ञा का पालन करता है, वह नितांत सुख का भागी होता है, जो प्रभु की आज्ञा की विराधना करता है, वह दुःख ही पाता है ।

भगवंत की आज्ञा को समझना, श्रद्धा करनी और शक्त्यानुसार उसका पालन करना, हम सबका कर्त्तव्य है । **आज्ञा को समझने के लिए सात क्षेत्र का स्वरूप समझना अनिवार्य है ।** जिनप्रतिमा, जिनमंदिर, जिनागम और भगवंत के बताए हुए मार्ग पर चलने वाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका - इन सात क्षेत्रों के आलंबन, प्रभाव और भक्ति से जीवों के राग-द्वेष शांत होते हैं । राग-द्वेष शांत होने से दुःख, पाप, कलह, अशांति और भवभ्रमण से सदा के लिए मुक्ति मिलती है ।

इन सात क्षेत्रों के जिनाज्ञानुसार विनय-विवेकपूर्वक नियमानुसार संचालन और उपयोग से जैनशासन २१००० वर्ष तक चलने वाला है । और उस जैनशासन से आगामी काल में सभी जीवों का कल्याण होने वाला है । जैनशासन के सात क्षेत्रों का सुचारु संचालन करनेवालों संचालकों - ट्रस्टीगणों आदि आगेवान पुण्यात्माओं को तीर्थंकर गौत्र का बंध होता है और जिनाज्ञा से विपरीत संचालन यावत् दुःख, दारिद्र और दुर्गति तक का फल देता है ।

श्री द्रव्य सप्ततिका ग्रंथ के माध्यम से सातक्षेत्र का महत्त्व, भक्ति और आराधना - विराधना का फल-विपाक समझाकर महत् उपकार करने वाले मार्गदर्शक प्रवचनप्रभावक **पू.आ.श्री. विजय कीर्तियशसूरीश्वरजी महाराजा** तथा उनके शिष्यगणों के हम सदा ऋणी रहेंगें ।

चलें ! हम इस पुस्तक से सात क्षेत्रों की समझ पाकर समुचित द्रव्य संचालन और द्रव्य का सुयोग्य उपयोग करने में सजग बनें । फलरूप सुख-सद्गति और मोक्ष के अधिकारी बनें ।

- श्री जैन धर्मध्वज परिवार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आणाए धम्मो - आज्ञा में धर्म

२१००० वर्ष तक इस शासन में होने वाले साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका के कंधों पर भगवंत ने इस शासन की धुरा प्रस्थापित कर कहा कि, जगत के हित के लिए यह शासन मैंने स्थापित किया है, उसी आशय से तुम इसे चलाना ।

आयुष्य कर्म पूर्ण होने पर परमात्मा मोक्ष में चले जाते हैं; उसके पश्चात् यह शासन श्रमणपुंगवों से ही चलता है और जब तक श्रमणसंघ विद्यमान हो तब तक ही चलता है । इसलिए ही कहा है कि,

'समणप्पहाणो संघो' 'यह संघ श्रमणप्रधान है' ।

चारों प्रकार के संघ में श्रमण संघ मुख्य है, प्रधान है ।

श्रमणों में आचार्य मुख्य है । इसीलिए कहा है कि,

'सायरियो संघो' 'आचार्य सहित हो, वह संघ है ।'

आचार्य या श्रमण के ऊपर भी जिनाज्ञा और जिनाज्ञा को दर्शानेवाले शास्त्र होते हैं । शास्त्र के आधार पर ही आचार्यादि श्रमण भगवंत स्वयं प्रवर्तित होते हैं और आश्रित श्रावक-श्राविका गण को प्रवर्तित करते हैं । इसलिए ही कहा है कि,

'आगमचक्खू साहू'

'साधु आगमरूपी आंखवाले होते हैं' ।

'धम्मो आणाए पडिबद्धो'

धर्म आज्ञा के साथ बंधा हुआ है ।'

यह मर्यादा हम सबको अच्छी तरह ख्याल में रहनी चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्यन्त आवश्यकता -

जैन शासन सात क्षेत्रों में विभाजित है । उसमें सर्व प्रथम १-जिनप्रतिमा और २- जिनमंदिर आते हैं । इसके पश्चात् ३- जिनागम आते हैं और इसके बाद इन तीनों को माननेवाले ४- साधु, ५- साध्वी, ६- श्रावक, ७-श्राविका आते हैं ।

ये सातों सात क्षेत्र अपने मूलभूत रूप में स्थित रहें, यह देखने की जिम्मेदारी आपकी -हमारी-हम सब की है । ये सभी क्षेत्र सजीव रहें, जगत का उद्धार करते रहें, किसी भी प्रकार से पीड़ित न हों, उपेक्षित न हों, इसके लिए सब कुछ ही करने की आपकी, हमारी जिम्मेदारी है । अपनी भूमिकानुसार हम सबको यह जिम्मेदारी वहन करनी है । **जिम्मेदारी का अच्छी तरह निर्वहन करने के लिए हमको बहुश्रुत श्रावक बनने की महति आवश्यकता है ।**

बहुश्रुत बनने के लिए गुरुमुख से शास्त्रज्ञान पाना जरूरी है । यहाँ व्यवस्था कर्ता-संचालक पुण्यात्माओं को **'श्राद्धविधि'** ग्रंथ का अभ्यास सर्व प्रथम कर लेना आवश्यक है । उसमें श्रावक जीवन के मूलभूत आचारों का विस्तार से वर्णन है । यह ग्रंथ गुजराती और हिन्दी भाषा में प्रकाशित हो चुका है ।

दूसरे नंबर पर संचालकों को **'द्रव्यसप्ततिका'** ग्रंथ का अभ्यास करना आवश्यक है । भगवंत की आज्ञानुसार सात क्षेत्रों एवं अनुकंपा - जीवदया क्षेत्रों का व्यवस्थापन संचालन किस प्रकार करना व किस प्रकार नहीं करना इत्यादि महत्त्वपूर्ण जानकारियां उसमें दी गई है । आज से ३०० वर्ष पूर्व वह ग्रंथ पूर्वाचार्यों के अनेक ग्रंथों का आधार लेकर पू. उपाध्याय श्री लावण्यविजयजी महाराज ने बनाया है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री सात क्षेत्र परिचय

१-जिनप्रतिमा क्षेत्रः - २-जिनमंदिर क्षेत्रः

"जिन पडिमा जिन सारिखी" यह पंक्ति स्वयं कह रही है कि - साक्षात् तीर्थंकर की गैरहाजरी में जिनप्रतिमा जिनेश्वर तुल्य है ।

शासन के सात क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण पहला क्षेत्र **जिनप्रतिमा** क्षेत्र है । साक्षात् तीर्थंकर को पाकर आत्मकल्याण करने वाली आत्माओं से भी जिनप्रतिमा का आलंबन लेकर आत्मकल्याण करने वाली आत्माएं कई गुना ज्यादा हैं । साक्षात् सदेही तीर्थंकर तो एक समय में एक स्थान पर ही उपकार कर सकते हैं, पर अन्य सभी क्षेत्रो में भव्यात्माओं पर तीर्थंकर की प्रतिमा ही उपकार करती है । साक्षात् तीर्थंकर मध्यलोक में, उसमें भी अढ़ाईद्वीप में सुनिश्चित क्षेत्र में ही होते हैं । लेकिन प्रभु-प्रतिमा तीनों लोक में सदा होती है । साक्षात् तीर्थंकर शाश्वत नहीं होते, पर देखें तो जिन-प्रतिमा शाश्वत भी होती है ।

सदेह जिनेश्वर की भक्ति जैसे यावत् तीर्थंकर पद का फल देती है, वैसे ही जिन-प्रतिमा की भक्ति भी आत्मा को तीर्थंकर पद तक पहुंचाती है ।

एसे अनेक दृष्टिकोण से जिन-प्रतिमा का महत्त्व प्रस्थापित होता है । महत्त्वपूर्ण इस क्षेत्र की भक्ति के अनेक प्रकार हैं ।

प्राचीन महिमावंती प्रतिमा की उच्चतर द्रव्यों से भक्ति, आपत्ति काल में सर्वांगीण सुरक्षा और प्रभु-प्रतिमा की अष्ट प्रकारी पूजा नियमित होनी चाहिए । जहाँ भक्ति के आलंबनभूत प्रभु की प्रतिमा न हो, वहाँ प्राचीन या अभिनव प्रतिमा की स्थापना करनी चाहिए ।

जिनप्रतिमा की सुरक्षा के लिए, जिनप्रतिमा की भक्ति के स्थानरूप जिनमंदिर बनाना, प्राचीन जिनप्रतिमा जीर्ण हुई हो, तो उत्तमद्रव्यों से लेपादि करना; वह भी जिनमूर्ति क्षेत्र की भक्ति है ।

जिनमंदिर, दूसरे नंबर पर महान क्षेत्र है । जिनमंदिर आत्म स्वरूप और स्वाभाविक अनंत सुख पाने का राजप्रासाद है । दुःख से व्याकुल मन को प्रसन्नता से भरने के लिए और सांसारिक आधि-व्याधि-उपाधि से बचने के लिए सर्वोत्तम स्थान है ।

तीर्थ स्वरूप प्राचीन जिनमंदिर को सुचारु संभालना, उसका जिर्णोद्धार करना, तीर्थमंदिर की महिमा बढ़ाना, जिनमंदिर की स्वद्रव्य से महापूजा रचाना और जिस क्षेत्र में आवश्यकता हो वहाँ नूतन जिनमंदिर का निर्माण करना; ये सब भक्ति के मार्ग हैं ।

जिनमूर्ति - मंदिर की भक्ति से सम्यग्दर्शन पाना और सम्यग्दर्शन से जल्द से जल्द मुक्ति को पाना, यह तुम्हारा - हमारा मुख्य और अंतिम ध्येय होना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवद्रव्य के विनाश में जगत का विनाश, देवद्रव्य के संरक्षण में जगत का रक्षण

जगत के सभी जिनालयों का जिर्णोद्धार और अस्तित्व, देवद्रव्य की आय पर निर्भर करता है और इन सभी जिनालयों के अस्तित्व पर हमारे आत्मकल्याण और सद्गति की सुरक्षा निर्भर करती है ।

देवद्रव्य का जाने-अनजाने में स्वार्थ के लिए किया हुआ थोडा भी भक्षण या उसका अनुचित उपयोग या बकाया राशि की वसूली में उपेक्षा अनंत उपकारी श्री जिनेश्वर भगवंत के और जगत के सर्व जीवों के प्रति द्रोह और विश्वासघात समान है । इसीलिए देवद्रव्य के अनुचित उपयोग / विनाश के साथ जगत के सभी जिन मंदिरों का और सर्व जीवों का विनाश (आत्मिक) हो जाता है और साथ में संचालकों (ट्रस्टियों) की दुर्गति भी सुनिश्चित हो जाती है ।

देवद्रव्य के भक्षण / विनाश के भयंकर परिणाम :

थोडा भी देवद्रव्य का भक्षण या अनुचित उपयोग, अनंत भवों तक दुःख, दारिद्र और दुर्गति सुनिश्चित करता है ।

१. साकेंतपुर नगर के सागर श्रेष्ठी १,०००/- कांकणी (रुपये) का देवद्रव्य का कर्ज बाकी रखकर मरे तो उसके कारण उन्हें हजारों भव नरक और तिर्यंच के करने पडे ।

२. इंद्रपुर नगर के जैन मंदिर के जलते हुए दीपक से अपने घर का काम करने वाली और मंदिर के धूप से घर का चूल्हा जलाने वाली देवसेन की माता को ऊंट (CAMEL) का भव लेना पडा ।

३. महेन्द्र नाम के नगर में देवद्रव्य की बकाया राशि वसूल करने में प्रमाद के कारण बहुत देवद्रव्य का विनाश होने से उसके मुख्य संचालक को असंख्य भवों की दुर्गति हुई ।

४. थोडे वर्ष पहले पश्चिम भारत के एक गाँव में देवद्रव्य की राशि का उपयोग शादी के गार्डन में करने से उसके संचालकों और संघ के गणमान्य लोगों को भयंकर परिणाम भुगतने पडे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री सात क्षेत्र परिचय

3-जिन-आगम क्षेत्र :

अपेक्षा से सोचें तो **जिन-आगम** यह सात क्षेत्रों में केन्द्रस्थान पर है । जिनबिंब और जिनमंदिर क्षेत्र की पहचान कराने वाला और उसकी भक्ति के प्रकार और प्रभाव को बताने वाला जिन-आगम है और साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका क्षेत्र की पहचान कराकर उनकी भक्ति के प्रकार-प्रभाव को दर्शाने वाला भी जिनागम ही है ।

जिनागम के आधार से ही मूर्ति-मंदिर का निर्माण होता है और जिनागम को आधार बनाकर ही साधु, साध्वी, श्रावक या श्राविका जी सकते हैं । ऐसे अनेक दृष्टिकोण से सोचेंगे तो आपको भी समझ में आएगा कि श्रुत के आधार बिना जिनशासन का कोई अंग संभव नहीं हो सकता, प्राणवान नहीं बन सकता । श्रुत की, श्रुतज्ञानी की व श्रुत के संसाधनों की उपेक्षा या अनादर यह समग्र शासन की उपेक्षा और अनादर है ।

जिनागम शासन का अमूल्य धन है । आज समस्त भारत में हर संघ में शायद यह जिनागम क्षेत्र सबसे ज्यादा उपेक्षित है । जिनागम का महत्त्व समझकर हमें आज से ही जिनागम क्षेत्र की संकल्पबद्ध होकर भक्ति-सुरक्षा करनी चाहिए ।

हमारे श्री संघ में ज्ञानभंडार नहीं है तो बनाना अनिवार्य है । बिना जिनमंदिर कभी नहीं चलता, वैसे ही बिना ज्ञानभंडार भी चलता नहीं है । ज्ञानभंडार है, या नया बनाकर उसकी सार-संभाल नियमित रूप से करनी है । द्वादशांगी को अनुसरनेवाले अप्राप्य ग्रंथो का पुनर्मुद्रण और हस्तलिखित ग्रंथों को मुद्रित कराना चाहिए।

समृद्ध ज्ञानभंडार बनाकर श्री संघ को जानकारी और सब को पढ़ने की प्रेरणा करें ।

पाठशाला में भी छोटे-बड़े सभी सदस्यों को पढ़ने के लिए धार्मिक शिक्षक की व्यवस्था करें । ज्ञानपंचमी के दिन पुनः ज्ञानभंडार की सार-संभाल विशेषरूप से अपने हाथो से करें ।

संघ के जो सदस्य धार्मिक अभ्यास में आगे बढ़ें उनको प्रोत्साहन के रूप में बहुमान करके पारितोषिक दें ।

गुरु भगवंत के सानिध्य में समूह सामायिक करवा कर ज्ञानसत्रों का भी सुयोग्य आयोजन करें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री सात क्षेत्र परिचय

४-साधु क्षेत्र : ५ साध्वी क्षेत्र :

शासन की आराधना, प्रभावना, रक्षा और भव्य जीवों के हृदय में शासन की स्थापना; यह सब जिम्मेदारी प्रभु महावीर ने स्वयं अपने हाथों से श्रमण-श्रमणी भगवंतों के वृषभस्कंधों पर रखी है । **अतः श्रमण-श्रमणी भगवंतो की भक्ति करने से सर्वाङ्गीण शासन की भक्ति का भी लाभ मिलता है ।**

अपना समस्त जीवन शासन के चरणों में समर्पित करने वाले श्रमण-श्रमणी भगवंतों को निर्दोष गोचरी-पानी-वस्त्र-पात्र-औषध-वस्ती (उपाश्रय-मकान) आदि का दान करने से हमारा तन-मन-धन और जीवन सफल होता है ।

अपने परिवार के हर सदस्य को श्रमण जीवन की राह दिखाना, उस राह पर चलने के लिए तैयार आत्मा को सहर्ष अनुमति देना और महोत्सव सहित उसे चारित्र राह तक पहुंचाना श्रमण-श्रमणी क्षेत्र की सबसे बडी भक्ति है । यह बात कभी न भूलें ।

श्रमण भगवंतों की संयम मर्यादा का भी हमें पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है । गीतार्थ सद्गुरु के चरणों में बैठकर वह ज्ञान पाना चाहिए । तत्पश्चात् साध्वाचार के पालन में उनके सहायक बनना हमारा फर्ज है ।

श्रमण भगवंतों की भक्ति उनके लिए नहीं, अपितु हमारे आत्मकल्याण के हेतु से ही करनी है । भक्ति करके हम उन पर उपकार नहीं करते । वे ही हमारी भक्ति को स्वीकार कर हम पर उपकार करते हैं ।

हमारे संघ में श्रमण-श्रमणी भगवंतों को चातुर्मास, नवपद ओली, पर्युषणा,पोषदसम, वर्षीतप पारना, प्रतिष्ठा सालगिरह आदि निमित्त पाकर आमंत्रित करना चाहिए । उनकी निश्रा पाकर पर्व की आराधनाएं करनी चाहिए । हररोज बहुमानपूर्वक उन्हें वंदन और कार्यपृच्छा करनी चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उनके श्रीमुख से जिनवाणी का श्रवण करना, तदनुसार जीवन में पालन करना और उनके उपदेश का ज्यादा से ज्यादा प्रसार-प्रचार करना हमारा कर्त्तव्य है ।

श्रमणजीवन में कहीं भी छोटी-बडी गलतियां हो जाने पर, शास्त्रीय राह से उसे सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए । उस बात को पत्र-पत्रिका के माध्यम से आम जनता के सामने रखने से शासन अपभ्राजना का पाप लगता है । यह सबसे बड़ा पाप है ।

साधु धर्म की रक्षा करनी एवम् साधुओं की जिनाज्ञापूर्ण आचरणा में सहायक बनना हम सकल संघों का दायित्व है । अतः निम्नलिखित प्रवृत्ति के बारे में उपयोग रखें ।

१. किसी भी साधु को बिजली युक्त सुविधाएं - पंखे, कुलर, माईक, एअरकंडिशन फोन, मोबाईल, लेपटॉप, कंम्पुटर इत्यादि की सुविधा पौषधशालाओं में या अन्यत्र कही भी न दें एवम् न दिलवाने का उपयोग रखें ।

२. सामान्य संजोगों में सामने से गोचरी की व्यवस्था न करें ।

३. चातुर्मास उपधान, महोत्सव इत्यादि प्रयोजन व अशक्त / बिमारी के अलावा स्थिरवास पर रोक लगाएँ एवम् स्थायी कमरे की व्यवस्था विशेषतः तीर्थ स्थान पर न करें ।

४. पौषधशाला में लघुनीति/गुरुनीति के लिए बाथरूम / संडास के बदले मातरा (पेशाब) की कुंडी / वाड़ा की व्यवस्था करें ।

५. साधु को किसी भी संस्था के संचालन, नियंत्रण या हिसाब-किताब का कोई पद न दें; स्वयं पद लेना चाहे तो विवेकपूर्ण विरोध करें ।

६. साधु द्वारा प्रायोजित अथवा प्रेरित किसी भी प्रकार के डोरों, धागों, चमत्कार और होम-हवन आदि मिथ्यात्ववर्धक विधि में न पड़ें और न हिस्सा लें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री सात क्षेत्र परिचय

६-श्रावक क्षेत्र: ७-श्राविका क्षेत्र :

साधर्मिक संबंध से जुड़े श्रावक और श्राविका चतुर्विध श्री संघ के दो अंग हैं । जिनाज्ञाबद्ध चतुर्विध श्री संघ तीर्थंकर तुल्य है । तीर्थंकर तुल्य श्रीसंघ की भक्ति बहुमान पूर्वक करनी चाहिए ।

श्रावक-श्राविका क्षेत्र की भक्ति साधर्मिक भक्ति कहलाती है ।

जिनेश्वर और जिनाज्ञा को सच्चे भाव से स्वीकारने वाला हमारा साधर्मिक कहलाता है ।

एक साथ सात क्षेत्रों की भक्ति और सभी धर्मानुष्ठान हम नहीं कर सकते, इसी कारण सभी क्षेत्रों की भक्ति का और प्रत्येक धर्मानुष्ठान की आराधना का यद्त्किंचित् लाभ हमें मिले, इस लिए प्रभु ने साधर्मिक भक्ति का मार्ग बताया है ।

साधर्मिक भक्ति करते समय अमीरी और गरीबी ना देखकर, साधर्मिक के गुणों को देखना चाहिए । केवल आर्थिक परिस्थिति से साधर्मिक का मूल्यांकन नहीं करना चाहिए । सभी को एक नजर से देखकर भक्ति करना हमारा कर्त्तव्य है । साधर्मिक के गुणों की अनुमोदना करते हुए, उनके गुण हमें भी प्राप्त हों, इस उद्देश्य से साधर्मिक भक्ति करनी चाहिए ।

'हमारी धर्मभावना और धर्माराधना बढ़ती रहे' इस भाव से भक्ति करनी चाहिए । हमारी शक्ति-संयोग के अनुसार और साधर्मिक की परिस्थिति-जरूरत के अनुसार भक्ति करनी जरूरी है ।

आर्थिक परिस्थिति से नाजुक साधर्मिक की व्यावहारिक जिम्मेदारी अपने सिर लेकर उसकी हर कठियनाई दूर करनी चाहिए । अपने हर प्रसंग में उन्हें विनंतिपूर्वक आमंत्रित कर बहुमान पूर्वक मदद करनी चाहिए । साधर्मिक की छोटी भी आराधना का निमित्त पाकर उसकी भक्ति का लाभ लेना चाहिए ।

साधर्मिक को ज्यादा से ज्यादा धर्म से नजदीक लाने का प्रयत्न करें ।

कल्याण मित्रों और गुरु भगवंत के साथ संपर्क में लाएं ।

साधर्मिक वात्सल्य में बूफे सीस्टम साधर्मिक की आशातना है । यावत् तीर्थंकर की भी आशातना है । तीर्थंकर आशातना से यावत् अनंत भव तक जैन धर्म, मनुष्य भव प्राप्त न भी हो । धार्मिक महोत्सव में अभक्ष्य भक्षण, रात्रि भोजन और बूफे का त्याग ही होना चाहिए ।

हमारा साधर्मिक, भक्ति करने योग्य है, अतः उसे लाचार व दयनीय न बनाएं । अनुकंपा, दान और साधर्मिक भक्ति में बहुत फर्क है; यह हम हमेशा ध्यान में रखें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सात क्षेत्रों भक्ति पात्र
जीवदया - अनुकंपा दया पात्र

जिनशासन के सातक्षेत्र - जिनप्रतिमा, जिनमंदिर, जिनआगम, साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका का स्थान मस्तक के समान सब से ऊपर है और ये क्षेत्र माता के समान उपकारी और भक्ति करने योग्य हैं । जिन शासन के सातक्षेत्रों के आलंबन, भक्ति और प्रभाव से सुख, शान्ति, समृद्धि और सद्‌गति का निर्माण होता है और हमारी आत्मकल्याण और मोक्ष प्राप्ति भी सुलभ होती है ।

दुःखी जीवों के प्रति दया और दीन-अनाथ मानव के प्रति अनुकंपा दान करने से दुःखी जीवों का सिर्फ शारीरिक दुःख थोड़ें समय के लिए दूर कर सकते हैं, पर सातक्षेत्रों की भक्ति से दुःखी जीवों का भवोभव का शारीरिक और आत्मिक दुःख चिरकाल के लिए दूर होता है; इसीलिए सातक्षेत्रों का महत्त्व मस्तक समान है और जीवदया-अनुकंपा का महत्त्व पैरों के समान ।

शराब के बिना तड़पते हुए शराबी को दया-भाव से शराब पिलाने से थोड़े समय के लिए उसका दुःख दूर कर सकते हैं, लेकिन यदि शराबी को शराब से हमेशा के लिए मुक्ति दिला सकें तो यह उस पर सच्चा परोपकार कहलाएगा । इसी तरह सच्चा परोपकार और संसार के हर प्रकार के दुःख से मुक्ति दिलाने का काम जैन शासन के सातक्षेत्र करते हैं । इसलिए सातक्षेत्र, जीवदया और अनुकंपा से कई गुना ऊपरी क्षेत्र है और परम आवश्यक है । इसीलिए सातक्षेत्रों के द्रव्यों का उपयोग हॉस्पीटल, समाज सेवा या जीवदया में नहीं कर सकते हैं । यह हमें हमेशा ध्यान रखना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१. द्रव्य संचालन मार्गदर्शन

श्री श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपागच्छ जैन संघ द्वारा संचालित सात क्षेत्रों आदि धर्मद्रव्य की आय और व्यय :

एक शास्त्रीय मार्गदर्शन

सातक्षेत्रों के नाम

१ - जिनप्रतिमा, २ - जिनमंदिर, ३ - जिनागम, ४ - साधु,
५ - साध्वी, ६ - श्रावक एवं ७ - श्राविका

१ - जिनप्रतिमा क्षेत्र

जिनप्रतिमा को उद्देश्य कर प्रतिमाजी के निर्माण आदि हेतु किसी भी व्यक्ति ने भक्ति से जो द्रव्य अर्पण किया हो वह 'जिनप्रतिमा क्षेत्र का द्रव्य' कहलाता है ।

उपयोग :

- इस द्रव्य से नूतन प्रतिमाजी का निर्माण कर सकते हैं ।
- प्रभुजी की आंगी (आभूषण), चक्षु, टीका (तिलक) हेतु इस्तेमाल कर सकते हैं ।
- प्रभुजी को लेप, ओप कराने में काम ले सकते हैं ।
- आपत्ति के समय प्रभुजी की रक्षा संबंधी सभी खर्चों में इस्तेमाल कर सकते हैं ।

नोंध : श्रावकों को चाहिए कि प्रभु प्रतिमा का निर्माण स्वद्रव्य से ही करें, परंतु यदि प्रभु प्रतिमा देवद्रव्य में से निर्मित की हो तो प्रतिमा पर लिखे जाते लेख में 'यह प्रतिमा अमुक संघ की देवद्रव्य की आय में से निर्मित की है ।' ऐसा उल्लेख जरूर करें ।

२ - जिनमंदिर क्षेत्र

जिनमंदिर को उद्देश्य कर प्राप्त हुआ द्रव्य 'देवद्रव्य' कहलाता है । उसी तरह प्रभु के पाँच कल्याणक : १ - च्यवन कल्याणक (स्वप्न उतारने की बोलियाँ), २ - जन्म कल्याणक (पारणा एवं स्नात्र महोत्सव की बोलियां), ३ - दीक्षा, ४ - केवलज्ञान एवं ५ - मोक्ष कल्याणक निमित्त प्रभु को उद्देश्य कर जिनमंदिर में या अन्यत्र किसी भी स्थान में जो बोलियाँ बुलाई जाती हैं, उसकी पूरी आय 'देवद्रव्य' ही गिनी जाती है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभुजी की अष्टप्रकारी पूजा की बोलियाँ, आरती, मंगल दीया, प्रभुजी के सामने रखे भंडार (गोलख) की आय, स्वप्न, पारणा, अंजनशलाका-प्रतिष्ठा महोत्सव प्रसंग पर प्रभु-निमित्तक सभी बोलियाँ, उपधान की नाण का नकरा, उपधान की माला पहनने की बोलियाँ या नकरा, तीर्थमाला, इन्द्रमाला आदि सभी बोलियाँ, उसी तरह प्रभुजी के वरघोड़े (शोभायात्रा) संबंधी विभिन्न वाहन आदि एवं प्रभुजी के रथ, हाथी, घोडे आदि में बैठने आदि की तमाम बोलियाँ श्री तीर्थंकर परमात्मा को उद्देश्य कर बोली जाती हैं, अतः वह सब देवद्रव्य कहलाता है ।

देवद्रव्य का उपयोग :

- ❖ जिनमंदिर के जीर्णोद्धार में एवं नूतन जिनमंदिर निर्माण में कर सकते हैं ।
- ❖ आक्रमण के समय तीर्थ, मंदिर एवं प्रतिमाजी की रक्षा हेतु इस द्रव्य को काम ले सकते हैं ।

(**नोंध :** तीर्थरक्षा आदि के समय जैन व्यक्ति को यह द्रव्य दे नहीं सकते ।)

जिनेश्वर भगवान की भक्ति-पूजा तो श्रावक अपने द्रव्य से ही करें, परंतु जहाँ श्रावकों के घर न हों, तीर्थभूमि आदि में जहाँ श्रावकों के घर सामर्थ्यवान न हों, वहाँ प्रतिमाजी अपूजित (पूजा किए बिना के) रह न जाए, अतः अपवादरूप से देवद्रव्य से भी प्रभुपूजा करानी चाहिए । प्रतिमाजी अपूजित तो न ही रहने चाहिए ।

जहाँ श्रावक व्यय करने हेतु सामर्थ्यवान न हों, वहाँ प्रभुजी अपूजित न रहे उतनी मात्रा में - पुजारी का वेतन, केशर, चंदन, अगरबत्ती आदि का खर्चा देवद्रव्य में से कर सकते हैं । पर श्रावक के कार्य में यह द्रव्य इस्तेमाल न हो जाए इसका पूरा ख्याल रखें ।

यदि पुजारी श्रावक हो तो उसे साधारण खाते में से वेतन देवें । जैन को देवद्रव्य का पैसा न दें, अन्यथा लेने एवं देनेवाले दोनों पाप के भागी बनेंगे हैं ।

इतना तो पक्का याद रखें कि, जिनपूजा का स्वकर्त्तव्य रूप कार्य श्रावक को अपने निजी द्रव्य से ही करना है ।

नोंध : जिनमंदिर - जीर्णोद्धार-निर्माण आदि कार्य में मार्बल-पत्थर आदि किसी भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चीज को खरीद हेतु अथवा किसी काम की मजदूरी हेतु देवद्रव्य में से जैन व्यक्ति को पैसा नहीं दिया जा सकता ।

- इस खाते का द्रव्य पहले क्षेत्र - जिनप्रतिमा के कार्य में लगा सकते हैं ।
- जिनप्रतिमा एवं जिनमंदिर : इन दोनों क्षेत्रों का द्रव्य देवद्रव्य होने से नीचे के किसी भी क्षेत्र में इसका उपयोग हो ही नहीं सकता ।

गृह जिनमंदिर :

गृह जिनमंदिर के भंडार की आय तथा वहाँ प्राप्त अक्षत (चावल), फल, नैवेद्य (मिठाई आदि) को बेचकर आई हुई रकम देवद्रव्य में जाती है । परंतु इस देवद्रव्य की रकम अपने गृहमंदिर के किसी भी कार्य में इस्तेमाल नहीं की जा सकती । जो देवद्रव्य की रकम इकट्ठा होती है, उसे श्रीसंघ के मंदिर में देवद्रव्य खाते में जमा करवाएँ अथवा अन्यत्र कहीं जिनमंदिर का जीर्णोद्धार होता हो, वहाँ भिजवा दें ।

ऐसा करते समय 'यह रकम श्री .....के श्री .... प्रभु के गृह जिनमंदिर की देवद्रव्य की आय में से अर्पित की गई है ।' ऐसा सूचन जरूर करें ।

गृहमंदिर में कोई भी जीर्णोद्धार-दुरुस्ती आदि कार्य करना हो या गृहमंदिर के प्रभुजी के आभूषण-आंगी आदि बनवाने हों तो गृहमंदिर के देवद्रव्य की आय में से नहीं करा सकते । उन्हें स्वद्रव्य से ही कराने चाहिए ।

निर्माल्य द्रव्य :

- प्रभुजी की आँगी का उतारा, बादला, वरख आदि को बेचकर प्राप्त रकम का उपयोग प्रभु के आभूषण - आँगी आदि में, प्रतिमाजी के चक्षु, टीका (तिलक) बनाने में, लेप-ओप कराने में किया जा सकता है । इसमें से जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण भी किया जा सकता है ।
- प्रभुजी के सन्मुख चढाए अक्षत, नैवेद्य, खडीशक्कर (मिश्री), फल, बादाम आदि द्रव्यों को सुयोग्य कीमत पर अजैनों में बेच कर आई रकम का उपयोग जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में कर सकते हैं ।
- बादाम आदि चीजें एक बार प्रभु को चढाने के पश्चात् उन्हें फिर से खरीद कर प्रभु को चढाना कतई योग्य नहीं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ - जिनागम क्षेत्र - ज्ञानद्रव्य

ज्ञानभंडार की राशि, आगम या शास्त्रों की पूजा से उत्पन्न द्रव्य, वासक्षेप से ज्ञानपूजा की बोलियाँ, ज्ञान को अष्टप्रकारी पूजा की बोलियाँ, प्रतिक्रमण में सूत्रों को बोलने का लाभ लेने की बोलियाँ, संवत्सरी प्रतिक्रमण के दौरान सकल संघ को 'मिच्छा मि दुक्कडं' देने की बोलो, कल्पसूत्र-बारसा सूत्र तथा और भी कोई सूत्र बहोराने आदि की बोलियाँ, शास्त्र पर जो रुपया-पैसा चढ़ाया जाता है, यह सब ज्ञानद्रव्य में गिना जाता है।

मुमुक्षु को दीक्षा के समय पुस्तक (पोथी), सापडा (किताबकुर्सी) एवं नवकारमालिका (माला) अर्पण करने की बोलियाँ, आचार्यादि पद प्रदान प्रसंग पर पूज्यों को मंत्रपट, नवकारमालिका (माला) अर्पण करने की बोलियाँ **ज्ञानद्रव्य** में जाती है ।

- ज्ञानद्रव्य में से छपे ग्रंथों एवं पुस्तकों की बिक्री की आय ज्ञानद्रव्य में ही जमा करनी चाहिए ।
- पैंतालिस आगम या अन्य किसी भी धर्मग्रंथ का ही बरघोडा (शोभायात्रा) हो, एवं उसमें भगवान नहीं हो तो ऐसे बरघोडे की तमाम बोलियाँ भी ज्ञानखाते में जमा करें, परंतु उस बरघोडे का खर्चा उस आय में से नहीं कर सकते । यह खर्चा व्यक्तिगत या साधारण द्रव्य में से ही करना चाहिए ।

ज्ञानद्रव्य का उपयोग :

- ज्ञानपंचमी के दिन ज्ञान के सन्मुख चढ़ाई जाती पोथी, कवर, पेन-पेन्सिल, घोडावज आदि सामग्री का उपयोग ज्ञानभंडार के लिए हो सकता है । पुस्तक एवं ज्ञान संबंधी साधनों का उपयोग पू. साधु-साध्वीजी कर सकते हैं । श्रावक-श्राविकाएँ उसका उपयोग नहीं कर सकते ।
- ज्ञानद्रव्य में से पू. साधु-साध्वीजीओं को पढाने हेतु जैनेतर पंडित को वेतन दे सकते हैं ।
- पू. साधु-साध्वीजीओं को पढ़ने हेतु (अध्ययन के लिए) योग्य किताबें खरीद सकते हैं ।
- सुयोग्य पू. गुरुभगवंत के मार्गदर्शन से ज्ञानभंडार हेतु धार्मिक-साहित्यिक किताबें खरीद सकते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

- धार्मिक प्राचीन आगमशास्त्र लिखाने या छपाने हेतु तथा उनकी सुरक्षा हेतु जरूरी चीजें लाने के लिए व्यय कर सकते हैं ।
- ज्ञानभंडार-ज्ञानमंदिर श्रावकों को स्वद्रव्य से बनाने चाहिए । प्राचीन ज्ञान की सुरक्षा हेतु जरूरत पड़ने पर ज्ञानद्रव्य से भी बना सकते हैं । पर ज्ञानद्रव्य से बने ज्ञानमंदिर में साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविका निवास नहीं कर सकते, उसमें शयन-संथारा भी नहीं कर सकते एवं साधु-साध्वीजी उसमें गौचरी (आहार-पानी) भी नहीं कर सकते ।
- ज्ञानभंडार में पुस्तकों को रखने हेतु जरूरत हो तो कपाट (अलमारी) भी खरीद सकते हैं । उस अलमारी पर 'ज्ञानद्रव्य में से खरीदी हुई अलमारी' ऐसा स्पष्ट लिखना चाहिए ।
- ज्ञानद्रव्य से खरीदे कपाट में सिर्फ ज्ञान संबंधी किताबें एवं सामग्री ही रखी जा सकती है । उसमें साधु-साध्वीजी का सामान (उपधि) एवं श्रावक-श्राविकाओं के योग्य सामायिक पौषध के उपकरण एवं उपाश्रय की सामग्री नहीं रख सकते ।
- ज्ञानभंडार सम्हालते जैनेतर ग्रंथपाल को वेतन-मानदेय दे सकते हैं ।
- ज्ञानद्रव्य में से धार्मिक पाठशाला के विद्यार्थी हेतु पंचप्रतिक्रमणादि धार्मिक किताबें नहीं खरीद सकते । ऐसी पाठशाला के जैन-जैनेतर किसी भी शिक्षकादि का वेतन भी नहीं दे सकते । संक्षेप में कहना हो तो -
- **श्रावकों की पाठशाला संबंधी कोई भी खर्चा ज्ञानद्रव्य में से नहीं कर सकते ।**
- ज्ञानद्रव्य का एवं ज्ञानभंडार-ज्ञानमंदिर का उपयोग स्कूल, कॉलेज, हॉस्टेल आदि व्यावहारिक शिक्षण के किसी भी कार्य में नहीं किया जा सकता ।
- ज्ञानद्रव्य की किताबें श्रावक-श्राविका को भेंट नहीं दी जा सकती, वे उसकी मालिकी भी नहीं कर सकते ।
- ज्ञानभंडार की किताबों का यदि श्रावक-श्राविका उपयोग करें तो उसका सुयोग्य नकरा (इस्तेमाल करने का शुल्क) ज्ञान खाते में जमा करना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

- यह ज्ञानद्रव्य भी देवद्रव्य की तरह ही पवित्र होने से ज्ञानाभ्यास के अलावा साधु-साध्वीजी स्वयं के किसी भी कार्य में इस द्रव्य का उपयोग न करें ।
- उपरोक्त किसी भी कार्य में, किसी भी चीज की खरीदी हेतु, किसी भी कार्य की मजदूरी हेतु, जैन पंडित को, जैन पुस्तकादि विक्रेता को, जैन ग्रंथपाल को या जैन व्यक्ति को ज्ञानद्रव्य में से रकम नहीं दे सकते । जैनों को श्रावकों का व्यक्तिगत द्रव्य या साधारण द्रव्य देना चाहिए ।

धार्मिक शिक्षण खाता-पाठशाला :

यह खाता साधर्मिक श्रावक-श्राविकाओं की ज्ञान-भक्ति हेतु है । श्रावक-श्राविकाओं द्वारा धार्मिक पठन-पाठन हेतु स्वद्रव्य अर्पण किया गया हो, वह इस खाते में आता है ।

उपयोग :

- इस द्रव्य में से पाठशाला के जैन-जैनेतर शिक्षक-पंडितादि को वेतन-मानदेय दे सकते हैं । इस पाठशाला एवं शिक्षक-पंडितों का लाभ पू. साधु-साध्वी भी ले सकते हैं एवं श्रावक-श्राविका भी ।
- पाठशाला में उपयोगी धार्मिक किताबें खरीदने एवं पाठशाला के बालक आदि को इनाम एवं प्रोत्साहन-योजनाओं में भी इस्तेमाल कर सकते हैं ।
- **व्यावहारिक-स्कूली-कॉलेजी शिक्षा हेतु इस द्रव्य का उपयोग कतई नहीं किया जा सकता ।**
- **धार्मिक पाठशाला का मकान या जमीन व्यावहारिक शिक्षण हेतु या सांसारिक कार्य हेतु नहीं दे सकते ।**
- पाठशाला के उद्घाटन की बोली का द्रव्य पाठशाला संबंधी किसी भी कार्य में काम ले सकते हैं ।

४-५ साधु-साध्वी क्षेत्र

- पू. साधु-साध्वीजीओं की भक्ति हेतु (वैयावच्च हेतु) जो द्रव्य दानवीरों से प्राप्त हुआ हो, वह इस खाते में जमा होता है ।
- दीक्षार्थी भाई-बहिनों को दीक्षा हेतु चारित्र के उपकरणों को अर्पण करने की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बोलियों में से –

१ - किताब (पोथी), २ नवकारमालिका (माला) एवं ३ - सापडा (किताबकुर्सी) को अर्पण करने की बोलियाँ ज्ञानखाते में ली जाती है । अन्य सभी उपकरणों को अर्पण करने की बोलियाँ साधु-साध्वी वैयावच्च खाते में जमा की जाती है ।

- पू. साधु-साध्वीजी भगवंतों को वैयावच्च का लाभ श्रावक स्वद्रव्य से ही ले ताकि गुरुभक्ति का लाभ स्वयं को मिले ।

उपयोग :

- यह द्रव्य पू. साधु-साध्वीजीओं की संयम शुश्रूषा एवं विहारादि की अनुकूलता हेतु इस्तेमाल किया जा सकता है ।
- पू. साधु-साध्वीजी हेतु दवाई एवं जैनेतर डॉक्टर-वैद्य आदि की फीस चुकाने हेतु भी काम ले सकते हैं ।
- पू. साधु-साध्वीजी की सेवार्थ विहारादि में रखे जैनेतर व्यक्तियों के वेतन हेतु भी काम ले सकते हैं ।
- जैन डॉक्टर-वैद्यादि एवं जैन व्यक्ति को यह द्रव्य नहीं दे सकते ।
- पू. साधु-साध्वीजी भगवंतों की भक्ति के किसी भी कार्य हेतु किसी ने अपनी खुद की रकम दी हो तो वह रकम वैयावच्च के हर कार्य में, जैन डॉक्टर-वैद्यादि की फीस चुकाने हेतु एवं जैन व्यक्ति के पगार हेतु भी व्यय कर सकते हैं ।

  नोंध : साधु-साध्वी वैयावच्च की आय में से उपाश्रय या विहारधाम नहीं बना सकते एवं उन मकानों की दुरुस्ती-जीर्णोद्धार तथा रखरखाव हेतु रखे आदमीयों को वेतन भी नहीं दे सकते ।

- विहारादि स्थानों में खानपान की व्यवस्था या गौचरी-पानी हेतु वैयावच्च का द्रव्य काम नहीं आ सकता । क्योंकि -
- विहारादि स्थलों में से रसवती आदि का कार्य जैन परिवार करता हो तो उनके रहने-खाने-पीने का अवसर आता है ।
- पू. साधु-साध्वीजी भगवंतों के साथ मुमुक्षु-दीक्षार्थी-श्रावक हो या उन्हें वंदन करने पधारे हुए श्रावक-श्राविकाओं को रहने-खाने-पीने का अवसर आता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

❖ पू. साधु-साध्वीजी भगवंतों के साथ काम करने वाला आदमी जैन हो तो उसे भी रहने-खाने-पीने का अवसर आता है, अतः विहारादि स्थानों में उदारदिल श्रावकों द्वारा भक्ति हेतु जो स्वद्रव्य दिया गया हो, उसी का उपयोग करें ।

६-७ श्रावक-श्राविका क्षेत्र

उदारदिल श्रावकों ने भक्तिभाव से जो द्रव्य दिया हो, उसी तरह साधर्मिक-भक्ति हेतु चंदा किया गया हो, वह द्रव्य श्रावक-श्राविका क्षेत्र में आता है ।

उपयोग :

इस द्रव्य का उपयोग खास जरूरतवाले साधर्मिकों - श्रावक-श्राविकाओं को धर्म में स्थिर करने हेतु एवं आपत्ति के समय सभी प्रकार की योग्य सहायता करने हेतु हो सकता है ।

- श्रीसंघ में प्रभावना या स्वामिवात्सल्य इस द्रव्य से नहीं कर सकते ।

- यह धार्मिक पवित्र द्रव्य है । अतएव धर्मादा (चैरिटी) सामान्य जनता, याचक, दीनदुःखी, राहतफंड या अन्य कोई मानवीय एवं पशु हेतु दया-अनुकंपा आदि कार्यों में यह द्रव्य कतई नहीं लगा सकते ।

८ - गुरुद्रव्य

पंचमहाव्रतधारी संयमी त्यागी महापुरुषों के आगे गहुँली (अक्षत का स्वस्तिक आदि रचाना) की हो या गुरु की सिक्कों आदि द्रव्यों से पूजा की हो तथा गुरुपूजन की बोली का द्रव्य जिनमंदिर के जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में लगाना चाहिए, ऐसा 'द्रव्यसप्ततिका' ग्रंथ में स्पष्टतया बताया गया है ।

गुरु प्रवेश के निमित्त वरघोड़े (शोभायात्रा) में विभिन्न वाहन, हाथी, घोड़े आदि की बोलियाँ, गुरु महाराज को कंबल आदि चारित्रोपकरण बहोराने की बोली, गुरुपूजन के भंडार की आय तथा दीक्षा के समय नूतन दीक्षित को 'करेमि भंते' उच्चराने के बाद की अवस्था की तमाम बोलियाँ (उदा. नूतन दीक्षित का साधु रूप में नूतन नाम जाहोर करने की बोली) 'गुरुद्रव्य' कहलाती है ।

यह द्रव्य भोगार्ह - भोग योग्य नहीं होने से गुरु महाराज (साधु-साध्वीजी) के किसी भी कार्य हेतु उपयोग में नहीं आता, परंतु 'द्रव्यसप्ततिका' के पाठ अनुसार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुरुमहाराज से ऊंचे स्थान रूप जिनमंदिर के जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में ही इस्तेमाल कर सकते हैं ।

यह द्रव्य परमात्मा को अंगपूजा में कतई काम नहीं आता ।

विशेष नोंध :

जो साधुपने के आचार से रहित है, जिसे शास्त्रों में 'द्रव्यलिंगी' कहा गया है, ऐसे वेषधारी साधु द्वारा इकट्ठा किया हुआ धन अत्यंत अशुद्ध होने से उसे अभयदान-जीवदया में ही लगाना चाहिए । जिनमंदिर, जीर्णोद्धारादि में वह न लगाएँ ।

९ - जिनमंदिर-साधारण

श्री जिनेश्वर परमात्मा की भक्ति एवं श्री जिनमंदिर को सुव्यवस्थित चलाने हेतु आया हुआ द्रव्य **जिनमंदिर साधारण द्रव्य** कहलाता है ।

जिनमंदिर साधारण हेतु किया गया चंदा, कायमी तिथियाँ, इसी हेतु किसी भक्त द्वारा अर्पित मकान आदि के किराये की आय तथा जिनमंदिर साधारण के भंडार में से प्राप्त द्रव्य इस खाते में जमा किया जाता है ।

उपयोग :

इस द्रव्य में से परमात्मा की भक्ति हेतु सभी प्रकार के द्रव्य लाए जा सकते हैं । उदाहरण के तौर पर –

१ - केसर
२ - चंदन/पुष्प/फुलदानी
३ - बरास/कपूर
४ - प्रक्षालन हेतु दूध
५ - प्रक्षालन हेतु पानी
६ - धूपबत्ती
७ - दीपक हेतु घी
८ - दीपक रखने फानुस (लालटेन)
९ - दीपक हेतु गिलास
१० - दीपक हेतु स्टैन्ड
११ - दीपक हेतु रूई की बाती
१२ - खसकूँची
१३ - मोरपीछी-पूंजणी
१४ - अंगलूछने का कपड़ा
१५ - पाट लूछने का कपड़ा
१६ - धूपीया/धूपदानी
१७ - चमर
१८ - दर्पण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१९ - झालर/डंका
२० - पूजा की थाली-बाटकियाँ
२१ - कलश-तांबाकुंडी
२२ - आरती-मंगल दीया
२३ - जिनमंदिर हेतु जरूरी साबुन आदि
२४ - केशर घिसने का पत्थर
२५ - शिखर पर की ध्वजा
२६ - नाडाछडी (मौली)
२७ - इत्र, वर्ख, बादला (चमकी)
२९ - आंगी हेतु सामान इत्यादि

- इस द्रव्य में से पुजारी का मानदेय एवं उसे पूजा हेतु कपड़े खरीद कर दे सकते हैं ।
- भंडार, सिंहासन, दीपक हेतु काँच की हंडीयाँ आदि ला सकते हैं ।
- केशर-चंदन घिसनेवाले आदमी का मानदेय, उसे पूजा के कपड़े देना, अंगलूछने का कपड़ा, पूजा हेतु उपकरण-बर्तन, बर्तन माँजनेवाले आदमियों का मानदेय, मंदिर की देखरेख करनेवाले आदमियों का मानदेय दे सकते हैं ।
- मंदिर के साथ संबद्ध हर एक चीज, सिंहासन, दरवाजा आदि को साफसुथरा रखने का खर्चा एवं उसका रखरखाव (रीपेरींग) खर्च भी कर सकते हैं ।
- **वासक्षेप** एवं **काजा निकालने का झाडू** : ये चीजें मंदिर एवं उपाश्रय दोनों स्थानों में इस्तेमाल होती हैं, अतः इसका खर्चा **साधारण खाते** में से ही करें।

  नोंध : ऊपर बताया हर खर्चा साधारण खाते में से भी कर सकते हैं ।
- जिनमंदिर साधारण का भंडार मंदिरजी के अंदरूनी भाग में नहीं रख सकते । उसे मंदिरजी के बाहर किसी सुरक्षित योग्य स्थान में ही रखें । केशर-चंदन घिसने के कमरे में रख सकते हैं ।
- जिनमंदिर संचालन हेतु हर साल योग्य दिन बारहों महिनों की बारह या पंद्रह दिनों का एक ऐसी कुल चौबीस बोलियाँ बुलवाने का आयोजन किया जाए तो उसकी आय में से केशर-चंदन आदि का खर्चा एवं पुजारी का मानदेय आदि खर्चा निकाला जा सकता है ।
- श्री जिनमूर्ति एवं श्री जिनमंदिर के कार्यों के अलावा श्रीसंघ की पेढ़ी (कार्यालय) के आदमी तथा उपाश्रय, पाठशाला, आयंबिल भवन (खाता) आदि स्थानों में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कचरा निकालना आदि कार्य करने वाले आदमियों के वेतन आदि किसी भी कार्य में जिनमंदिर साधारण द्रव्य का उपयोग निषिद्ध है ।

ध्यान में रखने जैसी बात :

निम्न लिखित बातों का खर्चा जिनमंदिर साधारण में से नहीं हो सकता । उसे साधारण खाते में से ही करना चाहिए ।

- संघ की पेढ़ी का वहीवटी (संचालन) खर्चा
- स्टेशनरी, पोस्टेज, टेलिफोन, पानी आदि का खर्चा
- मंदिर के बाहर दर्शनार्थी हेतु पेयजल की व्यवस्था का खर्चा
- पाँव लूछने के टुकड़े, कारपेट आदि का खर्चा
- सूचनार्थ ब्लेकबोर्ड, चॉक, कपड़े के बैनर एवं बोर्डो का खर्चा
- सालगिरह (वर्षगांठ) के दिन ध्वजा चढ़ाने, पालख बांधने का खर्चा
- धार्मिक कार्यों हेतु मंडप आदि बांधने का खर्चा
- स्नात्र पूजा एवं बड़ी पूजा की किताबों-सापडों (किताब कुर्सी) का खर्चा

१० - साधारण द्रव्य

श्रीसंघ की पेढ़ी (कार्यालय) में या तीर्थ की पेढ़ी में साधारण खाते में उदारदिल श्रावकों द्वारा जो कुछ दान प्राप्त होता है, वह एवं साधारण खाता हेतु कायमी तिथियों का द्रव्य इस खाते में जमा होता है ।

बोलियाँ बोलने से भी साधारण द्रव्य की आय होती है । उदाहरण -

- संघपति, दानवीर, तपस्वी श्रावक, ब्रह्मचारी, दीक्षार्थी मुमुक्षु भाई-बहिनों को तिलक-हार-श्रीफल-शाल-चूंदडी-सम्मानपत्र आदि अर्पण करने की बोली का द्रव्य
- दीक्षाविधि पूर्व दीक्षार्थी को अंतिम बिदाई तिलक या अंतिम विजय तिलक या अंतिम प्रयाण तिलक करने की बोली का द्रव्य
- अंजनशलाका-प्रतिष्ठा आदि धार्मिक किसी भी कार्य हेतु की जानेवाली बोलियाँ (चढावा-ऊछामणी) के प्रसंग पर संघ को बिराजमान करने की जाजम (शतरंजी-दरी) बिछाने की बोली का द्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

❖ श्रीसंघ के मुनिमजी या मेहताजी बनने की बोली का द्रव्य आदि शास्त्र-अबाधित तौर-तरीकों से प्राप्त होनेवाला द्रव्य साधारण खाते का द्रव्य कहा जाता है ।

उपयोग :

❖ जिनमंदिर, उपाश्रय या संघ/तीर्थ की पेढ़ी (कार्यालय) संबंधी सभी कार्यों में इस्तेमाल कर सकते हैं ।

❖ सातक्षेत्रों में जहाँ-जहाँ जरूरत हो, वहाँ आवश्यकता अनुसार खर्च कर सकते हैं ।

❖ इस द्रव्य का उपयोग ट्रस्टी (न्यासी), व्यवस्थापक या अन्य कोई भी व्यक्ति निजी (Personal) कार्य में नहीं कर सकते ।

❖ धर्म में स्थिर करने के हेतु से आपत्ति में आ गिरे श्रावक-श्राविका का उद्धार करने हेतु संघ यह द्रव्य दे सकता है ।

साधारण खाते का यह द्रव्य धार्मिक (Religious) पवित्र द्रव्य है । इसे सामान्य जनोपयोगी, व्यावहारिक, सांसारिक या जैनेतर धार्मिक कार्य में नहीं दे सकते । इस खाते का द्रव्य धर्मादा (चैरिटी) उपयोग में, व्यावहारिक (स्कूली-कॉलेजी) शिक्षा में तथा अन्य किसी भी सांसारिक कार्य में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता ।

अंजनशलाका-प्रतिष्ठा-जिनभक्ति महोत्सव के मौके पर नवकारसी (साधर्मिक वात्सल्य) आदि की बोलियों एवं नकरों का उपयोग :

साधर्मिक वात्सल्य में एवं उसमें बढ़ोतरी हो तो साधर्मिक भक्ति के सभी कार्यों में तथा जिनभक्ति महोत्सव संबंधी सभी कार्यों में हो सकता है ।

इस द्रव्य का उपयोग विहारादि स्थानों में रसवतीयों की जो व्यवस्था होती है, उसमें भी किया जा सकता है ।

विशेष नोंध : झांपाचुंदड़ी या फलेचुंदड़ी के चढ़ावे की आय सर्वसाधारण खाते में जा सकती है । इसमें से सभी शुभ कार्य किए जा सकते हैं ।

कुंकुमपत्री (पत्रिका) में लिखित/सादर प्रणाम/जय जिनेन्द्र के रूप में नाम लिखने की बोली-नकरे का द्रव्य या महोत्सव का लाभ लेने के शुभेच्छक,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सौजन्य, आधारस्तंभ सहायक आदि के तौर पर नाम देने का जो द्रव्य आता है, उसका उपयोग :

- जिनभक्ति महोत्सव के हर एक कार्य में कर सकते हैं ।
- उदा. प्रभावना, साधर्मिक वात्सल्य, संगीतकार का खर्चा, पत्रिका छपाने का खर्चा आदि ।

११ - सर्वसाधारण (शुभ)

धार्मिक या धर्मादा (Religious or Charitable) किसी भी शुभ कार्य में इस्तेमाल करने हेतु कोई सर्वसाधारण का चंदा इकट्ठा किया गया हो उस द्रव्य का उपयोग धार्मिक या धर्मादा के किसी भी कार्य में किया जा सकता है ।

उदा. चातुर्मास में हरएक कार्यों का खर्चा निकालने हेतु या वार्षिक हर प्रकार का खर्चा निकालने हेतु संघ में चंदा (टीप) किया जाता है ।

बारह महिनों हेतु बारह या पंद्रह-पंद्रह दिन हेतु चौबीस बोलियाँ बुलवाकर भी इस खाते में आय वृद्धि की जा सकती है ।

प्राकृतिक प्रकोप, सामाजिक आफत आदि प्रसंग पर चैरिटी के तौर पर इस द्रव्य का उपयोग कर सकते हैं ।

झांपाचुंदड़ी या फलेचुंदड़ी के चढ़ावे की आय शुभ खाते में इस्तेमाल की जा सकती है ।

१२ - सातक्षेत्र

सातक्षेत्रों के नाम : १ - जिनप्रतिमा, २ - जिनमंदिर, ३ - जिनागम, ४ - साधु, ५ - साध्वी, ६ - श्रावक एवं ७ - श्राविका हैं ।

सातक्षेत्रों में जहाँ भी जरूरत हो वहाँ इस्तेमाल करने हेतु किसी द्वारा द्रव्य प्राप्त हुआ हो तो उसका उपयोग उस क्षेत्र में जैसी जरूरत हो उस परिमाण में इस्तेमाल कर सकते हैं । अथवा दाता की भावना एवं आशय अनुसार उस - उस क्षेत्र में इस्तेमाल कर सकते हैं ।

सातक्षेत्रों की पेटी/डिब्बा/गोलख :

- सातक्षेत्रों के अलग नामोल्लेख पूर्वक पेटी/डिब्बा/गोलख रखे हों तो उसमें से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निकला द्रव्य उन - उन खातों में आय के अनुसार इस्तेमाल करें ।

- सातों क्षेत्रों की संयुक्त पेटी होने पर, उसमें से निकला द्रव्य सातों क्षेत्रों में समान भाग कर इस्तेमाल करें ।
- सातों क्षेत्रों हेतु संयुक्त चंदा किया गया हो तो उसे भी समान भाग कर सातों क्षेत्रों में लगाना चाहिए ।
- इसके अलावा चंदा करते समय जिस तरह से घोषणा की जाती है, उसके आधार पर इसका उपयोग करें ।
- वेतन-मानदेय आदि साधारण का खर्चा इस द्रव्य से न निकालें ।
- **अनुकंपा या जीवदया में इस द्रव्य का उपयोग नहीं कर सकते ।**

नोंध : सातक्षेत्र की पेटी-भंडार, जीवदया की पेटी, साधर्मिक भक्ति की पेटी, पाठशाला एवं आयंबिल भवन की पेटी आदि जिनमंदिर के अंदरूनी भाग में नहीं रख सकते । उन्हें उपाश्रय में या जिनमंदिर के बाहर किसी सुरक्षित सुयोग्य स्थान पर रखें । यह खास ध्यान में रखें ।

१३ - उपाश्रय-पौषधशाला-आराधना भवन

उपाश्रय निर्माण हेतु : दानवीरों द्वारा प्राप्त दान, उपाश्रय के विभिन्न विभागों पर एवं उपाश्रय पर नामकरण करने हेतु आई राशि, उपाश्रय खाते की पेटी-भंडार से निकली राशि तथा उपाश्रय के उद्घाटन की बोली की आय आदि उपाश्रय खाते का द्रव्य गिना जाता है ।

श्रावकों को चाहिए कि धर्म आराधना करने हेतु उपाश्रय स्वद्रव्य से बनवाएँ ।

उपाश्रय यह श्रावक-श्राविकाओं की धार्मिक आराधना करने हेतु पवित्र स्थान है । इसका उपयोग धार्मिक कार्य करने हेतु ही किया जाना चाहिए । **व्यावहारिक-स्कूल, कॉलेज या राष्ट्रीय-सामाजिक प्रवृत्तियाँ-समारोह तथा शादी-विवाहादि सांसारिक किसी भी कार्य में इस मकान का उपयोग नहीं कर सकते । इन कार्यों के लिए उपाश्रय, पौषधशाला, आराधना भवन किराये से भी नहीं दे सकते ।**

इन धर्मस्थानों का कब्जा कोई नहीं ले सकता, क्योंकि ये जैनशासन के अबाधित स्थान हैं और रहेंगे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपाश्रय की जमीन हेतु या उपाश्रयादि स्थान बनाने हेतु देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य, वैयावच्च द्रव्य आदि का उपयोग नहीं हो सकता । वैसे ही उन खातों में से ब्याजी या बिनब्याजी लोन भी नहीं ले सकते ।

लकी ड्रॉ (भाग्यलक्ष्मी) जैसी अहितकर पद्धतियाँ अपनाकर भी उपाश्रय हेतु द्रव्य इकट्ठा करना उचित नहीं है।

उपाश्रय में 'शय्यातर' की जो राशि इकट्ठी की जाती है, उसका उपयोग उपाश्रय निर्माण एवं उसकी मरम्मत में ही किया जा सकता है ।

कहीं-कहीं उपाश्रय एवं जिनमंदिर आजुबाजु में ही होते हैं । वहाँ पर उपाश्रय के अंदर या बाहर, कहीं भी, अनजाने में भी देवद्रव्य की चीज वस्तुएँ, मार्बल, टाईल्स, ईंट, सिमेंट आदि का इस्तेमाल न हो इसका पक्का ध्यान रखें ।

भूल से कदाचित् ऐसा बन जाए तो तुरंत उतनी राशि देवद्रव्य में जमा कर देना चाहिए । ऐसा न करने पर देवद्रव्य के भक्षण का दोष लगता है ।

उपाश्रय की कोई भी चीज (पाट-पाटला-जाजम आदि) धर्म के कार्य हेतु कोई ले जाए तो उसका नकरा (शुल्क) साधारण खाते में (उपाश्रय खाते में) देना चाहिए ।

उपाश्रय या जिनमंदिर की कोई भी चीजें सांसारिक कार्य हेतु नहीं दे सकते ।

१४ - आयंबिल तप

आयंबिल तप हेतु किया गया चंदा, चैत्र एवं आश्विन मास की ओलियों के आदेश की बोलियाँ या नकरे का द्रव्य, आयंबिल हेतु कायमी तिथियों की आय तथा आयंबिल खाते के भंडार की आय : आयंबिल तप खाते में जमा होते हैं ।

उपयोग :

यह द्रव्य आयंबिल तप करने वाले तपस्वियों की भक्ति में या उस हेतु की जानेवाली व्यवस्था में खर्च कर सकते हैं ।

इस खाते में वृद्धि हो तो अन्य गाँव-शहरों के आयंबिल तप करनेवालों की भक्ति हेतु भेज सकते हैं ।

संक्षेप में कहना हो तो यह द्रव्य आयंबिल तप का प्रचार-प्रसार करने हेतु ही होने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से अन्य किसी भी कार्य में इसका उपयोग नहीं कर सकते । आयंबिल हेतुक द्रव्यों में से एकाशन करनेवालों की भक्ति भी निषिद्ध है ।

आयंबिल भवन का निर्माण श्रावक स्वद्रव्य से करें । लकी ड्रॉ या लॉटरी जैसी अहितकर प्रथा द्वारा द्रव्य एकत्र कर भवन न बनाएँ ।

यह भी केवल धार्मिक पवित्र द्रव्य है । आयंबिल भवन का उपयोग भी सांसारिक व्यावहारिक-सामाजिक किसी भी कार्य में नहीं करना चाहिए । इसमें केवल धार्मिक कार्य ही कर सकते हैं ।

१५ - धारणा, उत्तरपारणा, पारणा, नवकारसी खाता पौषधवालों को एकाशना एवं प्रभावना आदि खाता

उपरोक्त नाम वाले या अन्य तप-जप, तीर्थयात्रा आदि धार्मिक कार्य करने वाले साधर्मिकों की भक्ति करने हेतु जो द्रव्य होता है, वह द्रव्य दाता की भावना अनुसार उस-उस खाते में इस्तेमाल करना चाहिए ।

इसमें वृद्धि हो तो यह द्रव्य सातों क्षेत्रों में जहाँ-जहाँ जरूरत हो वहाँ इस्तेमाल किया जा सकता है । पर किसी भी सार्वजनिक कार्य में यह द्रव्य नहीं लगा सकते । क्योंकि यह भी केवल धार्मिक क्षेत्र का द्रव्य है ।

नोंध : साधु-साध्वीजी के तप का पारणा करवाने की बोलियाँ बुलवाना योग्य नहीं है । अज्ञानवश कहीं किसी ने बोली हो तो वह द्रव्य 'साधु-साध्वी संबंधी' होने से गुरुद्रव्य के तौर पर जिनमंदिर जीर्णोद्धार या नवनिर्माण हेतु देवद्रव्य में ही जमा कराएँ ।

१६ - निश्राकृत

दानवीरों द्वारा विशिष्ट प्रकार के धार्मिक कार्य हेतु दिए गए द्रव्य का उपयोग उसी कार्य हेतु हो सकता है । उसमें वृद्धि हो तो शास्त्रीय मर्यादा अनुसार ऊपर के खातों में जा सकता है ।

१७ - कालकृत

खास पोषदसम, अक्षयतृतीया, जिनमंदिर वर्षगांठ (सालगिरह) आदि पर्वों के निश्चित दिनों में इस्तेमाल करने हेतु दाताओं ने जो द्रव्य दिया हो, उसका उपयोग उन दिनों संबंधी कार्य में ही करना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ - अनुकंपा

हर एक दीन-दुःखी, निःसहाय, वृद्ध, अनाथ, अपंग आत्माओं को अन्न-पानी, वस्त्र, औषधि आदि उपलब्ध कराकर द्रव्यदुःख टालने, परंपरा से भावदुःख टालने का प्रयत्न याने अनुकंपा । इस हेतु प्राप्त द्रव्य उपरोक्त कार्य में लगाना चाहिए ।

यह सामान्य कक्षा का द्रव्य है । अतः ऊपर के सातों क्षेत्रों में या किसी भी धार्मिक क्षेत्र में इसका उपयोग नहीं हो सकता । इसी तरह सातों क्षेत्रों का द्रव्य भी अनुकंपा क्षेत्र में नहीं लगाया जा सकता ।

खास आवश्यकता पड़ने पर अनुकंपा का द्रव्य जीवदया में लगा सकने को इजाजत है ।

हिंसा को प्रोत्साहित करने वाले अस्पतालों आदि में यह द्रव्य नहीं लगा सकते ।

यह द्रव्य रोककर न रखें । तुरंत व्यय कर दें । अन्यथा अंतराय लगती है ।

१९ - जीवदया

जीवदया की टीप (चंदा), जीवदया के भंडार की आय, जीवदया का लगान आदि आय इस खाते में जमा करनी चाहिए ।

उपयोग :

- इस खाते का द्रव्य मनुष्य को छोड सभी प्रत्येक तिर्यंच पशु-पक्षी-जानवर की द्रव्यदया के द्वारा परंपरा से भावदया के कार्य में, अन्न, पानी, औषधि आदि साधनों द्वारा उनका दुःख दूर करने हेतु शास्त्रीय मर्यादा अनुसार इस्तेमाल कर सकते हैं ।
- जीवदया संबंधी सभी कार्य में व्यय कर सकते हैं ।
- **यह सामान्य कोटि का द्रव्य है, अतः ऊपर के सातों क्षेत्र आदि किसी भी धार्मिक क्षेत्र में एवं अनुकंपा क्षेत्र में भी इस द्रव्य का विनियोजन नहीं हो सकता ।**
- जीवदया की राशि जीवदया में ही इस्तेमाल करनी चाहिए ।
- कुत्तों को रोटी, पक्षियों को अनाज आदि विशेष हेतु से आया द्रव्य उसी उद्देश्य में लगाना चाहिए ।
- **यह द्रव्य रोककर न रखें । तुरंत व्यय कर दें । अन्यथा अंतराय लगती है ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२० - ब्याज आदि की आय

जिस खाते की राशि पर ब्याज प्राप्त हुआ हो अथवा भेंट आदि द्वारा वृद्धि हुई, वह राशि उसी खाते में खर्चनी चाहिए । यदि जरूरत से ज्यादा राशि हो तो अन्य स्थलों पर उसी खाते में खर्च हेतु भक्ति से भेज देना, यह जैनशासन की मर्यादा है ।

२१ - टैक्स (कर) आदि खर्चा

जिस खाते की आय पर टैक्स (कर), ऑक्ट्रोय आदि सरकारी खर्च हो उसे उस उस खाते में से दे सकते हैं ।

२२ - पू. साधु-साध्वीजी के कालधर्म के बाद शरीर के अग्निसंस्कार-अंतिम यात्रा निमित्तक बोलियाँ

पू. साधु-साध्वीजी के कालधर्म के पश्चात् अंतिमयात्रा-अग्निसंस्कार निमित्तक सभी बोलियों का द्रव्य :

१ - जिनमंदिर के जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में,

२ - गुरुभगवंतों की प्रतिमा, पादुका एवं गुरुमंदिर निर्माण एवं जीर्णोद्धार आदि में,

३ - गुरुभगवंत के संयमी जीवन की अनुमोदना हेतु जिनभक्ति महोत्सव में (स्वामिवात्सल्य-प्रभावना बिना) इस्तेमाल किया जाता है ।

जैन संगीतकार एवं जैन विधिकार आदि को यह राशि नहीं दे सकते ।

किसी भी संयोग में यह राशि जीवदया में नहीं ले जा सकते ।

जीवदया हेतु इस मौके पर अलग से टीप (चंदा) कर राशि इकट्ठी कर सकते हैं ।

२३ - जिनभक्ति हेतु अष्टप्रकारी पूजा की सामग्री संघ को समर्पित करने की बोलियाँ (केशर-चंदन खाता)

श्री जिनभक्ति के लिए जो अष्टप्रकारी पूजा की सामग्री इस्तेमाल की जाती है, उस सामग्री का लाभ लेने हेतु प्रतिवर्ष जो बोलियाँ बुलवाई जाती हैं, उसकी विगत –

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ - वासक्षेप

२ - मोरपीछी-पूंजणी-खसकूंची

३ - प्रक्षाल हेतु दूध

४ - बरास

५ - केसर

६ - चंदन

७ - पुष्प

८ - धूप

९ - दीपक (घी)

१० - अंगलूछना-पाटलूछना

११ - इत्र-चंदन का तेल

१२ - वर्ख आदि सामग्री की बोलियाँ

उपयोग :

बोलियों की आय इन पूजा द्रव्यों को खरीदने हेतु परस्पर इस्तेमाल कर सकते हैं ।

- मंदिरजी में रात्रि में रोशनी करने हेतु घी-नारीयल तेल के दीपक रखे जाएँ तो उसका खर्चा भी जरूरत होने पर इस द्रव्य से कर सकते हैं ।
- इस राशि का उपयोग जिनभक्ति के कार्य के अलावा अन्य किसी भी कार्य में नहीं हो सकता ।

नोंध : श्रावक को चाहिए कि प्रभुपूजा निजी द्रव्य से ही करें, यही विधि है । अतः इस प्रकार की बोलियों द्वारा की गई सुविधा-सामग्री का लाभ लेने वाले को, स्वयं जितनी सामग्री इस्तेमाल की हो उतना द्रव्य उस खाते में (केशर-चंदन खाते में) अर्पण करने का विवेक रखना जरूरी है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२४ - पर्युषण में जन्म वाचन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - सकल संघ पर गुलाबजल से अमी छांटना करने की	साधारण
२ - संघ के मुनीमजी-मेहताजी बनने की	साधारण
३ - स्वप्नादि की बोली लेने वाले परिवार का बहुमान करने की...	साधारण
४ - चौदह स्वप्नों को ऊतारने की-झुलाने की...	देवद्रव्य
५ - स्वप्नों को पुष्प-सुवर्ण-मोती आदि की माला पहनाने की	देवद्रव्य
६ - पद्मसरोवर स्वप्न के समय गुलाबजल छांटने की	देवद्रव्य
७ - स्वप्नों को सिर पर ले पधराने की	देवद्रव्य
८ - पारणे में प्रभुजी को पधराने की	देवद्रव्य
९ - पारणा-प्रभुजी को झुलाने की	देवद्रव्य
१० - पारणा-प्रभुजी संबंधी हर एक लाभ की...	देवद्रव्य

(उदा. धूप-दीपक-चामर-थाली-डंका बजाना आदि)

नोंध : 'स्वप्नों की जो बोली बुलवाई जाए, उसमें से या उस पर निश्चित प्रतिशत राशि साधारण खाता या अन्य किसी खाते में देना पडेगा' ऐसा तय करके बोली नहीं बुलवा सकते । स्वप्न संबंधी बोलियों की संपूर्ण राशि देवद्रव्य में ही जाती है । उसका उपयोग जिनमंदिर के जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में ही करना चाहिए ।

मंदिर की व्यवस्था, पूजा एवं संचालन हेतु इस राशि का उपयोग नहीं कर सकते ।

विशेष नोंध : मुनीमजी-या मेहताजी बनने की बोली बोलते समय यदि भगवान के मुनीमजी या मेहताजी बनने की जाहीरात की जाती हो तो वह राशि **देवद्रव्य**

२५ - उद्यापन-उजमणा

उद्यापन-उजमणे में दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र की पुष्टि हो एवं सातों क्षेत्र में उपयोगी हो ऐसे उपकरण रखने चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्यापन-उजमणे का उद्घाटन करने की बोली में से दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र संबंधी उपकरण लाए जा सकते हैं ।

उपयोग :

जिनमंदिर-उपयोगी चीजें हों वे जिनभक्ति के कार्य में इस्तेमाल करें ।

पू. साधु-साध्वीजी के उपयोग में आसकनेवाले उपकरण उनकी भक्ति हेतु उन्हें बहोराए जा सकते हैं ।

धार्मिक किताबें आदि हों तो वे पू. साधु-साध्वीजी को या जरूरत वाले श्रावक-श्राविका को दें । ज्ञानभंडार में भी रख सकते हैं ।

पूजा के वस्त्र, सामायिक के उपकरण भी जरूरतवाले श्रावक-श्राविका को दें ।

चंद्रवा-पूंठिया (पीछवाई) निर्मित की हो तो उसका उपयोग जिनमंदिर-उपाश्रय में कर सकते हैं ।

गुरु भगवंतों के पीछे पूज्य देव-गुरु की आकृतियाँ न हो ऐसी ही चंद्रवा-पूंठियों की जोड़ी भरवाएँ ।

उद्यापन कराने वाले व्यक्ति या परिवार स्वयं उद्यापन में रखी चीजें इस्तेमाल नहीं कर सकते । या तो संघ को सौंपना चाहिए या सुयोग्य स्थानों में भेंट करना चाहिए ।

स्वयं ने भराया (निर्मित किया-कराया) चंद्रवा आदि उद्यापन में रखा हो तो फिर स्वयं के घर में नहीं रख सकते । उसे सुयोग्य स्थान में भेज देना चाहिए ।

२६ - आचार्य आदि पद प्रदान प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - आसन बहोराने की	देवद्रव्य
२ - स्थापनाचार्य बहोराने की	देवद्रव्य
३ - मंत्रपट-मंत्राक्षर पोथी बहोराने की	ज्ञानद्रव्य
४ -नवकार मालिका (माला) बहोराने की	ज्ञानद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ - गुरुपूजन की देवद्रव्य

६ - कंबल बहोराने की देवद्रव्य

७ - नूतन नाम जाहीर करने की देवद्रव्य

नोंध : गुरुपूजन-एवं चारित्रोपकरण आदि गुरु संबंधी आय जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में जाती है । व्यवस्थापकों की सुविधा हेतु देवद्रव्य लिखा है । विवेकपूर्वक इस्तेमाल करें ।

२७ - पुजारी के वेतन के बारे में

प्रभुपूजा की प्रभु को कोई जरूरत नहीं है । जिनपूजा करना, यह श्रावकों का स्वयं का कर्त्तव्य है । पुजारी हम हमारी स्वयं की सुविधा एवं सहायता हेतु ही रखते हैं । अतः पुजारी को पगार (वेतन) आदि श्रावकों को स्वयं को ही देना चाहिए । **यदि स्वयं न दे सको तो 'साधारण खाते में से या जिनमंदिर साधारण खाते में से' देना चाहिए । लेकिन देवद्रव्य में से पुजारी को पगारादि नहीं दे सकते ।**

नोंध : पुजारी को पगार आदि देने हेतु बारहों मास की बारह बोलियाँ बुलवाकर आय अर्जित कर सकते हैं ।

गुरुपूजन आदि का द्रव्य-गुरुद्रव्य :

धर्मसंग्रह-द्रव्यसप्ततिका आदि ग्रंथों के अनुसार गुरुद्रव्य दो प्रकार का है ।

१ - **भोगार्ह गुरुद्रव्य**=गुरु के भोग-उपभोग में आ सके ऐसे द्रव्य उन्हें बहोराना, जैसे आहार, पानी, वस्त्र, पात्र, कंबल आदि ।

२ - **पूजार्ह गुरुद्रव्य**=गुरु की अंगपूजा, अग्रपूजा रूप में जो सुवर्णादि द्रव्य अर्पण किया जाता है, जैसे सुवर्ण मुद्रा रख गुरुपूजन करना, रुपये-सिक्के चढाना आदि ।

भोगार्ह गुरुद्रव्य का उपयोग गुरु स्वयं कर सकते हैं ।

पूजार्ह गुरुद्रव्य उनके उपयोग में नहीं आ सकता, अतः एव द्रव्यसप्ततिका के पाठ अनुसार उसे गुरु से भी ऊंचे स्थान में याने जिनमंदिर के जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में ले जाया जाता है । **याद रहे कि द्रव्यसप्ततिका में गुरुद्रव्य से ऊपर का खाता देवद्रव्य का ही है ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अतः एव गुरुपूजन में प्राप्त तमाम राशि जिनमंदिर जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में ही खर्च करनी चाहिए ।

गुरुओं को कंबल आदि बहोराने की बोली बुलवाई जाती है, उसमें कंबल भोगार्ह होने से गुरु उसे इस्तेमाल कर सकेंगे, परंतु उसकी बोली की राशि तो धन स्वरूप होने से पूजार्ह ही मानी जाएगी, अत एव वह भी गुरुपूजन की तरह ही जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में ही जाएगी, यह ध्यान में रखें ।

विशेष :

गुरुपूजन की राशि से जिनेश्वर को केसर आदि से अंगपूजा में तथा मुकुट, अलंकार आदि आभरणपूजा में द्रव्य इस्तेमाल न करें।

बोली	**किस खाते में ?**
गुरुपूजन की	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**
गुरुपूजन समय समर्पित पूजा द्रव्य	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**
गुरु महाराज को कंबल बहोरानें की	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**
गुरु महाराज के सन्मुख की गहुँली का द्रव्य	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**
गुरु महाराज के प्रवेश-स्वागत जुलुस समय वाहन, हाथी, घोड़े आदि की	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**
गुरु महाराज का प्रवेशोत्सव करने की	**पूजार्हगुरुद्रव्य=देवद्रव्य**

नोंध : गुरु महाराज के प्रवेश या व्याख्यान प्रसंग पर हीरा-माणेक, मोती आदि कीमती द्रव्यों से गहुँली की हो तो वह द्रव्य देवद्रव्य में जमा कराएँ । वही गहुंली यदि दूसरी बार इस्तेमाल करनी हो तो उस समय उसकी जितनी कीमत होती हो उतनी देवद्रव्य में जमा करवाएँ ।

गुरु के प्रवेशोत्सव की बोलियों में से प्रवेशोत्सव का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता । बोलियों की संपूर्ण राशि देवद्रव्य में जाएगी । जबकि प्रवेशोत्सव का खर्चा व्यक्तिगत या साधारण खाते में से करना होगा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेष नोंध : ● गुरुपूजन एवं चारित्रोपकरण आदि गुरु संबंधी आय जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में जाती है । व्यवस्थापकों की सुविधा हेतु देवद्रव्य लिखा है । विवेकपूर्वक इस्तेमाल करें ।

गुरुपूजन-कंबल बहोराना आदि उपरोक्त सभी प्रकार का गुरुद्रव्य 'साधु-साध्वी वैयावच्च' के किसी भी कार्य में काम नहीं आता ।

२८ - गुरुमंदिर-गुरुमूर्ति आदि संबंधी बोलियाँ

१ - गुरुमंदिर भूमिपूजन-खनन एवं शिलास्थापन को

२ - गुरुमूर्ति - पादुकादि भरवाने (निर्माण करने) को

३ - गुरुमूर्ति - पादुकादि के पाँच-अभिषेक को

४ - गुरुमूर्ति - पादुकादि की प्रतिष्ठा की

५ - गुरुमूर्ति - पादुकादि के पूजन की

६ - गुरुमंदिर पर कलश-ध्वजादि की स्थापना करने की

७ - गुरु भगवंत की तस्वीर को उपाश्रय या अन्यत्र पधराने को, उद्घाटन की

८ - गुरु भगवंत की तस्वीर का पूजन करने की

९ - गुरुमूर्ति/पादुका समक्ष रखे भंडार-पेटी-गोलख की आय

उपरोक्त सभी बोलियाँ एवं भंडार की आय गुरुमूर्ति/पादुकादि के निर्माण-मरम्मत में, गुरुमंदिर के जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में एवं जिनमंदिर के जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में इस्तेमाल की जा सकती है ।

२९ - पू. साधु-साध्वीजी भगवंत कालधर्म को पाते हैं (स्वर्गवासी बनते हैं) तब बोली जाती बोलियाँ

१ - स्वर्गस्थ पूज्य के शरीर को विलेपन-बरास-चंदनादि पूजा करने को

२ - स्वर्गस्थ पूज्य के शरीर का वासक्षेपादि से पूजन करने को

३ - स्वर्गस्थ पूज्य के शरीर को पालखी आदि में पधराने की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ - स्वर्गस्थ पूज्य के शरीर को धारण करती पालखी आदि के चारों छोर पकड़ने को...

(१) आगे दायीं ओर

(२) आगे बायीं ओर

(३) पीछे दायीं ओर एवं

(४) पीछे बायीं ओर

५ - दोहनी निकालने की एवं साथ में लेकर चलने की

६ - चार धूपदानियाँ एवं चार दीपक दानियाँ (दीवी) लेकर चलने की

७ - पालखी के ऊपर लगाई लोटियाँ (कलश) ले जाने को

(१) मुख्य लोटी

(२) बाकी की चार या आठ कुल नौ लोटियाँ

८ - पालखी के दौरान धर्मप्रभावक अनुकंपा दान देने की

९ - पूज्य के शरीर को अग्नि प्रदान करने की

उपरोक्त सभी बोलियों द्वारा प्राप्त आय का उपयोग :

१ - जिनमंदिर के जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में,

२ - गुरुभगवंतों की प्रतिमा, पादुका एवं गुरुमंदिर निर्माण एवं जीर्णोद्धार आदि में,

३ - गुरुभगवंत के संयमी जीवन की अनुमोदना हेतु जिनभक्ति महोत्सव में (स्वामिवात्सल्य-प्रभावना बिना) इस्तेमाल किया जाता है ।

जैन संगीतकार एवं जैन विधिकार आदि को यह राशि नहीं दे सकते ।

नोंध : इस राशि का उपयोग अनुकंपा एवं जीवदया के कार्यों में कतई नहीं कर सकते । उस कार्य हेतु अलग से चंदा करके वे कार्य किए जा सकते हैं ।

अग्निसंस्कार (अग्निप्रदान) आदि की बोलियों की आय में से यदि गुरुमंदिर हेतु जगह खरीदी गई हो, अगर वहाँ गुरुमंदिर बना हो तो उस स्थान में पू. साधु-साध्वीजी या श्रावक-श्राविका निवास एवं संथारा (शयन) नहीं कर सकते । पू. साधु-साध्वीजी भगवंत वहाँ पर गौचरी (भोजन)-पानी नहीं कर सकते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० - देव-देवियों के बारे में समझ

शास्त्र मर्यादानुसार मंदिरजी में मूलनायक भगवान के यक्ष-यक्षिणी के अलावा अन्य किसी भी देव-देवी की प्रतिमादि पधराना उचित नहीं है । मूलनायक प्रभु भी सपरिकर हो तो उनके देव-देवी भी परिकर में ही उत्कीर्ण होने से उनकी अलग मूर्तियाँ पधराने की आवश्यकता नहीं है ।

बोली	किस खाते में
१ - जिनमंदिर स्व-द्रव्य से बनाया हो अथवा यक्ष-यक्षिणी की देवकुलिका वाली जगह एवं देवकुलिका साधारण खाते में से बनवाई हो तो मूर्ति भरवाने की (निर्माण की) स्थापना (प्रतिष्ठा) की	साधारण
२ - श्री मणिभद्रजी की मूर्ति भरवाने एवं स्थापना करने की और उनके सामने रखे भंडार की आय (श्री मणिभद्रजी तपागच्छ के अधिष्ठायक हैं एवं उपाश्रय में ही उनका स्थान होना चाहिए ।)	साधारण
३ - जिनमंदिर के बाहर स्वद्रव्य या साधारण द्रव्य से प्राप्त/निर्मित स्थान/देवकुलिका में अन्य किसी भी समकिती देव-देवी की प्रतिमा निर्माण करने की/प्रतिष्ठा करने की एवं उनके आगे रखे भंडार की आय	साधारण
४ - शासन देव को खेस एवं देवी को चूंदड़ी ओढ़ाने का नकरा/बोली	साधारण

नोंध : जहाँ यह नकरा/बोली देवद्रव्य में ले जाने का रिवाज चल रहा है वह चलने दें ।

देव-देवियों संबंधी साधारण की समस्त आय श्रावक-श्राविकाओं को प्रभावना के रूप में या साधर्मिक वात्सल्य-भोज के रूप मे इस्तेमाल न करें । इसी के साथ अनुकंपा-जीवदया में भी इसका उपयोग नहीं हो सकता ।

शासन की मर्यादा का उल्लंघन करके देव-देवियों के स्वतंत्र स्थान खडे करना योग्य नहीं है । इससे वीतराग परमात्मा की लघुता होती है एवं भौतिक कामनाएँ पुष्ट होती हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३१ - अंजनशलाका-प्रतिष्ठा बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - कुंभ स्थापना	देवद्रव्य
२ - अखंड दीपक स्थापना	देवद्रव्य
३ - ज्वारारोपण (यवारोपण)	देवद्रव्य
४ - माणेक स्तंभ आरोपण	देवद्रव्य
५ - क्षेत्रपाल पूजन	देवद्रव्य
६ - नंद्यावर्त्त पूजन	देवद्रव्य
७ - दश दिक्पाल पट्टक पूजन	देवद्रव्य
८ - नवग्रह पट्टक पूजन	देवद्रव्य
९ - अष्टमंगल पट्टक पूजन	देवद्रव्य
१० - सोलह विद्यादेवी पूजन	देवद्रव्य
११ - छप्पन्न दिक्कुमारी की बोलियाँ/नकरा	देवद्रव्य
१२ - चौंसठ इन्द्रों की बोलियाँ/नकरा	देवद्रव्य
१३ - भगवान के माता-पिता बनने की	देवद्रव्य
१४ - सौधर्मेन्द्र-इन्द्राणी बनने की	देवद्रव्य
१५ - मंत्रीश्वर बनने की	देवद्रव्य
१६ - प्रथम छड़ीदार बनने की	देवद्रव्य
१७ - द्वितीय छड़ीदार बनने की	देवद्रव्य
१८ - स्वप्नपाठक बनने की	देवद्रव्य
१९ - ईशानेन्द्र बनने की	देवद्रव्य
२० - अच्युतेन्द्र बनने की	देवद्रव्य
२१ - हरिणैगमेषी देव बनने की	देवद्रव्य
२२ - प्रियंवदा दासी बनने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२३ -	भगवान के भुवा-भुरोसा (फूंफासा) बनने की	देवद्रव्य
२४ -	भगवान के मामा-मामी बनने की	देवद्रव्य
२५ -	भगवान के सासु-ससुर बनने की	देवद्रव्य
२६ -	हर प्रतिमाजी को अठारह अभिषेक करने की	देवद्रव्य
२७ -	भगवान को सूर्य दर्शन करवाने की	देवद्रव्य
२८ -	भगवान को चंद्र दर्शन करवाने की	देवद्रव्य
२९ -	दर्पण में प्रभु का मुख-दर्शन करने की	देवद्रव्य
३० -	कुबेर भंडारी बनने की	देवद्रव्य
३१ -	नगरसेठ बनने की	देवद्रव्य
३२ -	भगवान को पढ़ानेवाला शिक्षक बनने की	देवद्रव्य
३३ -	पाठशाला के विद्यार्थी बनने की बोली/नकरा	देवद्रव्य
३४ -	राजपुरोहित बनने की	देवद्रव्य
३५ -	राज्यसभा में प्रभु को राजतिलक करने की	देवद्रव्य
३६ -	राज्यसभा में प्रभु के ऊपर राजछत्र धरने की	देवद्रव्य
३७ -	सरसेनाधिपति बनने की	देवद्रव्य
३८ -	नौ लोकांतिक देव बनने की बोली/नकरा	देवद्रव्य
३९ -	भगवान की कुलमहत्तरा बनने की	देवद्रव्य
४० -	भगवान के ऊपर से नमक उतारने की	देवद्रव्य
४१ -	भगवान के लग्न-विवाह प्रसंग पर जो कुछ दहेज एवं भेंट-तिलक रूप में आता है वह	देवद्रव्य
४२ -	भगवान के नामकरण के समय भुवा जो खिलौने आदि लाती है वह	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४३ -	भगवान के मौसारे (मामेरु) में आई चीजें	देवद्रव्य
४४ -	जन्माभिषेक के बाद भगवान के घर में इन्द्र द्वारा की गई ३२ कोटि सुवर्णादि की वृष्टि	देवद्रव्य
४५ -	ध्वजादण्ड का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
४६ -	कलश का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
४७ -	ध्वजादण्ड एवं कलश की चंदनपूजा करने की	देवद्रव्य
४८ -	ध्वजादण्ड एवं कलश की पुष्पपूजा करने की	देवद्रव्य
४९ -	ध्वजादण्ड की आरती करने की	देवद्रव्य
५० -	ध्वजादण्ड की पोंखणा करने की	देवद्रव्य
५१ -	पांचों कल्याणक मनाने हेतु वरघोड़े (शोभायात्रा) के तमाम लाभ लेने की	देवद्रव्य
५२ -	जिनमंदिर पर ध्वजा चढ़ाने की	देवद्रव्य
५३ -	जिनमंदिर पर कलश (अंडा) स्थापना करने की	देवद्रव्य
५४ -	जिनमंदिर का द्वारोद्घाटन करने की	देवद्रव्य
५५ -	जिनमंदिर में कुंकुम के हस्तचिह्न (थापा) करने की	देवद्रव्य
५६ -	जिनमंदिर की तीनों दिशा में मंगलमूर्तियाँ स्थापित करने की	देवद्रव्य
५७ -	जिनमूर्ति निर्माण (भराने) की	देवद्रव्य
५८ -	चैत्य अभिषेक करने की	देवद्रव्य
५९ -	प्रभु को प्रतिष्ठित (गादीनशीन) करने की	देवद्रव्य
६० -	तोरण बांधने की एवं वांदने की	देवद्रव्य
६१ -	घण्टानाद करने की	देवद्रव्य
६२ -	मंगल कुंभ स्थापना करने की	देवद्रव्य
६३ -	चौबीस प्रहर (७२ घण्टे) दीपक स्थापना करने की	देवद्रव्य
६४ -	मूलनायक आदि प्रभु की अष्टप्रकारी पूजा करने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६५ -	मूलनायक आदि प्रभु को हार-मुकुट-आभूषण पूजा करने की	देवद्रव्य
६६ -	एक लाख अखण्ड अक्षत से स्वस्तिक करने की	देवद्रव्य
६७ -	प्रथम भण्डार (गोलख) भरने की	देवद्रव्य
६८ -	आरती करने की	देवद्रव्य
६९ -	मंगल दीया करने की	देवद्रव्य
७० -	पोंखणा करने की	देवद्रव्य
७१ -	प्रतिष्ठाचार्य का नवांगी गुरुपूजन करने की	देवद्रव्य
७२ -	द्वारोद्घाटन के दिन अष्टप्रकारी पूजा करने की	देवद्रव्य

अंजनशलाका एवं प्रतिष्ठा महोत्सव संबंधी उपरोक्त सभी बोलियों की आय देवद्रव्य में ही जाती है । इस राशि में से अंजनशलाका एवं/या प्रतिष्ठा संबंधी कार्यों का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता । इस हेतु व्यक्तिगत, साधारण या जिनभक्ति-महोत्सव हेतु किए गए चंदे में से राशि इकट्ठी करनी चाहिए ।

३२ - गुरुमंदिर में गुरुमूर्ति/पादुका प्रतिष्ठित करने संबंधी बोलियाँ

	बोली	किस खाते में
१ -	गुरुमूर्ति/पादुका का निर्माण करवाने की	गुरुमंदिरादि
२ -	गुरुमूर्ति/पादुका के पाँच अभिषेक करने की	गुरुमंदिरादि
३ -	गुरुमूर्ति/पादुका को अष्टप्रकारी आदि पूजा करने की	गुरुमंदिरादि
४ -	गुरुमूर्ति/पादुका को प्रतिष्ठित करने की	गुरुमंदिरादि
५ -	गुरुमंदिर/गुरुकुलिका की चारों दिशा में श्रीफल बधेरने की (चार बोलियाँ)	गुरुमंदिरादि

नोंध : उपरोक्त सभी राशि गुरुमंदिर-गुरुमूर्ति/पादुका जीर्णोद्धार/नवनिर्माण खाते में ली जाती है । इसके अलावा जिनमंदिर जीर्णोद्धार एवं नवनिर्माण में भी ले जा सकते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३३ - रथयात्रा : प्रभुजी के वरघोड़े (शोभायात्रा) संबंधी बोलियाँ

	बोली	किस खाते में
१ -	प्रभुजी को रथ में बिराजित करने की	देवद्रव्य
२ -	प्रभुजी को लेकर रथ में बैठने की	देवद्रव्य
३ -	प्रभुजी के रथ के सारथी बनने की	देवद्रव्य
४ -	रथ में दायीं ओर चमर ढोलने की	देवद्रव्य
५ -	रथ में बायीं ओर चमर ढोलने की	देवद्रव्य
६ -	रथ के पीछे रामणदीया लेकर चलने की	देवद्रव्य
७ -	प्रभुजी के चार पोंखणा करने की	देवद्रव्य
८ -	इन्द्रध्वजा की गाड़ी में बैठने की	देवद्रव्य
९ -	हाथी, घोड़ा, वाहन, बग्गी आदि में सवार होने की	देवद्रव्य
१० -	चौदह स्वप्नों को ले चलने की या वाहन में बैठने की	देवद्रव्य
११ -	रथ के आगे दूध की धारा करने की (धारावनी)	देवद्रव्य
१२ -	रथ के आगे बाकला उछालने की	देवद्रव्य
१३ -	धूप, दीप, चमर आदि ले चलने की	देवद्रव्य
१४ -	रथ के आगे थाली डंका बजाने की	देवद्रव्य

सूचनाएँ :

१ - प्रभुजी के निमित्त जो भी बोली बुलवाई जाए, वह देवद्रव्य खाते में ही जाएगी ।

२ - वरघोड़े की बोलियों की आय में से वरघोड़े का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता ।

३ - वरघोड़े का खर्च कोई व्यक्ति स्वद्रव्य से लाभ ले उसमें से या फिर जनरल खर्चे हेतु जो चंदा इकट्ठा किया हो उसमें से कर सकते हैं ।

४ - प्रभुजी का रथ श्रावक अपने निजी द्रव्य से बनाए । यदि रथ देवद्रव्य से बनाया हो तो उस पर **'यह रथ देवद्रव्य की आय में से बनाया गया है ।'** ऐसा लेख स्पष्ट लिखना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ - रथ का नकरा देवद्रव्य में जमा करना चाहिए ।

६ - कोई भी व्यक्ति अपने निजी धार्मिक प्रसंग हेतु घर पर मंदिरजी की कोई भी चीज ले जाए तो उसका सुयोग्य नकरा देवद्रव्य में दे देना चाहिए ।

७ - यदि उपाश्रय की कोई चीजें अपने निजी धार्मिक प्रसंग हेतु घर पर ले गए हों तो उसका नकरा साधारण खाते में देना चाहिए ।

३४ - मंदिरजी या मंदिरजी से अन्यत्र किसी भी स्थान में परमात्मा के निमित्त जो भी बोलियाँ बुलवाई जाएँ वे सभी 'देवद्रव्य' ही गिनी जाती है ।

बोली	किस खाते में ?
१ - तीर्थमाला-इन्द्रमाला पहनने की	देवद्रव्य
२ - उपधान माला (बोली या नकरा) पहनने को एवं उपधान की नाण का नकरा	देवद्रव्य
३ - जिनमंदिर भूमिपूजन-खनन करने की	देवद्रव्य
४ - जिनमंदिर शिलास्थापना करने की	देवद्रव्य
५ - जिनमंदिर उंबरा स्थापना करने की	देवद्रव्य
६ - जिनमंदिर बारसाख (द्वारशाखा) स्थापना करने की	देवद्रव्य
७ - प्रभुजी का नगर प्रवेश, जिनालय प्रवेश या गर्भगृह प्रवेश करवाने की	देवद्रव्य
८ - प्रभुजी को पोंखने की	देवद्रव्य
९ - प्रभुजी को शुकुन देने की	देवद्रव्य
१० - प्रभुजी के प्रवेश एवं प्रतिष्ठादि समय पूज्य गुरु भगवंत का नवांगी गुरुपूजन करने की	देवद्रव्य
११ - प्रभुजी की अष्टप्रकारी आदि पूजा करने की	देवद्रव्य
१२ - प्रभुजी की मुकुट आभूषण पूजा करने की	देवद्रव्य
१३ - आरती उतारने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ - मंगल दीया करने को	देवद्रव्य
१५ - प्रभुजी को चढ़ाए गए अक्षत, फल-नैवेद्य, श्रीफल एवं बादाम आदि सभी चीजों को योग्य कीमत पर अजैनों को बेचकर आई राशि	देवद्रव्य
१६ - जिनमंदिर में प्रभुजी के सन्मुख स्थापित भंडार की आय	देवद्रव्य
१७ - भंडार में सबसे प्रथम बार द्रव्य पधराने को	देवद्रव्य
१८ - पूजा के समय थाली में फल-नैवेद्यादि ले खड़े रहने की	देवद्रव्य
१९ - जिनभक्ति निमित्त शास्त्रविहित हरएक अनुष्ठान के विभिन्न लाभों को	देवद्रव्य
२० - स्नात्रपूजा के समय प्रभु के नीचे जो सोना-चांदी के सिक्के एवं द्रव्य रखा जाता है वह	देवद्रव्य
२१ - स्नात्र में बत्तीस कोडी उछाली जाती है वह	देवद्रव्य
२२ - शांतिस्नात्र के समय कुंभ में तथा स्नात्रजल की कुंडी में जो द्रव्य पधराया जाता है वह	देवद्रव्य
२३ - जिनमंदिर में महापूजा का आयोजन हो तब महापूजा का उद्घाटन करने की	देवद्रव्य
२४ - आरती, मंगलदीये की थाली में रखा जाता द्रव्य	देवद्रव्य
२६ - वर्षगांठ-सालगिरह के दिन शिखर पर कलश की अष्टप्रकारी पूजा आदि के एवं नूतन ध्वजा चढ़ाने की	देवद्रव्य

३५ - अलग-अलग बोलियों की विगत

बोली	किस खाते में ?
१ - नूतन उपाश्रय आदि के भूमिपूजन-खनन एवं शिलास्थापन संबंधी लाभ लेने को	उपाश्रय
२ - उपाश्रय का उद्घाटन करने की	उपाश्रय
३ - उपाश्रय में कुंकुम के हस्तचिह्न(थापा) लगाने की	उपाश्रय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ - उपाश्रय में शय्यातर का चंदा इकट्ठा किया जाता है वह	उपाश्रय
५ - संघपति और तपस्वी आदि के बहुमान प्रसंग पर	
- तिलक करने की	साधारण
- हार पहनाने की	साधारण
- श्रीफल देने की	साधारण
- साफा पहनाने की	साधारण
- चुंदड़ी ओढ़ाने की	साधारण
- शॉल पहनाने की	साधारण
- सम्मान पत्र अर्पण करने की	साधारण
६ - पर्युषण में जन्मवांचन, महापूजा या अन्य प्रसंग पर संघ इकट्ठा हुआ हो तब संघ के सभ्यों के	
- दूध से चरण प्रक्षालन करने को	साधारण
- तिलक करने की	साधारण
- हार पहनाने की	साधारण
- प्रभावना देने की	साधारण
- गुलाबजल छांटने की	साधारण
७ - अंजनप्रतिष्ठा या किसी महोत्सव हेतु संघ की जाजम (शतरंजी-दरी) बिछाने की	साधारण
८ - चढ़ावा (बोली) लेनेवाले परिवार का संघ द्वारा तिलक आदि से बहुमान करने की	साधारण
९ - ऐसे प्रसंग पर संघ के मुनिमजी/मेहताजी बनने की	साधारण
१० - संघ की कुंकुमपत्री (पत्रिका) में लिखितं/सादर प्रणाम/जय जिनेन्द्र लिखने की	साधारण
११ - संवत्सरी संबंधी सकल संघ को व्याख्यान के समय मिच्छा मि दुक्कडं प्रदान करने को	साधारण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२ -पाठशाला के बालकों को किसी के हाथों इनाम
आदि वितरण करने की **पाठशाला/साधारण**

१३ -स्नात्रपूजा पढ़ाने हेतु खर्चे की राशि (सिंहासन आदि चोजों के
इस्तेमाल हेतु सुयोग्य नकरा-शुल्क देवद्रव्य में देना चाहिए) **स्नात्रपूजा**

नोंध : स्नात्रपूजा के खाते में बड़ी राशि इकट्ठी होने पर भव्य स्नात्र महोत्सव पढ़ा सकते हैं ।

१४ -आंगी-अंगरचना-रोशनी कराने हेतु खर्चे को राशि **आंगीखाता**

नोंध : जिसने जितने रुपयों की आंगी लिखाई हो, उतने रुपयों की आंगी करनी चाहिए । उसमें से द्रव्य बचाना नहीं चाहिए ।

१५ - ग्रंथ प्रकाशन/विमोचन करने की

(A) ग्रंथ ज्ञानखाते की राशि से छपा हो तो **ज्ञानखाता**

(B) ग्रंथ व्यक्तिगत द्रव्य से छपा हो तो **पुस्तक प्रकाशन में**

३६ - दीक्षा प्रसंग पर की जाती बोलियाँ

बोली	किस खाते में
१ - दीक्षार्थी को अंतिम विदाई/विजय तिलक करने की	**साधारण**
२ - दीक्षार्थी को हार पहनाने की	**साधारण**
३ - दीक्षार्थी को श्रीफल अर्पण करने की	**साधारण**
४ - दीक्षार्थी को साफा/शॉल आदि पहनाने की	**साधारण**
५ - दीक्षार्थी को सम्मान पत्र अर्पण करने की	**साधारण**
६ - दीक्षार्थी के माता-पिता का विभिन्न रूप से बहुमान करने की	**साधारण**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ - दीक्षा-उपकरणों को अर्पण करने की बोलियाँ

	पुरुषों हेतु		बहिनों हेतु	किस खाते में
१.	कंबल	१.	कंबल	साधुसाध्वी वैयावच्च
२.	कपड़ा	२.	कपड़ा	साधुसाध्वी वैयावच्च
३.	चोलपट्टा(अधोवस्त्र)	३.	साडा	साधुसाध्वी वैयावच्च
४.	पातरों की जोड़ी	४.	पातरों की जोड़ी	साधुसाध्वी वैयावच्च
५.	तरपणी-चेतना	५.	तरपणी-चेतना	साधुसाध्वी वैयावच्च
६.	आसन	६.	आसन	साधुसाध्वी वैयावच्च
७.	संथारा	७.	संथारा	साधुसाध्वी वैयावच्च
८.	उत्तरपट्टा	८.	उत्तरपट्टा	साधुसाध्वी वैयावच्च
९.	डंडा	९.	डंडा	साधुसाध्वी वैयावच्च
१०.	डंडासन	१०.	डंडासन	साधुसाध्वी वैयावच्च
११.	सूंपडी-पूंजणी	११.	सूंपडी-पूंजणी	साधुसाध्वी वैयावच्च
१२.	चरवली	१२.	चरवली	साधुसाध्वी वैयावच्च
१३.	नवकारमाला	१३.	नवकारमाला	ज्ञानखाता
१४.	पुस्तक पोथी	१४.	पुस्तक पोथी	ज्ञानखाता
१५.	दीक्षा होने के बाद नूतन मुनि/साध्वी का नूतन नाम जाहीर करने की			देवद्रव्य
१६.	गुरु भगवंत का पूजन करने की			देवद्रव्य
१७.	गुरु भगवंत को कंबल बहोराने की			देवद्रव्य

नोंध : साधु-साध्वी वैयावच्च की राशि में से विहारादि स्थलों के उपाश्रय एवं रसवती हेतु द्रव्य इस्तेमाल नहीं करना चाहिए । उस हेतु व्यक्तिगत या स्वद्रव्य इस्तेमाल करना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३७- सूत्र-ग्रंथ वाचन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - श्री कल्पसूत्र-बारसासूत्र आदि धर्मग्रंथ पूज्यों को बहोराने की	ज्ञानखाता
२ - श्री कल्पसूत्र आदि धर्मग्रंथ श्रीसंघ को सुनाने हेतु पूज्यों को विनंती करने की	ज्ञानखाता
३ - ज्ञान की पाँच वासक्षेप पूजा	ज्ञानखाता
४ - ज्ञान की अष्टप्रकारी पूजा	ज्ञानखाता
५ - ज्ञान को वरघोड़ा निकालकर घुमाने की	ज्ञानखाता
६ - चित्रदर्शन करवाने की	ज्ञानखाता
७ - ज्ञानपूजन-ग्रंथ/पुस्तक पर चढ़ाया द्रव्य	ज्ञानखाता
८ - ज्ञानदाता गुरु भगवंत का पूजन करने की	देवद्रव्य

नोंध : ज्ञानखाते का द्रव्य प्राचीन आगमादि संस्कृत-प्राकृत धर्मग्रंथों को ताड़पत्र या टिकाऊ कागज पर लिखवाने हेतु, संरक्षणार्थ छपवाने हेतु इस्तेमाल करना चाहिए । **पर प्रवचन, विवेचन साहित्य जैसा हिंदी-गुजराती आदि भाषाकीय साहित्य छपवाने में काम न लें ।**

३८ - जिनमंदिर शिलास्थापन प्रसंग की बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - नवग्रह पट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
२ - दश दिक्पालपट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
३ - अष्टमंगलपट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
४ - अग्निकोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
५ - दक्षिण कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
६ - नैऋत्य कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
७ - पश्चिम कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
८ - वायव्य कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
९ - उत्तर कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० - ईशान कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
११ - पूर्वी कोण की शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
१२ - मध्य में मुख्य कुर्म शिला स्थापित करने की	देवद्रव्य
१३ - आरती	देवद्रव्य
१४ - मंगल दीया	देवद्रव्य
१५ - शांतिकलश	देवद्रव्य
१६ - पू. गुरुभगवंत का गुरुपूजन करने की	देवद्रव्य

उपरोक्त सभी राशि देवद्रव्य में जाती है । उसमें से प्रसंग का कोई खर्चा नहीं किया जा सकता ।

नोंध : उपाश्रय, पाठशाला, आयंबिल भवन, धर्मशाला आदि हेतु शिला स्थापन हो तो उसमें बोली जाती शिलाओं की बोलियाँ उन-उन खाते में जा सकती है ।

(उदा. उपाश्रय की शिला की उपाश्रय खाते में । केवल गुरुमंदिर हेतु शिला स्थापन हो तो उसमें बोली जाती शिलाओं की बोलियाँ गुरुमंदिर निर्माण-जीर्णोद्धार खाते में जा सकती हैं एवं जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में भी जा सकती हैं ।)

विशेष : इस मौके पर जो पट्टक पूजन, आरती, मंगल दीया, शांतिकलश एवं गुरुपूजनादि होते हैं, उनकी आय देवद्रव्य में हो जाती है ।

३९ - लघुशांतिस्नात्र प्रसंग की बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - कुंभ स्थापना करने की	देवद्रव्य
२ - दीपक स्थापना करने की	देवद्रव्य
३ - जवारारोपण करने की	देवद्रव्य
४ - नवग्रह पट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
५ - दशदिक्पालपट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
६ - अष्टमंगल पट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
७ - सिंहासन में प्रभु की स्थापना करने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ - गोलो (हांडो) स्थापना करने को	देवद्रव्य
९ - शांतिदेवी की स्थापना करने की	देवद्रव्य
१० - दीपकों की स्थापना करने की	देवद्रव्य
११ - दायीं ओर २७ बार घी पूरने की	देवद्रव्य
१२ - बायीं ओर २७ बार घी पूरने की	देवद्रव्य
१३ - सुवर्ण कलश से २७ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१४ - वृषभ कलश से २७ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१५ - १०८ नलिकाओं वाले कलश से २७ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१६ - चांदी के कलश से २७ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१७ - प्रभुजी को २७ बार केशर पूजा करने की	देवद्रव्य
१८ - प्रभुजी को २७ बार पुष्प पूजा करने की	देवद्रव्य
१९ - प्रभुजी के सामने थाली में पेढा एवं रुपया - श्रीफल लेकर खड़े रहने की	देवद्रव्य
२० - १०८ दीपकों की आरती करने की	देवद्रव्य
२१ - मंगल दीया करने की	देवद्रव्य
२२ - शांतिकलश करने की	देवद्रव्य
२३ - शांतिजल की धारावनी करने की	देवद्रव्य

नोंध : उपरोक्त सभी राशि देवद्रव्य में ही जाती है । इस राशि में से पूजन का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता ।

४० - बृहत् शांतिस्नात्र (अष्टोत्तरी) समय की बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - कुंभ स्थापना करने की	देवद्रव्य
२ - दीपक स्थापना करने की	देवद्रव्य
३ - जवारारोपण करने की	देवद्रव्य
४ - नवग्रह पट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ - दशदिक्पालपट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
६ - अष्टमंगल पट्टक पूजन करने की	देवद्रव्य
७ - सिंहासन में प्रभु की स्थापना करने की	देवद्रव्य
८ - गोली (हांडी) स्थापना करने की	देवद्रव्य
९ - दीपकों की स्थापना करने की	देवद्रव्य
१० - दायीं ओर १०८ बार घी पूरने की	देवद्रव्य
११ - बायीं ओर १०८ बार घी पूरने की	देवद्रव्य
१२ - सुवर्ण कलश से १०८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१३ - वृषभ कलश से १०८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१४ - १०८ नलिकाओं वाले कलश से १०८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१५ - चांदी के कलश से १०८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१६ - प्रभुजी की १०८ बार केशर पूजा करने की	देवद्रव्य
१७ - प्रभुजी की १०८ बार पुष्प पूजा करने की	देवद्रव्य
१८ - प्रभुजी के समक्ष थाली में पेढा, रुपया एवं श्रीफल थाली में ले खड़े रहने की	देवद्रव्य
१८ - १०८ दीपकों को आरती करने की	देवद्रव्य
१९ - मंगल दीया करने की	देवद्रव्य
२० - शांतिकलश करने की	देवद्रव्य
२१ - शांति जल की धारावनी करने की	देवद्रव्य

नोंध : उपरोक्त सभी राशि देवद्रव्य में ही जाती है । इस राशि में से पूजन का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४१ - प्रभुजी को १८ अभिषेक करते समय बुलवाई जाती बोलियाँ

बोली	किस खाते में ?
१ - मूलनायक भगवान आदि जितने भी भगवान हों उन्हें १८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
२ - स्नात्र के सिंहासन में बिराजित प्रभु को १८ बार अभिषेक करने की	देवद्रव्य
३ - पेढा, श्रीफल, रुपया थाली में लेकर १८ बार प्रभु के सामने खड़े रहने की	देवद्रव्य
४ - प्रभु को चंद्र दर्शन करवाने की	देवद्रव्य
५ - प्रभु को सूर्य दर्शन करवाने की	देवद्रव्य
६ - प्रभु को घी का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
७ - प्रभु को दूध का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
८ - प्रभु को दही का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
९ - प्रभु को ईक्षुरस का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
१० - प्रभु को सर्वोषधि जल का अभिषेक करने की	देवद्रव्य
११ - प्रभु की अष्टप्रकारी पूजा करने की	देवद्रव्य
१२ - १०८ दीपकों की आरती करने की	देवद्रव्य
१३ - मंगल दीपक करने की	देवद्रव्य
१४ - शांतिकलश करने की	देवद्रव्य

नोंध : उपरोक्त सभी राशि देवद्रव्य में ही जाती है । इस राशि में से पूजन का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४२ - गुरुमूर्ति/पादुका को ५ अभिषेक करते समय बुलवाई जाती बोलियाँ

१ - गुरुमूर्ति/पादुका का प्रथम अभिषेक करने को	गुरुमंदिरादि
२ - गुरुमूर्ति/पादुका का द्वितीय अभिषेक करने की	गुरुमंदिरादि
३ - गुरुमूर्ति/पादुका का तृतीय अभिषेक करने को	गुरुमंदिरादि
४ - गुरुमूर्ति/पादुका का चतुर्थ अभिषेक करने की	गुरुमंदिरादि
५ - गुरुमूर्ति/पादुका का पंचम अभिषेक करने की	गुरुमंदिरादि
६ - गुरुमूर्ति को अष्टप्रकारी पूजा करने की	गुरुमंदिरादि

नोंध : उपरोक्त सभी राशि गुरुमंदिर गुरुमूर्ति-पादुका जीर्णोद्धार/नवनिर्माण खाते में ली जाती है । इसके अलावा जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण में भी ले जा सकते हैं ।

४३ - सिद्धचक्र आदि पूजन प्रसंग पर बुलवाई जाती बोलियाँ

परमात्मा की भक्ति हेतु जो भी पूजा-पूजन जिनमंदिर में या अन्यत्र कहीं भी पढ़ाए हों उन पूजा-पूजनों में बुलवाई गई सभी बोलियाँ प्रभुनिमित्तक ही होने से उनकी आय **'देवद्रव्य'** में ही ले जानी चाहिए । इस आय में से उन पूजा-पूजन का कोई भी खर्चा नहीं किया जा सकता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. संघ संचालन मार्गदर्शन

परिशिष्ट-१

श्री श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपागच्छ संघ में सर्वमान्य ग्रंथ 'द्रव्यसप्ततिका' के आधार पर कुछ समझने योग्य तथ्य

- धार्मिक द्रव्यों का वहोवट करने के लिए १ - मार्गानुसारी गृहस्थ, २ - सम्यग्दृष्टि श्रावक तथा ३ - देशविरतिधर श्रावक अधिकारी हैं । सर्वविरतिधर साधु भगवंत भी विशिष्ट संयोग - कारण उपस्थित हों तब धर्मद्रव्य-रक्षा आदि के अधिकारी हैं ।
- कर्मादान (हिंसक धंधे-फैक्ट्री-शेयर मार्केट आदि में निवेश) इत्यादि अयोग्य कार्यों का त्याग करके, उत्तम व्यापार आदि के द्वारा ही देवद्रव्यादि धर्मद्रव्यों की वृद्धि करनी चाहिए । श्रावकों को ब्याज़ पर भी देवद्रव्य नहीं देना चाहिए । दूसरों को देते समय भी अधिक मूल्यवान अलंकार रखकर ही देना चाहिए ।
- जिनमंदिर आदि धर्मस्थानों की व्यवस्था, रखरखाव-देखभाल तथा संचालन करने वालों को 'वैयावच्च' नामक तप का लाभ प्राप्त होता है ।
- द्रव्यसप्ततिका कहती है कि - जिस हेतु से जो द्रव्य आता है, उसे उसी हेतु में - उसी कार्य में लगाना चाहिए । यह एक उत्सर्ग नियम (राजमार्ग जैसा नियम) है । इसमें अपवाद स्वरूप नियम ग्रंथकार ने बताए हैं । अपवाद का अवसर होने पर ही अपवाद का प्रयोग किया जा सकता है । गीतार्थ गुरुवर अपवाद के ज्ञाता होते हैं । अपवाद सेवन पूर्व गीतार्थ गुरुवरों की आज्ञा प्राप्त करना अनिवार्य है ।

  अपवाद का अवसर न होते हुए भी यदि अपवाद मार्ग का आचरण किया जाता है तो वह अपवाद नहीं रहता, बल्कि उन्मार्ग बन जाता है ।
- अपने घर का दीपक प्रभु दर्शन के हेतु अगर मंदिर पर ले आये हों तो वह दीपक देवद्रव्य नहीं बनता है । नैवेद्य चढ़ाने के लिए थाली-बर्तन मंदिर लाए हों तो वे भी देवद्रव्य नहीं बनते । आंगी के हेतु अपने अलंकार शुद्ध करके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु को चढ़ाने मात्र से देवद्रव्य नहीं बनते । श्रावक उन्हें पुनः अपने उपयोग में ले सकता है । देव की भक्ति में जो समर्पित किया जाता है, वही देवद्रव्य बनता है ।

- जिनालय की छत की परनाली से आए हुए पानी का उपयोग श्रावक अपने या दूसरों के कार्य में न करे, क्योंकि देव को अर्पित भोगद्रव्य की ही तरह ऐसे द्रव्यों का उपभोग भी दोषदायक है ।
- देवद्रव्य के वाद्य आदि उपकरण गुरुमहाराज या संघ के सम्मुख (स्वागत यात्रा में) न बजाएं, उनका उपयोग न करें । अगर किसी विशेष कारण से बजाना-प्रयुक्त करना ही पड़े तो अधिक नकरा (मूल्य) देकर ही बजाएं-प्रयुक्त करें ।
- देवद्रव्य के उपकरण नकरा दिए बिना अपने कार्य में उपयोग में लेनेवाला दुःखी होता है ।
- ज्ञानद्रव्य के कागज़, कलम आदि उपकरण साधु-साध्वीजी भगवंतों के लिए उपयोग में लिए जा सकते हैं । श्रावक उनका उपयोग नहीं कर सकते । ज्ञानद्रव्य खर्च करके लाए गए या प्रकाशित किए गए धार्मिक पुस्तक भी सुयोग्य 'नकरा' दिए बिना श्रावक नहीं पढ़ सकते ।
- ज्ञान द्रव्य से निर्मित, जीर्णोद्धार किए गए या खरीदे गए मकान, अलमारियाँ, मेज, कागज, ताडपत्र आदि सामग्री भी केवल पंचमहाव्रत धारी साधु-साध्वीजी भगवंतो को ज्ञान-अध्ययन हेतु अर्पित कर सकते हैं ।

  इसी कारण से, ज्ञान द्रव्य से बने मकानों, भंडारों, ज्ञानमंदिरों में साधु-साध्वीजी केवल ज्ञानाध्ययन हेतु विराम कर सकते हैं । वहाँ शयन (संथारा), भोजन (गोचरी) पानी, आदि क्रिया नहीं कर सकते ।
- ज्ञानद्रव्य जैन पंडित या श्रावक को नहीं दिया जा सकता, अजैन (जैनेतर) अध्यापक को दिया जा सकता है । परंतु अध्यापक यदि श्रावक-श्राविकाओं को भी पढ़ाता हो तो उसे ज्ञानद्रव्य नहीं दे सकते ।
- धार्मिक पाठशालाएँ कि जिनमें श्रावक-श्राविकाएँ या/और उनकी संतानें पढ़तो हों तो उसका खर्च, उसके जैन-अजैन अध्यापक-अध्यापिका की तनखा, पाठ्यपुस्तकों का खर्च एवं/या इनाम-यात्रादिक खर्चा भी ज्ञानद्रव्य में से नहीं कर सकते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

- ज्ञानद्रव्य के इस्तेमाल में श्रावक को देवद्रव्य के इस्तेमाल जितना भारी पाप लगता है । अतः शास्त्रीय मर्यादा व भेदरेखा समझकर बर्ताव करें ।
- साधारण द्रव्य भी संघ ने दिया हो तो ही श्रावक के लिए स्वीकार्य हो सकता है ।
- प्रश्नोत्तर समुच्चय, आचारप्रदीप, आचारदिनकर तथा श्राद्धविधि आदि ग्रंथों के अनुसार श्री जिनेश्वर भगवान की अंगपूजा की ही तरह श्री गुरुमहाराज की अंगपूजा तथा अग्रपूजा सिद्ध होती है । गुरुपूजन का यह द्रव्य गुरु से भी ऊपर के क्षेत्र जिनमंदिर जीर्णोद्धार तथा नवनिर्माण क्षेत्र में ही प्रयुक्त करना चाहिए । प्रभु की अंगपूजा में यह द्रव्य खर्च न करें ।
- पंचमहाव्रतधारी साधु-साध्वियों का किसीने 'न्यूंछना' 'द्रव्य-ओवारणा' किया हो तो वह द्रव्य पौषधशाला - उपाश्रय के जीर्णोद्धार-मरम्मत या निर्माण में लगा सकते हैं । यह द्रव्य श्रावकों को नहीं दे सकते । याचकों को भी नहीं दे सकते ।
- धर्मस्थान में खर्च करने के लिए घोषित किया गया द्रव्य अलग ही रखें । तीर्थयात्रा के लिए रकम निकाली हो तो गाड़ीभाड़ा, निवास, भोजन आदि का खर्च इसमें से न करें । यह महापाप है ।
- किसी ने धर्म कार्य में खर्च करने के लिए कुछ धन दिया हो तो उसका उपयोग उस व्यक्ति के नाम की स्पष्ट घोषणा के साथ ही किया जाना चाहिए ।
- माता-पिता आदि स्वजनों की अंतिम अवस्था के समय सुकृत में खर्च करने के लिए जितने भी धन की घोषणा की गई हो, उसे संघ के समक्ष समय मर्यादा पूर्वक घोषित कर देना चाहिए तथा तुरंत वह धन उनके नाम से ही खर्च कर देना चाहिए ।
- धर्म के उपकरण इधर-उधर गलत स्थान में रखने से श्रावक को बहुत बड़ा दोष लगता है, इसलिए धर्मोपकरणों को सम्हाल कर रखना चाहिए तथा कार्य पूर्ण होने पर सुयोग्य स्थान पर रख देना चाहिए ।
- देवद्रव्य आदि की रक्षा के कार्य में - शक्ति होते हुए भी उपेक्षा करने वाले साधु भी अनंत संसारी बन जाते हैं, अतः उपेक्षा नहीं करनी चाहिए ।
- अपने प्राणों को न्यौछावर करके भी शासन की आशातना को रोकना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

- शास्त्रोक्त मार्गों से देवद्रव्य की वृद्धि तथा रक्षा करनेवाला अपना संसार सीमित करता है तथा तीर्थंकर गोत्र का बंध भी करता है, जबकि देवद्रव्य का भक्षण, नाश तथा उपेक्षा करनेवाला यावत् अनंत संसारी बनता है ।
- अज्ञानवश भी अगर देवद्रव्य का उपभोग हुआ हो तो तुरंत गीतार्थ गुरु भगवंतों के पास आलोचना - प्रायश्चित्त करना चाहिए ।
- देवद्रव्य का अनुचित उपयोग - उपभोग करनेवाले गाँव-शहर शोभाविहीन, निर्धन, भाग्यहीन, व्यापारहीन और तुच्छ बन जाते हैं ।
- देवद्रव्य तथा परस्त्री का उपभोग करनेवाला सात बार सातवीं नरक में जाता है, ऐसा प्रभु श्री महावीर ने श्री गौतमस्वामीजी से कहा था ।
- जिस घर में देवद्रव्य का उपभोग हुआ हो, उस घर की कोई भी वस्तु श्रावक को अपने उपयोग में नहीं लेनी चाहिए ।
- वेशधारी, आचार-विचार भ्रष्ट, शिथिलाचारी साधु-साध्वी के पास कोई माल-मिलक्त इकट्ठी हुई मिले या उनके कालधर्म के बाद भी उनकी कोई पूंजी मिले तो वह द्रव्य अत्यंत अशुद्ध होने से जीवदया में खर्च करना चाहिए ।
- तीर्थंकर की आज्ञा का भंग होता देखकर भी जो मनुष्य चुप रहते हैं, वे अविधि की अनुमोदना करनेवाले हैं । इससे उनके व्रत-महाव्रत का लोप हो गया है, ऐसा समझना चाहिए ।
- धर्म की निंदा करनेवाले को एवं करानेवाले को भवांतर में धर्म प्राप्ति नहीं होती ।
- भावना स्वयं को मोक्ष दिलाती है, जब कि प्रभावना तो स्वयं के साथ दूसरों को भी मोक्ष दिलाती है । जैनशासन की प्रभावना करनेवाला जीव तीर्थंकर बनता है ।
- शास्त्र में कहा है कि - **'गुरु-सक्खिओ धम्मो** । धर्म गुरु की साक्षी में करना होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-२

जिनमंदिर विषयक कुछ कार्य :
जो संघ के अग्रणियों को करने हैं

'द्रव्यसप्ततिका' ग्रंथ में जिनमंदिर का ध्यान रखनेवाले ट्रस्टी - कार्यवाहक - प्रबंधक अग्रणि सुश्रावक हेतु कुछ कार्य बताए गए हैं :

१ - जिनमंदिर का चूना आदि पदार्थों से संस्कार करना, रंगरोगान करवाना ।

२ - जिनालय तथा उसके आसपास के प्रदेश को स्वच्छ करवाना ।

३ - पूजा के उपकरण नए बनवाना, उन्हें व्यवस्थित रखना, उनका हिसाब रखना ।

४ - प्रभु प्रतिमाजी एवं परिकर की निर्मलता को बनाए रखना ।

५ - महापूजा आदि में दीपक की रोशनी आदि के द्वारा शोभा-वृद्धि करना ।

६ - अक्षत, नैवेद्य, फल आदि निर्माल्य वस्तुओं की सुरक्षा की व्यवस्था करना । निर्माल्य वस्तुओं को जैनेतरों में सुयोग्य मूल्य में बेचकर प्राप्त रकम देवद्रव्य में जमा करना । प्रभु की आंगी में प्रयुक्त वरक - बादला आदि को रीफाईनरी में गलवाकर प्राप्त सोना-चांदी को देवद्रव्य में जमा करवाना ।

७ - केसर-चंदन, दूध-घी आदि पूजा योग्य वस्तुएँ प्राप्त कर उनका संचय करना ।

८ - देवद्रव्य एवं धर्मादा द्रव्य की वसूली समय पर करना ।

९ - वसूल किया गया द्रव्य सुरक्षित स्थान में रखना ।

१० - सभी द्रव्य एवं खातों का हिसाब स्पष्ट और साफ़ लिखवाना ।

११ - भंडार की आय, खर्च एवं सुरक्षा का प्रबंध करना ।

१२ - भंडार, सुरक्षा-स्थान आदि की सुरक्षा के लिए चौकीदार आदि की व्यवस्था करना ।

१३ - साधर्मिक जन, गुरुभगवंत, ज्ञानभंडार तथा धर्मशाला आदि की उचित पद्धति से देखभाल करने में अपनी शक्ति का उपयोग करना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ - ऋद्धिसंपन्न श्रावक, सिद्धाचल आदि महातीर्थों को एवं अपने गाँव-शहर के आसपास स्थित तीर्थों की उपरोक्त विधि से रक्षा करें, उनका उद्धार करें तथा उन पर लगाए गए कर - Tax दूर करवाएं ।

ये तथा ऐसे ही अन्य भी कार्य करने चाहिए । जैसे कि -

१ - जिनालय में Electricity-Lights का उपयोग न किया जाए । अनेक प्राचीन तीर्थ और प्रभावपूर्ण जिनमंदिरों में बीजली की बत्तियों का उपयोग नहीं किया जाता ।

२ - दीपकों को काँच के दीपपात्र आदि में रखा जाए, जिससे त्रस जीवों की रक्षा हो सके ।

३ - जिनमंदिरों के शिखर पर कायमी मंच न बनाए जाएं । यह शिल्प का दोष माना गया है । इससे संघ का विकास रूँध जाता है ।

४ - अंगलूंछन-पाटलूंछन (पोंछने के) वस्त्र धोने के लिए अलग-अलग व्यवस्था की जाए ।

५ - स्नात्रजल को सुखा देने के लिए बड़े, जयणा का पालन हो सके ऐसे, जलपात्र बनाए जाएं । उसमें निगोद-त्रस जीवों की उत्पत्ति तथा नाश न हो उसका ध्यान रहे ।

६ - जिनमंदिरों के शिखर पर वृक्ष उग आते हैं, जो मंदिर को नुकसान पहुँचाते हैं । ऐसा नियमित रूप से साफ-सफाई एवं रख-रखाव के अभाव में होता है, अतः उन्हें यतनापूर्वक दूर करें ।

७ - निर्माल्य पुष्पों को छाँव में सुखाकर थोड़े-थोड़े दिनों के अंतराल पर किसी का पैर न पड़े ऐसे निर्जन स्थान में विसर्जित करना आदि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-३

धर्म-संस्थाओं के संचालकों को महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन !

१ - धर्मक्षेत्रों का संचालन शास्त्रोक्त नीति के अनुसार ही करें ।

२ - भगवान के सच्चे पुजारी तो श्रावक-श्राविका ही होते हैं । अपने भगवान की पूजा का सारा कार्य यथासंभव स्वयं ही करें ।

३ - अन्य पुजारी को अगर रखना ही पड़े तो केवल मंदिर की रक्षा, सफाई, सार-संभाल आदि बाह्य कार्यों पर ध्यान देने के लिए ही रखा जाए ।

४ - जिनमंदिर में मुनिमों की प्रायः आवश्यकता ही नहीं होती । प्रौढ़जन, निवृत्त लोग ही वहाँ जा कर हिसाब-किताब लिखने का, देखने का, जाँचने का कार्य कर सकते हैं ।

५ - वैज्ञानिक विकास के विविध रंगों से प्रभावित हो जाए ऐसा आधुनिकतावादी व्यक्ति हमारा ट्रस्टी या संचालक नहीं होना चाहिए ।

६ - स्वामिवात्सल्य में रात्रिभोजन, द्विदल भक्षण, बरफ-आइस्क्रीम, बाज़ार में बनीं चीज़ें, बुफे भोजन जैसे रीति-रिवाज़ों को न अपनाएं । याद रहना चाहिए कि हमारे यहाँ खाने की नहीं, भावपूर्वक खिलाने की महिमा थी ।

७ - तीर्थस्थानों में तथा धर्मस्थानों में नवरात्रि के गरबाओं का खेल न हो, जन्माष्टमी पर जुआ खेलना, आशातनाएँ, अभक्ष्य आहार, अपेयपान न हो और विडीओ, टी.वी., ट्रांजिस्टर, समाचार पत्र-पत्रिकाओं आदि के द्वारा विलासिता-विभत्सता, अश्लिलता को प्रोत्साहन न दिया जाए, इसके लिए चुस्त प्रबंध किया जाए ।

८ - धर्मस्थान का खाता जिन बैंकों में हो, वहाँ ट्रस्टी अपना व्यक्तिगत खाता न रखें । धार्मिक खातों की F.D. तथा जमा रकम पर स्वयं क्रेडिट प्राप्त न करें । यह महान दोष है ।

९ - स्वयं बोली बोले तो तुरंत रकम भर दें । तुरंत रकम भरने के लिए पहले से घोषणा कर दें । इसके लिए बोर्ड भी लगा दिया जाए तथा औरों को भी बोली का द्रव्य तुरंत भरने के लिए प्रोत्साहित करें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० - निश्चित समय मर्यादा में चढ़ावे की रकम न भरी जाए तो साहुकारी दर से सूद लेने का प्रबंध किया जाए । ऐसा अगर नहीं किया जाता है तो देवद्रव्य आदि धर्मद्रव्य, चढ़ावा बोलने वालों के घर-व्यापार में इस्तेमाल हो जाता है । इससे वे धर्मद्रव्य के भोगी बनते हैं ।

११ - प्रत्येक ट्रस्टी या संचालक के ऊपर एक गीतार्थ सद्गुरु होने चाहिए, जिनकी शास्त्रानुसारी आज्ञा-मार्गदर्शन उसके लिए सर्वस्व हो ।

१२ - हमारा ट्रस्टी सम्यक्त्वपूर्ण बारहों व्रतों का पालन करनेवाला हो तो 'सोने में सुहागा' वाली बात होगी । सम्यक्त्वधारी श्रावक - १ श्री वीतरागदेव, २ - निर्ग्रंथ गुरु और ३ - जिनाज्ञामूलक जीवदयाप्रधान जैन धर्म : इन तीनों के अतिरिक्त अन्य किसी भी रागी, द्वेषी, अज्ञानी देव-गुरुओं को एवं हिंसक धर्मों को न माने । अनिवार्य संयोगों के बिना उनके स्थानों में न जाए ।

१३ - ट्रस्टी प्रतिदिन जिनमंदिर जाकर दर्शन कर के स्वद्रव्य से पूजा-भक्ति करें ।

१४ - वह जिनमंदिर जाएं तब प्रथम जिनमंदिर का काम, स्वच्छता आदि पर ध्यान दें । प्रतिमाजी कितनी हैं, सिद्धचक्र कितने हैं, कितने अलंकार ठीक हैं, यह सब जाँच कर उनकी सुरक्षा का प्रबंध करें ।

१५ - ट्रस्टी जिनवाणी-व्याख्यान में प्रथम पंक्ति में बैठें । गुरुवंदन, गुरुपूजन, ज्ञानपूजन करने के बाद ही वे प्रवचन सुनें । व्याख्यान में कही गई बातों पर मनन करें तथा यथासंभव उसे व्यवहार में अपनाएं ।

१६ - ट्रस्टी बनते ही सर्व प्रथम गीतार्थ भवभीरु गुरु के पास भव-आलोचना लेने का कार्य करना हितावह है । अपनी शक्ति-भक्ति आदि का पूरा ब्यौरा गुरुदेव को देना आवश्यक है, जिससे वे उसकी भूमिका के अनुसार कार्य सौंप सकें ।

१७ - ट्रस्टी के जीवन में सात व्यसन तो होने ही नहीं चाहिए । १ - शराब, २ - मांसाहार, ३ - जुआ, ४ - शिकार, ५ - परस्त्रीगमन, ६ - वेश्यागमन और ७ - चोरी ।

१८ - सरकारी कायदे-कानून आदि का ज्ञान होना, यह ट्रस्टी की विशेष योग्यता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१९ - विविध सरकारी टैक्स, ओक्ट्रोय आदि की चोरी ट्रस्टी स्वयं न करें । धर्मसंस्थाओं को भी ऐसे कार्य करने की प्रेरणा न दें ।

२० - हरेक ट्रस्टी के लिए यह आवश्यक है कि वह कम से कम एक बार ज्ञानी गुरु के पास बैठकर 'द्रव्यसप्ततिका' ग्रंथ का अनुवाद पढ़ लें । धार्मिक एवं धर्मादा द्रव्यों की व्यवस्था के लिए यह संघमान्य-प्रामाणिक ग्रंथ होने के कारण उसमें दी गई सूचनाओं के अनुसार द्रव्यव्यवस्था करने का प्रबंध करें ।

२१ - ट्रस्टी को 'ट्रस्टडीड' का अभ्यास अच्छी तरह से करना चाहिए । उसमें अगर कहीं कोई शास्त्रविरोधी बातें लिख दी गई हों तो उचित उपायों के द्वारा उन्हें सुधारना चाहिए । डीड में 'द्रव्यसप्ततिका' का उल्लेख खास तौर से हो इसका प्रावधान करना चाहिए ।

२२ - कायमी फंडों के चक्कर में पड़ने के बजाय प्रति वर्ष की आय के स्रोत निर्मित करना अच्छा है । उदाहरण के तौर पर जिनमंदिर के लिए अष्टप्रकारी पूजा-द्रव्य का लाभ लेने के लिए बारह महीनों की बोली बोलकर बोर्ड पर एक वर्ष के लिए लाभ लेनेवाले का नाम लिखने से प्रायः वर्ष का खर्च निकल जाता है । इसी प्रकार साधारण क्षेत्र के लिए भी चढ़ावा या नकरा तय करके, नाम लिखे जा सकते हैं । प्रति वर्ष की ३६० तिथियाँ भी निश्चित की जा सकती हैं ।

२३ - वर्ष दरम्यिान संचालन में अनजाने भी किसी क्षेत्र के द्रव्य में कुछ गड़बड़ हुई हो तो उससे बचने के लिए ट्रस्टी सभी खातों में अपना व्यक्तिगत-थोड़ा ही सही - द्रव्य अवश्य लिखाएं । किसी प्राप्त लाभ के बदले में लिखाया गया यह द्रव्य न हो ।

२४ - जिनमंदिर आदि धर्मस्थानों के नौकर-कर्मचारीवर्ग के प्रति ट्रस्टी माँ-बाप के जैसा ही व्यवहार करें । काम के विषय में पूर्ण सावधानी की अपेक्षा रखें । साथ ही अच्छे कार्य की कदर करना भी आना चाहिए ।

२५ - संघ में क्लेश का वातावरण उपस्थित न हो इसका ध्यान रखें । फिर भी क्लेश हो जाए तब दिमाग को ठंडा रखकर समाधान प्रस्तुत करें । क्लेश निवारण हेतु किसी गीतार्थ सद्गुरु का शास्त्रीय मार्गदर्शन लेने के लिए लिखित प्रस्ताव लाकर कार्य करना हितावह है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२६ - अपने संघ में, तीर्थ में सुविहित, शुद्ध प्ररूपक, उद्यतविहारी, साधु-साध्वीजी भगवंतों का आगमन, स्थिरता, चातुर्मास, प्रवचन आदि होते रहें, इसके लिए प्रयत्नशील रहें ।

२७ - श्रावक जीवन का उत्तम ज्ञान प्राप्त करने के लिए ट्रस्टी के लिए 'श्राद्धविधि' तथा 'धर्मसंग्रह' भाग-१ का पुनः पुनः पठन-मनन करना अत्यंत आवश्यक है । साधुभगवंतों की समाचारी का ज्ञान प्राप्त करने के लिए धर्मसंग्रह भाग-२ का गुरुनिश्रा में पठन करना चाहिए ।

२८ - बहुमती-सर्वानुमती के चक्कर में न पड़ें । शास्त्रमती से चलने का निर्णय करें । शास्त्र सर्वज्ञ के हैं । सर्वज्ञ ही हमारा सच्चा हित कर सकते हैं, इसलिए शास्त्रों को प्रधान बनाकर प्रबंध करें ।

२९ - यथासंभव चुनाव की पद्धति को टालें । इसके अपार अनिष्ट हैं । संघ द्वारा या ट्रस्ट-मंडल द्वारा ही नूतन संचालकों का चयन किया जाना चाहिए । गीतार्थ गुरुभगवंतों से उस चयन का अनुमोदन करवाना अथवा यों कहें कि चयन प्रक्रिया में उनका मार्गदर्शन एवं परामर्श प्राप्त करना संघ के उज्ज्वल भविष्य के लिए हितावह है ।

३० - संघ की वार्षिक आवश्यकता के मद्देनजर आवश्यक रकम रखकर, शेष सारी रकम सुयोग्य क्षेत्रों में इस्तेमाल कर देनी चाहिए । इस काल में यह सब से अधिक आवश्यक बात है । अति संग्रह विकास को जन्म देता है ।

३१ - जिस स्थान में रकम खर्च करनी हो वहाँ की व्यवस्था, क्षमता, संचालन आदि का अनुमान कर लेना चाहिए । अपनी व्यक्तिगत रूप से जाँच-परख करने के पश्चात् ही रकम दान में देनी चाहिए । ग्राहक संघ अगर सक्षम हो तो रकम लोन के रूप में भी दी जा सकती है ।

३२ - सोमपुरा-शिल्पियों के भरोसे पर बांधकाम, निर्माण, जीर्णोद्धार आदि कार्य नहीं किए जाने चाहिए । जैन संघ के निःस्वार्थ कर्मठ कार्यकर्ता, अग्रणिजनों की सलाह लेनी चाहिए; जिस से संघ के द्रव्य का दुर्व्यय न हो ।

३३ - निर्माण-जीर्णोद्धार आदि कार्यों की ट्रस्टी स्वयं देखभाल करें । कोन्ट्राक्टरों के भरोसे काम करने में बहुत परेशानी तथा अनावश्यक रूप से धन का दुर्व्यय-खर्च होने की संभावना रहती है । जयणा का पालन भी नहीं होता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३४ - जीवदया का द्रव्य संग्रह करके न रखें । तुरंत जीवों को छुड़वाने के लिए, पांजरापोलों में पशुओं के घासचारे आदि के लिए भेज दिया जाना चाहिए, अन्यथा अंतराय का पाप बंधता है ।

३५ - अनुकंपा के लिए भी शास्त्रीय मार्गों का ज्ञान प्राप्त करना बहुत आवश्यक है । इस द्रव्य के द्वारा हिंसा को उत्तेजना देनेवाले अस्पताल आदि को प्रोत्साहन न मिले, इसकी ओर ध्यान रखा जाए ।

३६ - हमारे संघ में आयोजित प्रत्येक महत्त्वपूर्ण प्रसंग पर जीवदया तथा अनुकंपा के लिए कोई न कोई ठोस कार्य हो इसकी ओर लक्ष्य रखना चाहिए । ये दोनों कार्य धर्मप्रभावना के अंग हैं ।

३७ - पाँच प्रतिक्रमण, जीवविचार तथा नौ-तत्त्वों का अर्थसहित अभ्यास कर लेना यह ट्रस्टी के लिए धर्मक्षेत्र को समझने, स्व-पर हित के लिए उपयोग करने के लिए अत्यंत आवश्यक बात है । साथ-साथ श्राद्धविधि भी अवश्य पढ़ लें ।

३८ - साधु संस्था में प्रविष्ट शिथिलाचार को ट्रस्टी प्रोत्साहन न दें । उचित उपाय करके विवेकपूर्वक शिथिलाचार को रोकने का प्रयास करें । साधु-साध्वीजी की निंदा स्वयं न करें और कोई करे तो न सुनें ।

३९ - ट्रस्टी अर्थात् संघ का सेवक । मेरा अहोभाग्य है कि मुझे संघ की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ, ऐसा प्रत्येक ट्रस्टी मानें ।

४० - जिनाज्ञानुसार संचालन करने से यावत् तीर्थंकर नामकर्म का बंध होता है तथा जिनाज्ञा से विपरीत संचालन करने से अनंत संसार परिभ्रमण होता है, इसलिए ध्यानपूर्वक, जिनाज्ञा को समझकर उसका अनुसरण करें ।

४१ - साधु-साध्वी को देखते ही ट्रस्टी का मस्तक झुक जाए । उनकी वैयावच्च में वह रुचि लें । उनकी संयमयात्रा और शरीरस्वास्थ्य सुखरूप रहे, इसके प्रति वह ध्यान दें ।

४२ - सारे हिसाब-किताब आईने की तरह स्वच्छ रखें । कोई भी आकर देखना-पूछना चाहे तो संपूर्ण धैर्य के साथ ट्रस्टी उन्हें बताए और उनके मन की जिज्ञासा को तृप्त करें । किसी के साथ अविनय से क्षुद्र व्यवहार करे ही नहीं ।

४३ - छोटे बालक से भी अगर हितकर जानकारी मिले तो प्रेम सहित उसको स्वीकार करें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४४ - ट्रस्टियों की मीटिंगों में वह अवश्य उपस्थित रहें । जिनाज्ञानुसारी कार्य में वह हमेशा सहयोग दें । आज्ञा विरुद्ध कार्य को समझदारी तथा विवेक से रोकें ।

४५ - जो सच हो, वही मेरे लिए स्वीकार्य, मेरी ही बात सच है ऐसा न मानें । अपनी बात मनवाने का कदाग्रह न रखें । मान-कषाय, अहंकार - Ego के आधीन होकर संघ के कार्यों को बिगाड़ें नहीं ।

४६ - भगवान के धाम में कहीं सिगरेट-बीड़ी का उपयोग न होने दें । मावा, पान-मसाला, सुपारी इत्यादि न स्वयं खाएं, न दूसरों को खिलाएं । ऐसे खान-पान को रोकें । कार्यालय में बैठकर चाय-काफी या नाश्ता करना शोभास्पद नहीं है ।

४७ - शासन के किसी भी कार्य के लिए ट्रस्टी, अपनी शक्ति हो तो स्वद्रव्य खर्च करके ही लाभ लें । उदाहरण के लिए - कहीं जिनमंदिर के कार्य हेतु गए हों तो रेल का किराया साधारण खाते में से लेना पड़े तो लें, परंतु भोजन आदि का खर्च तो नहीं लें। संघ के खर्च से कहीं गए तो उस दौरान निजी व्यापार आदि कुछ न करें ।

४८ - जिनमंदिर, उपाश्रय, आयंबिल भवन, पाठशाला, भोजनालय, धर्मशाला आदि विषयक छोटी-बड़ी सभी बातों का अभ्यास करके, उन स्थानों की व्यवस्था धर्मनीति के अनुसार सुचारु रूप से चलती रहे, ऐसा आयोजन करें ।

४९ - अगर ट्रस्टी भारतीय आर्य वेशभूषा धारण करें तो शालीन लगेगा । यथासंभव वह पाश्चात्य वेशभूषा का त्याग करें ।

५० - पेढ़ी-कार्यालय में गद्दी-तकिया आदि की प्राचीन व्यवस्था रखी जाए । टेबल-कुर्सी जैसी विदेशी सुविधाएँ रखना उचित नहीं है ।

५१ - संघ की पेढ़ी-कार्यालय को समाचार पत्र-पत्रिकाओं से दूर रखा जाए । अन्यथा वह सार्वजनिक वाचनालय बन जाएगी ।

५२ - पेढ़ी-कार्यालय से व्यक्तिगत फोन-फैक्स आदि न किए जाएं । स्मरण में रहे कि धर्मस्थानों में प्रवेश करने से पूर्व 'निसीहि' बोला जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५३ - धर्मस्थानों को उज्ज्वल, स्वच्छ रखें । समय-समय पर चूना-रंगरोगान आदि करवाया जाए । निगोद-काई आदि त्रसजीव न हों इसके लिए सावधानी रखी जाए । सभी कार्यों में जयणा का पालन सर्वोपरि महत्त्व की बात है ।

५४ - प्रतिमाजी तथा परिकर को स्वच्छ, निर्मल रखें ।

५५ - पूजा आदि के लिए केसर, चंदन, घी, धूप, वरक आदि जिन वस्तुओं की आवश्यकता होती है, उनका सुयोग्य संचय करें ।

५६ - धर्मस्थानों में काम चल रहा हो उस समय उन कारीगरों से अपने घर के या अपने धंधे के कार्य न कराएं । धर्मकार्य रुक जाए इस प्रकार स्वयं के कार्य न कराएं ।

५७ - संघ-स्वामिवात्सल्य आदि के लिए सब्जियाँ या अनाज़ खरीदने के लिए गए हों तब अपने घर-दुकान के लिए खरीदी न करें । संघ के लिए होलसेल दामों पर खरीदी हो रही हो तब बेचनेवाला उन्हीं दामों में खरीदनेवाले को भी दे दे यह संभव है । ऐसा हो तो दोष लगता है ।

५८ - जो-जो धर्मस्थान जिस किसी उद्देश्य से निर्मित हुए हैं, उनमें उसी उद्देश्य का पालन हो, उसके प्रति ट्रस्टी लक्ष्य रखें । जैसे कि आयंबिल भवन आदि धर्मस्थान में शादी-ब्याह आदि सांसारिक कार्य न होने दें ।

५९ - संघ ने जिस विश्वास के साथ धर्मस्थान-धर्मद्रव्य के संचालन का कार्य सौंपा है, उसे पूर्ण निष्ठा, लगन एवं पुरुषार्थ के साथ ट्रस्टी सार्थक करें ।

६० - ट्रस्ट के लाभार्थी - तपस्वी आदि के लिए जो विशेष व्यवस्था-सुविधाएँ हों उनका उपयोग ट्रस्टी स्वयं न करें । लाभार्थी-तपस्वी आदि को दी गई सुविधाओं में कोई कमी तो नहीं है, यह परखने के लिए स्वयं उतनी सुविधा का उपयोग करें वह ठीक है, परंतु अकारण उपभोग नही करें । उदा. अत्तरवायणा, पारणा, एकासना, आयंबिल की रसोई आदि चखना इत्यादि ।

६१ - जिनमंदिर में देवद्रव्य तथा जीर्णोद्धार के भंडार ही रखे जाएं । अन्य क्षेत्रों के भंड़ार जिनमंदिर के बाहर सुयोग्य-सुरक्षित स्थानों पर ही रखे जाएं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-४

आरती-मंगल दीपक की थाली में रखे गए द्रव्य के विषय में *पेढ़ी के दो पत्र*

आरती-मंगल दीपक की थाली में रखी गई रकम देवद्रव्य खाते में जाती है, उसके विषय में शत्रुंजय तीर्थाधिराज आदि अनेक तीर्थों की संचालन-व्यवस्था को देखनेवाली सेठ **आणंदजी कल्याणजी पेढ़ी** तथा श्री शंखेश्वरजी तीर्थ के संचालन के कार्य को देखनेवाली **श्री जीवणदास गोडीदास पेढ़ी** (शंखेश्वर) के पत्र निम्नानुसार हैं ।

सेठ आणंदजी कल्याणजी पेढ़ी की ओर से प्राप्त पत्र की अक्षरशः प्रतिलिपि निम्नानुसार है ।

सेठ आणंदजी कल्याणजी,
अखिल भारतीय जैन श्वेताम्बर
मूर्तिपूजक श्रीसंघ के प्रतिनिधि,
झवेरीवाड, अहमदाबाद-१

"पत्र जा. सं. ७९३, अहमदाबाद
श्री महेन्द्रभाई साकरचंद शाह
बंगला नं. १/१, केवडिया कॉलोनी,
भरुच-३९३१५१

वि. आपका दि. ८-४-९५ का पत्र प्राप्त हुआ है । उसके विषय में लिखना है कि आरती/मंगलदीपक का द्रव्य भंडार फंड में ही माना जाना चाहिए । पुजारियों को उस पर किसी प्रकार का अधिकार सेठ आणंदजी कल्याणजी पेढ़ी के संचालन की शाखा पेढ़ियों में नहीं दिया गया है यह विदित हो ।

- लि. जनरल मेनेजर"

उपरोक्त पत्र से फलित होता है कि सेठ श्री आणंदजी कल्याणजी की पेढ़ी, अहमदाबाद के हस्तक संपूर्ण भारत के जितने भी तीर्थ तथा जिनमंदिरों का प्रबंध है, उनमें आरती/मंगल दीपक का द्रव्य पुजारियों को न देकर भंडार (देवद्रव्य के) खाते में जमा कर लिया जाता है । उसी प्रकार भारत में शंखेश्वरजी तीर्थ महाप्रसिद्ध तीर्थ है । इस तीर्थ की यात्रा करने हेतु भारतभर से प्रतिवर्ष लाखों यात्री आते हैं । इस तीर्थ में भी आरती, मंगल दीपक के पैसे पुजारियों को न देकर भंडार (देवद्रव्य के) खाते में जमा कर लिया जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंखेश्वरजी की पेढ़ी की ओर से प्राप्त पत्र की अक्षरशः प्रतिलिपि यहाँ प्रस्तुत है ।

"पत्र जा. सं. १८५/१५/९५
प्रति श्री महेन्द्रभाई साकरचंद शाह
बंगला नं. १/१ केवडिया कॉलोनी,
जि. भरुच-३९३१५१

सेठ जीवणदास गोडीदास
शंखेश्वर पार्श्वनाथ
जैन देरासर ट्रस्ट
वाया-हारीज, मु. शंखेश्वर,
जि. महेसाणा ।
तारीख : २२-५-९५

श्रीमानजी,

जय जिनेन्द्र के साथ लिखना है कि आपका दि. १७-५-९५ का पत्र प्राप्त हुआ है । जिसमें आरती-मंगल दीपक के द्रव्य के विषय में पूछा गया था । उपरोक्त आरती/मंगल दीपक का द्रव्य भंडार में जाता है, यहाँ पुजारी को नहीं दिया जाता है, जो विदित हो । काम सेवा लिखें ।

- लि. जनरल मेनेजर
कनुभाई के जय जिनेन्द्र"

सब से विशाल कार्यव्यवस्था का संचालन करनेवाली तीर्थ की पेढ़ियों में आरती/मंगल दीपक की आय के विषय में शास्त्रीय प्रथा का पालन होता है, वह आनंद का एवं अनुमोदनीय विषय है । भारत एवं भारत के बाहर के सभी जिनालयों के संचालक इस आदर्श को ध्यान में रखकर शास्त्रीय हितकर मार्ग का अनुसरण करें यही अभिलाषा है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-५ आपके प्रश्न-शास्त्रीय उत्तर

शंका-१ : प्रभु को आरती, मंगलदीप में श्रावक जो द्रव्य-रुपया वगैरह पधराते हैं, उस पर किसका अधिकार ? पुजारी का या देवद्रव्य भंडार खाते का ?

समाधान-१ : प्रभु की आरती, मंगलदीप में जो भी द्रव्य-धनादि आता है, वह प्रभु को ही चढ़ाया जाता है । अतः देवद्रव्य-भंडार खाते में ही जमा करना चाहिए । उस पर पुजारी का वास्तव में हक नहीं होता । कहीं-कहीं पुजारियों को देने की प्रवृत्ति चलती है, पर वह शास्त्रीय नहीं है । ऐसे स्थानों पर पुजारी वर्ग को अन्य प्रकार से संतुष्ट कर, उनकी व्यवस्था कर आरती-मंगलदीप की रकम को देवद्रव्य में जमा करने की शास्त्रीय व्यवस्था का पुनर्निर्माण करना जरूरी है । श्वेतांबरों की शीर्षस्थ आनंदजी कल्याणजी पेढ़ी एवं श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ की पेढ़ी के अंतर्गत जितने भी तीर्थों की व्यवस्था है, वहाँ हर जगह आरती-मंगलदीप के द्रव्य को आय देवद्रव्य में ही जमा की जाती है ।

शंका-२ : भगवान के आगे अष्टमंगल का आलेखन करना चाहिए या अष्टमंगल की पाटली (पट्ट) की पूजा करनी चाहिए ? अष्टमंगल का विधान कहाँ प्राप्त होता है ?

समाधान-२ : भगवान के आगे अष्टमंगल करने की विधि जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति नामक आगम ग्रंथ में लिखी है । प्रभु के आगे सुवर्ण रौप्यादि रत्नों के तंदुल (अक्षत) से या शुद्ध अखंड अक्षतों (चावल) से अष्टमंगल की आकृतियाँ बनानी चाहिए । ये आकार मंगलकारी होते हैं । अष्टमंगल के पट्ट का पूजन नहीं होता । जिन्हें अष्टमंगल की आकृतियाँ बनानी नहीं आती, ऐसे व्यक्तियों द्वारा पट्ट बनाकर चढ़ाने की प्रवृत्ति शुरू हुई है, ऐसा प्रतीत होता है । शांतिस्नात्रादि विशिष्ट विधानों में ही अलग से अष्टमंगल पट्ट के पूजन की विधि होती है ।

शंका-३ : विहारादि स्थलों में या अन्य कहीं भी नया उपाश्रय बनवाना हो या पुराने उपाश्रय का जिर्णोद्धार कराना हो, तो साधु-साध्वी वैयावच्च खाते की रकम में से खर्च कर सकते हैं या नहीं ?

समाधान-३ : साधु-साध्वी वैयावच्च खाते की रकम में से उपाश्रय नहीं बनवा सकते । साधु-साध्वी के निमित्त बने हुए उपाश्रयों में साधु-साध्वीजी नहीं ठहर सकते एवं उसमें श्रावक-श्राविकाएँ भी धर्मक्रिया नहीं कर सकते । जो उपाश्रय श्रावक-श्राविका हेतु ही बने हों, उसमें ही श्रावक-श्राविका धर्मक्रिया कर सकते हैं और श्रावक-श्राविका हेतु निर्मित उपाश्रयों में साधु-साध्वी ठहर सकते हैं । अतः श्रावक-श्राविका के निमित्त बनने वाले उपाश्रयों में साधु-साध्वी वैयावच्च खाते का द्रव्य इस्तेमाल नहीं किया जा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सकता । यदि ऐसे इस्तेमाल किया जाए तो श्रावक-श्राविकाओं को साधु-साध्वी वैयावच्च खाते के द्रव्य के उपभोग का दोष लगता है । विहारादि स्थानों में बनने वाले उपाश्रयों में भी साधु-साध्वी वैयावच्च खाते का द्रव्य इस्तेमाल नहीं हो सकता; क्योंकि, उन उपाश्रयों में भी वंदनादि हेतु श्रावक आते हैं एवं साधु-साध्वियों के साथ विहार में मुमुक्षु आदि भी ठहरते हैं, उनके द्वारा छोटी-बड़ी धर्मक्रिया भी होती रहती है, अतः उन्हें साधु-साध्वी वैयावच्च खाते के द्रव्योपभोग का दोष लगता है ।

शास्त्रीय मर्यादानुसार सामान्यतः ऊपर के क्षेत्र का द्रव्य नीचे के क्षेत्र में नहीं जाता। 'साधु-साध्वी खाता' ऊपर का क्षेत्र है, जबकि उपाश्रय श्रावक-श्राविका खाते में गिना जाता है और श्रावक-श्राविका खाता नीचे का क्षेत्र है । इस दृष्टि से विचार करने पर भी साधु-साध्वी वैयावच्च खाते के पैसों से उपाश्रय यदि बनाया जाए तो उसमें 'ऊपर के साधु-साध्वी क्षेत्र के' पैसों को 'नीचे के श्रावक-श्राविका क्षेत्र में' इस्तेमाल करने का दोष लगता है। अतः साधु-साध्वी वैयावच्च के पैसों से कोई भी उपाश्रय नहीं बनवा सकते । उपाश्रय का जिर्णोद्धार करना हो तो भी उसमें साधु-साध्वी वैयावच्च खाते की रकम इस्तेमाल नहीं कर सकते, तो फिर नूतन उपाश्रय निर्माण में तो वह इस्तेमाल न ही किया जा सकता, यह समझ सकते हैं ।

उपाश्रय का जिर्णोद्धार करना हो तो किस द्रव्य में से (किस खाते की आय से) करना इसकी समझ देते हुए 'श्री संवेग रंगशाला' नामक ग्रंथ में लिखा है कि - **"यदि खुद समर्थ हो तो स्वयं, समर्थ न हो तो उपदेश देकर अन्यों द्वारा एवं इन दोनों के अभाव में 'साधारण द्रव्य से' भी पौषधशाला (उपाश्रय) का उद्धार कराएँ (२८८४) इस विधि से पौषधशाला का उद्धार करवाने वाला वह धन्य पुरुष निश्चय से अन्यों के लिए सत्प्रवृत्ति का कारण बनता है (२८८५) ।"**

इस तरह अंतिम उपाय रूप साधारण द्रव्य में से उपाश्रय का जिर्णोद्धार कराना कहा, पर साधु-साध्वी वैयावच्च द्रव्य में से करना न कहा ।

कितने ही स्थानों में गुरुपूजन में प्राप्त द्रव्य एवं/या गुरु को कंबलादि बहोराने के चढ़ावों आदि की आय, जो शास्त्रानुसार जिनमंदिर जिर्णोद्धार या नवनिर्माण में ही इस्तेमाल की जा सकती है; उसके बदले वैयावच्च खाते में ले जाकर उसमें से उपाश्रय निर्माणादि में दी जाने की प्रवृत्ति भी हो रही है, यह बिल्कुल गलत है । ऐसे द्रव्य से निर्मित उपाश्रय में साधु-साध्वी या श्रावक-श्राविका, कोई भी ठहर नहीं सकता । अतः इस बारे में भी पूरी जाँच-पड़ताल कर लेनी हितावह है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंका-४ : एकबार मंदिर में चढ़ी बादामें फिर से चढ़ा सकते हैं क्या ? मंदिर में चढी बादामों को बाजार में बेचने पर अल्प मूल्य आता है, उससे बेहतर है कि ज्यादा कीमत देकर हम खरीद लें, एवं घर में उपयोग न करते हुए मंदिर में फिर से चढाएँ । ऐसा करने में क्या कोई दोष लगता है ?

समाधान-४ : मंदिर में चढी बादामें, फल, नैवेद्य, श्रीफल एवं चावल आदि चीजें निर्माल्य गिने जाते हैं । एकबार जो चीजें निर्माल्य बन गई वे फिर से चढ़ाई नहीं जाती । भगवान की भक्ति में नित्यप्रति ताजा एवं नए फल-नैवेद्य, श्रीफल वगैरह ही चढ़ाने होते हैं । अतः एक बार चढ़ी ऐसी चीजें फिर से चढ़ाने से निर्माल्य चढ़ाने का दोष लगता है ।

प्रभु के सामने चढाए फल-नैवेद्यादि तमाम चीजें अजैनों को बेचकर, वह द्रव्य देवद्रव्य खाते में जमा करना चाहिए ।

शंका-५ : हम हर रोज अष्टप्रकारी पूजा करते हैं, अष्टप्रकारी पूजा की सभी सामग्री भी हम हमारी ले जाते हैं, सिर्फ केसर घिसने एवं प्रक्षाल हेतु पानी तथा पत्थर (ओरसीया) मंदिरजी का इस्तेमाल करते हैं, ये दो चीजें जो इस्तेमाल करते हैं, उसका नकरा मंदिरजी में देते हैं, तो क्या हमें कोई दोष लगता है ?

समाधान-५ : आप पूरा नकरा भर देते हो तो आपको 'मंदिरजी की चीजें इस्तेमाल करने का' दोष नहीं लगता है ।

शंका-६ : विनाश आदि खास कारण बिना भी ज्ञानपूजन का द्रव्य देवद्रव्य की पेटी में डाल सकते हैं क्या ? ज्ञानपूजन एवं गुरुपूजन : इन दोनों का द्रव्य रखने हेतु एक ही पेटी रख सकते हैं क्या ? जो द्रव्य जिस खाते का हो उसी खाते में जमा होना चाहिए न ? जो ऐसा न करे तो व्यवस्थापकों को दोष लगता है ?

समाधान-६ : ज्ञान-पुस्तक पर पूजा हेतु चढ़ाया द्रव्य ज्ञानखाते में जाता है एवं गुरु भगवंतों की नवांगी/एकांगी आदि पूजा का द्रव्य गुरुपूजन-गुरुद्रव्य-देवद्रव्य (जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण) में जाता है । यह शास्त्रीय मर्यादा है । जिस खाते का द्रव्य हो वह उसी खाते में ले जाना चाहिए । यह मार्ग है । अतः दोनों ही खातों के लिए अलग-अलग कायमी पेटियाँ रखनी चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसमें भी गुरुपूजन की पेटी पर 'देवद्रव्य' (जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण) ऐसा स्पष्ट अक्षरों में लिख देना चाहिए । व्यवस्थापक गण विशेष ध्यान रख, जो द्रव्य जिस खाते का हो उसी खाते में ले जाएँ ।

कभीकभार गुरुपूजन करते समय साथ में ही ज्ञानपूजन भी किया जाता है एवं भूल से दोनों द्रव्य इकट्ठा भी हो जाते हैं, उस समय 'ऊपर के खाते का द्रव्य भूल से भी नीचे के खाते में चला न जाय' इस शास्त्रीय मर्यादा के पालन हेतु वह इकट्ठा द्रव्य गुरुपूजन-देवद्रव्य (जिनमंदिर जीर्णोद्धार-नवनिर्माण) की पेटी में डाल देने का कहा जाता है, वह उपयुक्त है । इससे किसी को दोष नहीं लगता एवं दोष से बचाया जाता है । फिर भी कोई कारण बिना ज्ञानद्रव्य-देवद्रव्य में ले जाना उचित नहीं है । ऐसा करने से व्यवस्थापकों को जरूर दोष लगता है ।

शंका-७ : जिस मंदिरजी की व्यवस्था के बारे में हमें शंका हो, वहाँ अक्षत-फल-नैवेद्य पूजा कर सकते हैं या नहीं ? भंडार-गोलख में पैसे रख सकते हैं या नहीं ? हर किसी को उतनी शक्ति नहीं होती कि - अक्षत-फल-नैवेद्य जितनी ही राशि देवद्रव्य में भर दें एवं दोष से बचें । दोष से बचने का विकल्प बताया है वह तो सिर्फ शक्तिसंपन्न वर्ग को ही माफिक आ सकेगा कि - रोज की पूजा जितनी राशि देवद्रव्य में भर दे । ऐसे स्थानों पर पूजा-आरती जैसी बोलियाँ बोल सकते हैं क्या ?

समाधान-७ : पहले क्रम में जिस मंदिरजी में पूजा करनी हो वहाँ की देवद्रव्य-व्यवस्था की पक्के तौर पर पूरी जानकारी करलें । जहाँ भी शंका हो वहाँ दोष का गणित गिनना ही होगा । फिर भी अन्य सुविधा न हो एवं पूजा करनी ही पड़े तो सामर्थ्यवान श्रावक को चाहिए कि जितनी राशि/फल-नैवेद्यादि की हो उतनी देवद्रव्य खाते में शुद्ध व्यवस्था वाले स्थान में जमा करवा दें । जिनको इतनी शक्ति नहीं है, उनके लिए दोष लगे वैसी ऊंची क्रिया करना शास्त्र ने नहीं कहा है । उसे चाहिए कि अपनी शक्ति अनुसार पूजादि कर उस फल-नैवेद्यादि की रकम ऊपर अनुसार शुद्ध व्यवस्था वाले स्थान में जमा करवाएँ । यह भी शक्य न हो तो उनके लिए पूजा के अन्य-अन्य प्रकार - 'फूलों को गूँथना, केसर घिस देना, अंगरचना में सहायक बनना' आदि अनेक मार्ग सुविहित आचार्यों ने धर्मग्रंथों में स्पष्ट दिखाए हैं । अतः शक्ति के अनुसार भूमिका का निर्वहन करने से उपरोक्त कोई भी प्रश्न खड़ा नहीं रहता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंका-८ : आजकल जिस केसर/चंदन से भगवान की पूजा होती है, वही केसर/चंदन ललाट पर तिलक करने हेतु कटोरी में रखा जाता है । क्या यह अनुचित नहीं ? और यदि यह अनुचित है, तो परद्रव्य से पूजा करनेवाले अल्प शक्तिवाले श्रावक को ललाट पर किस केसर का तिलक करना चाहिए ?

समाधान-८ : प्रभु पूजा हेतु एवं श्रावक को तिलक करने हेतु केसर/चंदन अलग अलग ही होने चाहिए । फिर भी यदि केसर/चंदन वैयक्तिक या साधारण द्रव्य के हों तो, उन्हें लाते/रखते समय 'इसमें से श्रावक को तिलक करने हेतु भी काम में लिया जाएगा ।' ऐसी बुद्धि-भावना हो, तो कोई हरकत नहीं है । सिर्फ जिनपूजा का ही उद्देश्य हो, तो दोष लगता है । साधारण या जिनमंदिर साधारण में से व्यवस्था की गई हो, तो व्यवस्था को स्वीकार करनेवाली पुण्यात्मा स्वयं उतने द्रव्य की मालिक बन जाती है।

क्योंकि देनेवाले ने सहर्ष-इच्छापूर्वक वस्तु दी है और लेनेवाले ने उनकी भावना का आदर करनेपूर्वक उसे ली है । अतः परद्रव्य संबंधी प्रश्न नहीं रहता । देनेवाले की इच्छा न हो और लेनेवाला ले दबाता हो, वहीं परद्रव्य संबंधी दोष लगता है । जहाँ पूरी खबर न हो, वहाँ तिलक करने हेतु जरूरी द्रव्य देवद्रव्य में जमा करवा देना चाहिए ।

शंका-९ : फ्रुट (फल) मंदिरजी में चढ़ाने हेतु ही लिए हों तो घर में इस्तेमाल करने पर कोई दोष लगता है ?

समाधान-९ : फ्रुट (फल) खरीदते समय 'ये फ्रुट मंदिरजी में ही चढाऊंगा' ऐसा निश्चित विचार मन में हो तो उन्हें घर में इस्तेमाल करने पर दोष लगता है । पर सामान्य तौर पर घर एवं मंदिरजी : इन दोनों स्थान में इस्तेमाल करने हेतु इकट्ठे ही खरीदे हों, तो उसमें दोष नहीं लगता ।

शंका-१० : साधारण ट्रस्ट की सम्पत्ति, किसी भी प्रकार से बेचने की आवश्यकता न होने पर भी जैन समाज में वरीष्ठ स्थान-मान धरानेवाले व्यक्ति की खुशामद के लिए, उसकी वर्तमान बाजार-दर से कम में ही बेच दी जाए, तो क्या यह योग्य है ? क्या यह बिक्री संघहित के खिलाफ नहीं है ? क्या ट्रस्टियों द्वारा सिर्फ अपने व्यक्तिगत संबंध को लक्ष्य में रखकर, संघ हित को गौण कर किए गए विक्रय संबंधी ठहराव को केवल संघ में ही चुनौती दे सकते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-१० : साधारण ट्रस्ट की सम्पत्ति, किसी भी प्रकार से बेचने की आवश्यकता न होने पर भी बाजार दर से कम कीमत में बेचने में ट्रस्टियों को धर्मादा-द्रव्य को नुकसान पहुँचाने का - नाश करने का पाप जरूर लगता है । फिर उसमें किसी भी श्रीमंत या सत्ताधीश की खुशामदी जैसे क्षुद्र तत्त्व सम्मिलित होते हों, तो यह पाप और भी चिकना बन जाता है ।

ऐसी बिक्री को संघहित के खिलाफ कह सकते हैं । व्यक्तिगत स्वार्थ को आगे कर किए गए ऐसे संघ हित विरुद्ध व्यवहारों को जरूर सुयोग्य स्थानों पर चुनौती दी जा सकती है । शक्तिसंपन्न विवेकी श्रावकों को चाहिए कि ऐसी चुनौती दें । यदि शक्तिसंपन्न श्रावक सुयोग्य रीति से विवेकपूर्वक चुनौती न दें तो उन्हें भी उपेक्षा का पाप लगता है।

शंका-११ : उपाश्रय-पौषधशाला में होस्पिटल एवं प्रसूतिगृह बना सकते हैं क्या ?

समाधान-११ : उपाश्रय-पौषधशाला केवल श्रीसंघ की धार्मिक क्रियाओं हेतु निर्मित अबाधित स्थान हैं । उनमें होस्पिटल या प्रसूतिगृह जैसा कोई भी सामाजिक कृत्य करने-कराने का विचार भी नहीं कर सकते । ऐसा करने से महापाप लगता है।

शंका-१२ : उपाश्रय को होस्पिटल एवं प्रसूतिगृह बनाने हेतु बेचा जा सकता है क्या ?

समाधान-१२ : संघ हित को ध्यान में रखकर अधिक जगहों को बेचने का प्रसंग भी आए तो सुयोग्य रीति से एवं सुयोग्य कार्य हेतु ही बेचकर पैसे खड़े कर सकते हैं । एक बात का जरूर ख्याल रखना चाहिए कि - ऐसे विक्रय से जैन धर्म की यतना प्रधान जीवनशैली को कोई भी नुकसान पहुँचने न पाए । अतः उपाश्रय का स्थान होस्पिटल एवं प्रसूतिगृह निर्माण हेतु बेचने की बात बिल्कुल उचित नहीं लगती ।

शंका-१३ : कुमारपाल की आरती में कुमारपाल, मंत्री, छड़ीदार, सेनापति आदि बनने के रुपयों में बोले गए चढ़ावों की आय कौनसे खाते में जाती है ? उसमें से आरती-प्रसंग पर किए जाते ड्रेस, मेक-अप का खर्चा निकाल सकते हैं ?

समाधान-१३ : कुमारपाल महाराजा ने परमात्मा की आरती उतारी थी, वैसी आरती उतारने हेतु पहले स्वयं का जीवन कुमारपाल जैसा बनाना जरूरी है । आज जिस तरह मिट्टी के दीए आदि लेकर आरती उतारने का चलन चल पड़ा है, वह योग्य प्रतीत नहीं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होता । श्रावक को परमात्मा की आरती उतारनी होती है, अतः वह मुकुट, हार आदि पहने वह योग्य है, पर किसी को व्यक्तिगत कुमारपाल आदि बनाने में तो उन महापुरुषों का अवमूल्यन होने की पूरी संभावना होती है । अंजनशलाका जैसे प्रसंगों में तो विशिष्ट विधिवाद रूप मांत्रिक संस्कारपूर्वक, पद के बहुमानपूर्वक क्रियाएँ की जाती है । वह एक विशिष्ट आचार है । उसको आलंबन कर ऐसे अनुष्ठान प्रचलित करने में महान क्रिया की लघुता करने का दोष भी पैदा होगा । अतः इस प्रथा को बढ़ावा देना उचित नहीं लगता । फिर भी किसी स्थान में इस तरह आरती उतारी हो गई हो, तो उस समय बुलवाई गई हर एक चढ़ावों की राशि जिनपूजा संबंधी होने से देवद्रव्य खाते में ही जमा करनी चाहिए । उस राशि में से ड्रेस, मेक-अप आदि कोई भी खर्चा नहीं निकाल सकते । क्योंकि पूजा-आरती यह श्रावक का कर्त्तव्य है और श्रावक को जो चाहिए उसका खर्चा खुद ही करे ।

शंका-१४ : अक्षय तृतीया के दिन साधुभगवंत को गन्ने का रस बहोराने, श्रेयांसकुमार बनकर पारणा कराने हेतु बुलवाए गए चढ़ावे की राशि गुरुद्रव्य-देवद्रव्य, वैयावच्च द्रव्य या साधारण खाते में जाएगी ? साधर्मिकभक्ति में यह द्रव्य इस्तेमाल कर सकते हैं ?

समाधान-१४ : अक्षय तृतीया के दिन वर्षीतप का पारणा कर रहे महात्माओं को गौचरी जाने हेतु अलग से कोई विधि नहीं बताई है । दशवैकालिक आदि साध्वाचार दर्शक ग्रंथों में बताए अनुसार ही निर्दोष रूप से गौचरी प्राप्त करनी होती है । कोई एक व्यक्ति चढ़ावा आदि लेकर बहोरावे तो इस मर्यादा का पालन नहीं होता। दूसरी बात - श्रेयांसकुमार जैसे तद्भव मोक्षगामी महापुरुषों का अभिनय करने से उन महान पात्रों की लघुता होती है । इसलिए भी ऐसा नहीं किया जा सकता । फिर भी कहीं अज्ञानादि वश ऐसा चढ़ावा बुलवाया गया हो तो, वह चढ़ावा साधु जीवन संबंधित होने से उसको तमाम राशि देवद्रव्य खाते में जमा कर उसे जिनालय के जिर्णोद्धार आदि में ही इस्तेमाल करनी चाहिए ।

शंका-१५ : जैन संघों में छोटे-मोटे कई प्रसंगों पर, महापूजन के अवसर पर, प्रतिष्ठा के समय जीवदया की टीप (चंदा) करते हैं । कई बार टीप लिखवानेवाले भरपाही देरी से करते हैं तो दोष किसे लगे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-१५ : जैन संघों में किसी भी प्रसंग पर हुई जीवदया की टीप के पैसे तुरंत ही भर देने चाहिए । अन्यथा लिखवाने वालों को अबोल जीवों की दया में अंतराय करने का पाप लगता है । दूसरी बात : संचालक या ट्रस्टीवर्ग टीप के आँकड़ों के अनुसार सभी आय का बँटवारा कर भेज देवे, पर वे जीवदया के पैसे ही यदि न आए हों तो उसका हवाला (जमा-उधार एन्ट्री) अन्य-अन्य देवद्रव्य या साधारण जैसे खातों में डाल दे, यह भी बिल्कुल अयोग्य एवं देवद्रव्यादि के भक्षण के पाप की ओर बढ़ाने वाला कार्य है । तीसरी बात : जितने दिन भरपाही में देरी होती है, उतने दिनों का धर्मादा (चैरीटी) द्रव्य के ब्याज का भी घाटा हो जाता है । जो चलाया नहीं जा सकता । अतः टीप में लिखवानेवाले को चाहिए कि पैसे साथ में ही लाकर तुरंत भर दें और संचालक-ट्रस्टी वर्ग भी जाँच-तपास कर सुयोग्य स्थान पर उसे फौरन भेज दें । यही न्याय बोली-उच्छामणी-चढ़ावा आदि में भी लागू होता है ।

शंका-१६ : जीवदया की राशि बहियों में जमा होती रहे । बैंकों में जमा होते-होते लाखों में आँकड़ा बढ़ता रहे । फिर भी उसका उपयोग न हो तो क्या यह उचित है ? उसके ब्याज के बारे में भी स्पष्टता करें ।

समाधान-१६ : जीवदया की राशि बहियों में जमा होती ही रहे और बैंकों में रखकर आँकड़ा बढ़ाने में ही जिन ट्रस्टी या अग्रणियों को रुचि है, वे भीषण पाप का उपार्जन कर रहे हैं, ऐसा शास्त्राधार से कहना ही होगा । बैंकों में रखने से जो राशि जीवदया हेतु आई, उसीका उपयोग जीवहिंसा आदि के कार्यों में बहुतायत होता रहता है । जिनाज्ञा प्रेमी, आत्मकल्याण के इच्छुक संचालकों को स्वयं जाँच-तपास कर सुयोग्य तौर-तरीके से सुयोग्य पिंजरापोल आदि स्थानों में वह राशि लगा देनी चाहिए । जीवदया की राशि शेष (बैलेन्स) नहीं रख सकते । ऐसा करने से जीवों को दाना-पानी-रक्षा आदि की अंतराय लगता है । परिणामतः अल्पआयुष्य, इन्द्रिय हानि, गंभीर रोग, दुर्गति एवं यावत् बोधिदुर्लभता (जैन धर्म न मिलना) ऐसे फल भुगतने पड़ते हैं । ऐसा न हो इसके लिए सभी संचालक इस बारे में चौकन्ने रहें यह जरुरी है ।

जीवदया की राशि अशक्य अपरिहार्य रूप कहीं-कहीं बैंकों आदि में रखनी पड़ती हो तो उसका जितना भी ब्याज (सूद) आवे वह पूरा का पूरा बराबर गिनकर जीवदया खाते में ही जमा करना चाहिए । वह द्रव्य देवद्रव्य या साधारण आदि में मिल न जाए, उसी तरह देवद्रव्य या साधारण आदि द्रव्य भी जीवदया द्रव्य में मिल न जाय इस शास्त्रीय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मर्यादा का सावधानी पूर्वक पालन होना ही चाहिए । दूसरी बात : तुरंत इस्तेमाल करने में बड़ा लाभ - 'कम राशि में ज्यादा लाभ' होता है । बरसों के बीतने पर बढ़ी हुई राशि में भी महँगाई वृद्धि के कारण कार्य कम ही होता है । यह कईयों का अनुभव है ।

शंका-१७ : जीवदया के फंड (चंदा) में से कैन्सर या अन्य किसी प्राणघातक बिमारी से पीड़ित मानव को जीवनदान प्राप्त कराने हेतु दान दे सकते हैं या नहीं ? मनुष्य भी तो पंचेन्द्रिय जीव है न ?

समाधान-१७ : जीवदया के चंदे में 'जीव' शब्द की जो व्याख्या की गई है, उसके मुताबिक 'जीव' में मनुष्य के अलावा अन्य सभी त्रस (चलमान) पंचेन्द्रिय अबोल (गूंगे) पशु-पक्षियों का समावेश किया गया है । अतः इस चंदे या फंड में से किसी भी मनुष्य को किसी भी प्रकार की मदद नहीं की जा सकती है ।

मनुष्य तो इन जीवों से भी कई गुना ज्यादा ताकतवर है, अपना कार्य करने को ! बेचारे ये पशु-पंखी रूप जीव तो हर प्रकार से निःसहाय एवं अबोल होते हैं । अतः उनकी दया हेतु यह चंदा (फंड) किया जाता है । मनुष्यों की सहायता हेतु 'अनुकंपा' का अलग चंदा (फंड) कर सकते हैं । इस चंदे में से जरुरत के अनुसार विवेकपूर्वक कैन्सर-पीड़ित मरीज को मदद या ऑपरेशन आदि में सहायता दी जा सकती है । परंतु इस चंदे में से भी (अनुकंपा का चंदा या फंड) अस्पतालों में या उसके विभागों में दान देना जायज नहीं है । ऐसे अस्पतालों का निर्माण भी इसमें से नहीं कराया जा सकता । यह जैनशासन के परमार्थ ज्ञाता महापुरुषों की मर्यादा है ।

अनुकंपा के चंदे में से किसी संयोग विशेष में जरुरत पड़ने पर जीवदया हेतु राशि खर्च कर सकते हैं, परंतु जीवदया का चंदा तो अत्यंत निम्न, लाचार कक्षा के जीवों की दया हेतु अंकित खाता होने से, इसमें से कोई भी राशि, किसी भी संयोग में अनुकंपा (मान-राहत) में इस्तेमाल हो ही नहीं सकती । यह जैनशास्त्रोक्त कानून है, अतः कल्याणकामी हरएक आत्मा को चाहिए कि इस श्रेयस्कर मर्यादा का सावधानी से पालन करे ।

शंका-१८ : जीवदया की राशि का सदुपयोग नहीं होता हो और अनुकंपा की राशि अतीव आवश्यक हो तो जीवदया का चंदा करना छोड़कर अनुकंपाका ही चंदा करने हेतु प्रोत्साहन देना क्या जरुरी नहीं लगता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान - १८ : जीवदया की राशि का सदुपयोग यदि नहीं होता हो, तो प्रेरणा कर, उपदेश देकर, प्रयत्न कर, समयादि का समर्पण कर उसका सदुपयोग हो, वैसा करना चाहिए ।

अनुकंपा में काफी राशि की आवश्यकता हो तो भी उसे इकट्ठी करने के लिए जीवदया के चंदे को बंद करवाना उचित नहीं है ।

जिनमंदिर में महापूजन - प्रतिष्ठा आदि अवसर पर महापुरुषों ने जीवदया का चंदा करने की छूट दी है, अनुकंपा का चंदा करने की नहीं । यह बात इस संदर्भ में ध्यान रखनी चाहिए ।

शंका-१९ : प्रतिष्ठा आदि के अवसर पर फले-चूंदड़ी या झाँपा चूंदड़ी की बोली होती है, उस खाते में वृद्धि हो तो उस राशि में से अकाल राहत या भूकंप राहत के तौर पर मनुष्यों से काम करवाकर उसके भुगतान रूप खर्च कर सकते हैं क्या ?

समाधान-१९ : यह राशि सातक्षेत्रों के अलावा अनुकंपा-जीवदया-मानवराहत अकालराहत-भूकंपराहत आदि किसी भी मानवीय या पशु संबंधित कार्य में इस्तेमाल की जा सकती है । पर इसका मतलब यह नहीं है कि मनुष्यों आदि से काम करवाकर उसके भुगतान रूप में इसे खर्च किया जाए । बिना कोई काम करवाए, केवल उनके ऊपर आ पड़ी विपदा को सर्वतः या अल्पतः दूर करने की निःस्वार्थ भावना से ही यह कार्य होना चाहिए ।

शंका-२० : देवद्रव्य की राशि जिनमंदिर के जिर्णोद्धार में ही लगा सकते हैं या नूतन जिनमंदिर के निर्माण में भी लगा सकते हैं ? आजकल नूतन जिनमंदिर अनेक स्थानों पर धड़ल्ले से बन रहे हैं । क्योंकि उसमें ज्यादा रुचि है । नाम भी होता है । पुराने मंदिर-तीर्थ ज्यादा जीर्ण बनते जा रहे हैं । इस बारे में सुयोग्य मार्गदर्शन स्वागतयोग्य होगा ।

समाधान-२० : जैनशासन की मूलभूत विधि अनुसार देवद्रव्य का तो निधिभंडार ही करना होता था । श्रावक के 'देवद्रव्यवृद्धि' कर्तव्य के अमलीकरण से उसमें प्रतिदिन कुछ-न-कुछ पधराकर देवद्रव्य को प्रवर्द्धमान ही करना होता था । इसके अलावा उस निधि के प्रतिदिन दर्शन करने की विधि भी मिलती है । उस समय सुश्रावक भावना भाते हैं कि - 'आज तो हम अपने स्वद्रव्य का उपयोग कर परमात्मा के जिनबिंब-मंदिर निर्माण-जीर्णोद्धार आदि का पूरा लाभ ले सकते हैं, लेकिन कभी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयोगवश, दुर्भाग्यवश हम में से कोई भी समर्थ व्यक्ति हाजिर न हो, तब भी जगत के कल्याण में महान आलंबनरूप इन जिनबिंब एवं जिनमंदिरों का प्रभाव यथावत दीप्तिमान बना रहे, इस हेतु इस निधि का उपयोग हो ।

आजकल देश-काल की परिस्थिति, सरकार की अनिश्चित धारा-धोरणनीति आदि अनेक कारणों से निधि संवर्धन/संरक्षण को मूलभूत शास्त्रीय विधि का पालन करना और भी संदेहास्पद हो गया है । पूरा निधि ही सरकार के कब्जे हो जाए, ऐसी परिस्थिति का तेजी से निर्माण हो रहा है । ऐसे वातावरण में देवद्रव्य को सुरक्षित नहीं रखकर, उसका शास्त्र-मर्यादानुसार सुयोग्य क्षेत्र में इस्तेमाल हो जाए, यह जरुरी बन चुका है । अतः सबसे पहले जिन-जिन तीर्थों में जिनमंदिर जीर्ण बन चुके हैं, वहाँ स्वयं खोजकर सुयोग्य संचालन व्यवस्था निर्मित कर, देवद्रव्य लगा देना जरुरी है । वर्तमान काल में देवद्रव्य के इस्तेमाल का यह उत्तमोत्तम मार्ग है ।

इसके अलावा कहीं कभी किसी क्षेत्र विशेष में नूतन जिनालय की जरुरत खडी हो जाए, स्थानिय संघ सशक्त न हो एवं अन्य स्रोतों से भी पूरी राशि प्राप्त हो सके, ऐसी परिस्थिति न हो, तब देवद्रव्य में से भी उस नूतन जिनालय का निर्माण लाभ जरुर लिया जा सकता है । इस हेतु वर्तमान परिस्थिति का ख्याल कर गीतार्थ आचार्य भगवंतों ने सम्मति प्रदान की हुई है। फिरभी इस तरह से देवद्रव्य की राशि लगाते समय एक बात खास ध्यान में रखनी चाहिए कि उसी जिनालय के निर्माण में जितनी भी देवद्रव्य की राशि लगी हो, उस हेतु वहाँ पर... "यह जिनालय... संघ के देवद्रव्य की आय (आवक-ऊपज) में से निर्मित किया गया है ।' इस आशय का स्पष्ट लेख लिखना जरुरी है । क्योंकि-केवल संघ का नाम उस पर नहीं लिख सकते । केवल स्वयं के नाम की खातिर ही नूतन जिनालय में संघ के देवद्रव्य की आय में से राशि लगाने की इच्छा अधमकोटि की इच्छा है । ऐसों को देवद्रव्य का भोग लगाकर स्वयं का नाम कमाने का भयंकर पाप लगता ही है । अतः ऐसी रीति आजमाना किसी के लिए हितावह नहीं है । देवद्रव्य के इस्तेमाल में किसी भी स्वार्थकेन्द्रित पौद्गलिक लाभ को पाने की लालसा रखे बिना केवल देवद्रव्य की सुरक्षा एवं सदुपयोग का विचार ही सर्वोपरि होना चाहिए । अतःएव धर्मप्रेमी सुश्रावकों को चाहिए कि - जिनालय के जिर्णोद्धार-नूतननिर्माणादि कार्यों में आदि से अंत तक स्वयं निगरानी कर अपने कीमती समय का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भोग दे कर देवद्रव्य का सुयोग्य इस्तेमाल हो और दुरुपयोग-नाश तो बिल्कुल न हो इस हेतु पूरा ध्यान रखना चाहिए ।

निर्माण कार्य-शिल्प-घनफोट आदि गणित एवं तत्संबंधी व्यवहारों का अनुभव न होने से कई संघों एवं व्यक्तियों के हाथों लाखों-करोड़ों का देवद्रव्य व्यर्थ नष्ट हो जाता है । शिल्पी, सोमपुरा एवं पाषाण उद्योग के मांधाता इस क्षेत्र के अज्ञानी लोगों के अज्ञान का पूरा लाभ उठा लेते हैं, इसलिए इस कार्य में काफी ध्यान रख व्यवहार करना हितावह है ।

शंका-२१ : गुरुपूजन की आय (आमदनी) पर किसका अधिकार ?

समाधान-२१ : गुरु भगवंत कंचन (सोना-रूपा आदि धन) के त्यागी होने से पूजन की आय या अन्य किसी भी द्रव्य की आय के वे अधिकारी होते ही नहीं हैं । गुरुपूजन का द्रव्य शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार देवद्रव्य-जीर्णोद्धार आदि खाते में जाता है, अतः उसी खाते का ही उस पर अधिकार है । इस खाते की व्यवस्था-संचालन संघ करता है, अतः संघ के कब्जे में ही यह द्रव्य रखा जाए । साधु भगवंतों के किसी भी कार्य में इस द्रव्य का उपयोग नहीं हो सकता ।

शंका-२२ : पर्युषण में हमारे संघ में सर्व साधारण का चंदा किया जाता है । उसमें से मंदिरजी के केसर-चंदन आदि का व पुजारी की तनखा-वेतन आदि का खर्चा किया जाता है । घट जाने पर देवद्रव्य में से लिया जाता है । तो क्या यह योग्य है ?

समाधान-२२ : देवद्रव्य में से केसर-चंदन या पुजारी की तनखा आदि का खर्चा नहीं करना चाहिए । क्योंकि ये सभी कर्तव्य श्रावक को स्वयं ही करने के हैं । स्वयं के कर्तव्य करने हेतु देवद्रव्य की ओर नजर करना महापाप का कार्य है । अतः थोड़ी ज्यादा उदारता बरतकर ये सभी लाभ श्रावकों को स्वयं ही ले लेने चाहिए । इसके अलावा आज तक अज्ञानवश जितना भी पाप हुआ हो, उसका गीतार्थ गुरु भगवंत के पास प्रायश्चित्त कर संघ एवं संघ के सभ्यों को शुद्धि कर लेना ही आत्महितकर है ।

शंका-२३ : हमारे यहाँ संघ के सालाना हिसाब-किताब पेश नहीं किए जाते । सरकारी नियमों के अनुसार बहियों का ऑडिट करवाकर कागजात फाइल किए जाते हैं । सभ्यों की या संघ की सभा नहीं बुलाई जाती । आम आदमी को तो मंदिरजी में केसर घिसा तैयार मिल जाता है; अतः कोई बोलता नहीं । तो हमें क्या करना चाहिए ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-२३ : संघ के ट्रस्टियों एवं अग्रणियों से मिलकर प्रेमभाव से उन्हें समझाना चाहिए । संघ को विश्वास में लेने के लाभ समझाए जा सकते हैं । फिर भी शास्त्रविरुद्ध संचालन, व्यवस्था जारी रखे और कायदाकीय क्षतियाँ हो तो विवेकपूर्वक उचित कार्यवाही की जा सकती है ।

शंका-२४ : संघ की आमदानी की एफ.डी. (बैंक में मुदती जमाराशि) हो, मंदिर में जरूरत होने पर भी इस्तेमाल न हो, बाहरगाँव भी भेजी न जाती हो, कईबार विवेकपूर्ण कहने पर भी कोई ध्यान न दिया जाता हो, तो क्या हम बोली हुई राशि (चढ़ावा आदि) अन्य सुयोग्य स्थान में भेज दें ? उसकी स्वीकृति को (रसीद) ट्रस्ट में जमा करवा दें ? मार्गदर्शन दें ।

समाधान-२४ : जिस स्थान में वहीवट (संचालन-व्यवस्था) शास्त्रानुसारी न हो, ऐसे स्थानों में बोलियाँ बोलना आदि किसी भी प्रकार का लाभ न लेते हुए जहाँ शास्त्रानुसारी व्यवस्था हो, वहीं ऐसा लाभ लेना चाहिए । फिर भी अज्ञानवश (पूर्व जानकारी के अभाव में) लाभ ले लिया हो, तो अग्रणियों को प्रेमपूर्वक समझाएँ । किसी भी तरह न समझे तो गीतार्थ गुरु भगवंत का मार्गदर्शन लेकर उचित रीति से, सुयोग्य स्थान में अन्य कुछेक व्यक्तियों की साक्षी से वह राशि इस्तेमाल कर उसको स्वीकृति (रसीद) उस संघ में जमा कर सकते हैं । परंतु दूसरी बार तो स्पष्टता करके ही लाभ लेने का भाव रक्खें ।

शंका-२५ : अंजनशलाका एवं प्रतिष्ठा के कार्य में आजकल काफी धन का व्यय हो रहा है । बोलियाँ अच्छी लगी होने से ट्रस्टीवर्ग व्यय भी 'अच्छा करना चाहिए' - ऐसा सोचकर एक रुपये के स्थान पर पाँच रुपये लगा देते हैं । क्या यह योग्य है ? अयोग्य दिखावा काफी बढ़ गया है - ऐसा नहीं लगता ? ऐसे महोत्सवों में अन्य जातियाँ अपने पैसों पर मजा उड़ा रही हैं ।

समाधान-२५ : आजकल रुपया अपना मूल्य गँवा बैठा होने से 'काफी धन व्यय हो रहा है' - ऐसा लगता है । पूर्वकाल में जो उदारता दिखती थी, उसके तो आज दर्शन भी कहीं कभीकभार ही होते हैं । बाकी एक बात सच है कि - कई संघ-अग्रणी १ - धर्मशास्त्रों का ज्ञान न होने के कारण, २ - धर्मगुरुओं से मार्ग-दर्शन न पाने के कारण, ३ - दुनियाई व्यवहारों का भी पूरा अनुभव न होने के कारण एवं ४ - कई बार देखादेखी के कारण भी संघ के पैसों को अनावश्यक उड़ा देते हैं । लाखों रुपयों का व्यय करने पर भी जो शासनप्रभावना होनी चाहिए, वह होती भी नहीं । इसके विपरीत कुछ प्रौढ श्रावक ऐसे भी देखे हैं कि - जो रुपये का काम बारह आनों में, फिर भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सवाया-अच्छा कर दिखाते हैं । उनकी चकोर अनुभव दृष्टि और पकड़ इतनी विशाल एवं सूक्ष्म होती है कि - अनेक घपलों को केवल अपनी नजर से ही पकड़ लेते हैं । शिल्पी एवं सोमपुरा भी उनके आगे अपनी चाल खेल नहीं सकते ।

जिनाज्ञा एवं जयणा का पालन होता हो तो लाखों या करोड़ों का व्यय भी ज्ञानी की दृष्टि में 'निरर्थक-व्यय' नहीं है और जिनाज्ञा-जयणा का पालन न हुआ तो दुनिया की दृष्टि से 'सही-योग्य' व्यय भी ज्ञानी की दृष्टि से 'निरर्थक-व्यय' ही है ।

अयोग्य दिखावा करना उचित नहीं है एवं योग्य दिखावा तो करना ही चाहिए । क्योंकि - "आडंबर=योग्य दिखावे के साथ धर्मकार्य करना चाहिए" - यूं ज्ञानियों का वचन है । यहाँ आडंबर शब्द आजकल 'निरर्थक-व्यय' अर्थ में इस्तेमाल होता है, वह अर्थ यहाँ प्रस्तुत नहीं है । परंतु ठाट-वाट से, धर्म का बहुमान बढ़े ऐसे तौर-तरीके के रूप में प्रस्तुत है । अन्य जातियाँ जैन संघ की उदारता पर निभे, यह तो जैनों को शोभारूप है । जैन समाज-संघ महाजन के नाते सदा ही बड़े भाई के स्थान पर रहते आया है । ऐसे प्रसंगों में जरूरी उदारता रखने से अन्य जातियाँ संतुष्ट रहे, यह कुल मिलाकर अच्छा ही है । अतःएव ऐसे अवसर पर अनुकंपा दानादि की भी विधि है, जिसे शास्त्रकारों ने धर्मप्रभावक दान कहा है ।

शंका-२६ : स्नात्र पूजा में त्रिगढे (मेरु/समवसरण आकार का सिंहासन) के नीचे जो श्रीफल रखा जाता है, वह प्रतिदिन नया रखना जरूरी है या एक ही चल सकता है ? उसका मूल्य भंडार में डालें तो चल सकता है? अगर चांदी का श्रीफल हमेशा के लिए रख दें तो चल सकता है ? ऐसे करने पर नकरा भरना आवश्यक है ?

समाधान-२६ : स्नात्र पूजा में त्रिगढे के नीचे प्रतिदिन नया ही श्रीफल स्थापित करना जरूरी है । पुराना (एकबार चढ़ाया हुआ) श्रीफल दुबारा काम नहीं आता । क्योंकि एकबार चढ़ा देने से वह प्रभु-निर्माल्य गिना जाता है । उसे बेचकर आया मूल्य देवद्रव्य में जमा करना चाहिए । चांदी का श्रीफल बनाकर प्रभु के हाथ में रख सकते हैं, पर त्रिगढे के नीचे प्रतिदिन नूतन श्रीफल चढ़ाने के स्थान पर नहीं चढ़ा सकते । कोई देश-विशेष या संयोग-विशेष में ताजा श्रीफल न ही मिलने के कारण किसी ने चांदी का श्रीफल रखा हो तो उसे दृष्टांत बनाकर सर्वत्र वैसा नहीं कर सकते । अतः सदा ही ताजा श्रीफल प्राप्त कर चढ़ाने का ध्यान रखें । ऐसी स्थिति में चांदी का श्रीफल चढ़ाने पर सुयोग्य नकरा देवद्रव्य में भरना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंका-२७ : चैत्यवंदन होने के बाद स्वस्तिक पर चढ़े अक्षत, द्रव्य, फल व नैवेद्य का उपयोग कौन करे ?

समाधान-२७ : प्रभु पूजा में प्राप्त अक्षत, द्रव्य, फल व नैवेद्य यह देवद्रव्य ही है । इसका उपयोग जिनमंदिर के जिर्णोद्धार या नूतन जिनमंदिर के निर्माण में ही शास्त्रीय रीति से करना योग्य है । श्रावकों को समुचित ध्यान रख कर यह पूरा का पूरा द्रव्य योग्य रीति से बेचकर सुयोग्य मूल्य उपजाना चाहिए । चढ़ाया गया यह द्रव्य पुजारी या जिनालय आदि के अन्य किसी भी नौकर को पगार के रूप में या अन्य किसी रूप में नहीं दे सकते । ऐसा करने से देवद्रव्य के विनाश का पाप लगता है । यदि इस तरह नौकरों को यह द्रव्य दिया जाता है और संघ या संघ-सदस्यों का कोई कार्य इन नौकरों द्वारा होता हो - तो ऐसे कार्य करवानेवालों को भी देवद्रव्य के उपभोग का पाप लगता है । देवद्रव्यनाश एवं देवद्रव्य-उपभोग के जो कातिल दुष्परिणाम एवं भवभ्रमण आदि दोष शास्त्र में बताए हैं, उन्हें पढ़ने के बाद निर्माल्य देवद्रव्य के हिसाब-किताब-व्यवस्थापन में उपेक्षा करना किसी भी श्रमणोपासक को रास आए-ऐसा नहीं है ।

शंका-२८ : जिनमंदिर में चढ़ाया गया फल-नैवेद्य (नारीयल, सुपारी, बादाम, शक्कर आदि भी) यदि दुकानवाले को बेच दें तो उसे ज्यादा से ज्यादा मुनाफा होता है और जिनमंदिर को ज्यादा से ज्यादा घाटा ! इससे बेहतर कोई अन्य शास्त्रीय अभिगम अपना सकें ?

समाधान-२८ : दुकानवाले को बेचें तो वह भी उचित मूल्य से ही बेचना चाहिए । यदि ऐसा न हो तो देवद्रव्य को घाटा पहुँचता है । यदि इस तरह से भी घाटा रोक न सको तो अन्य एक मार्ग भी योग्य लगता है ।

जिनालय की भक्ति हेतु ज्यों अष्टप्रकारी पूजा के द्रव्य को समर्पित करने की वार्षिक बोलियाँ बुलवाई जाती हैं वैसे निर्माल्य द्रव्य की भी बोलियाँ बुलवाई जा सकती है । इसमें - हर महिने के फल-नैवेद्य के देवद्रव्य के घाटे को बचाने हेतु बारह महिनों के फल-नैवेद्य के बारह नाम अंकित किएं जाएं या उसकी बोलियाँ बुलवाई जाए वह द्रव्य देवद्रव्य में जमा करके उसमें से खरीदा हुआ फल-नैवेद्य गाँव-शहर के भिक्षुकों-अपंगों आदि अनुकंपा योग्य अजैन लोगों को दे दिया जाए, तो इससे शासन की प्रभावना के साथ-साथ देवद्रव्य का विनाश रोकने का भी बड़ा लाभ प्राप्त हो सकता है। एक स्थान पर रूढ़ हो जाने से अनुकरणप्रिय अन्य संघों में भी इसका व्यापक प्रचार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होगा और सर्वत्र देवद्रव्य सुरक्षित बनेगा । संघजन इसमें थोड़ी उदारता से लाभ लें-ऐसा हमें लगता है ।

शंका-२९ - राजस्थान में 'अबोट दीया' चलता है, जिसे गुजरात में अखंड दीपक कहते हैं, तो उसका विधान किस शास्त्र में आता है ? उसकी क्या जरूरत ?

समाधान-२९ : जिनमंदिर में या गर्भगृह में कायमी अबोट दीया या अखंड दीपक रखने का विधान किसी ग्रंथ में हो ऐसा जाना नहीं है । शांतिस्नात्र, प्रतिष्ठा, अंजनशलाका जैसे विशिष्ट प्रभावक अनुष्ठानों में अखंड दीपक करने की विधि आती है । पर वह कार्य संपन्न हो जाने पर उसका विसर्जन कर दिया जाता है । इस विसर्जन के भी निश्चित मंत्र विधि-विधान के ग्रंथों में हैं ।

शंका-३० : 'अखंड दीपक' का लाभ क्या है ? क्या यह देवद्रव्य से किया जा सकता है ? क्या उसे दीपक-पूजा के तौर पर किया जाता है ?

समाधान-३० : अखंड दीपक, विशिष्ट विधानों में विधि की पवित्रता, देवताई सानिध्य की प्राप्ति आदि कारणों से किया जाता हो - ऐसी संभावना है । जिनमंदिर में अखंड दीपक कायमी करने के पीछे भी ऐसे ही कुछ कारण रहे हों ऐसा लगता है । परंतु उसका विधान शास्त्रों में देखने में नहीं आया है इस कारण से देवद्रव्य का व्यय इस कार्य में करना योग्य नहीं लगता । परमात्मा की दीपक पूजा तो अलग से दीपक या आरती करने से हो सकती है ।

शंका-३१ : देवद्रव्य से बनाए गए उपाश्रय-आराधना भवन में कौन-कौन-सी धार्मिक प्रवृत्तियां हो सकती हैं ?

समाधान-३१ : उपाश्रय-आराधना भवन देवद्रव्य से बनाया ही नहीं जा सकता । इसलिए उनमें कौन-कौन-सी धार्मिक प्रवृत्तियां हो सकती हैं, यह प्रश्न ही नहीं उठता । फिर भी किसी ने देवद्रव्य से उपाश्रय-आराधना भवन बनवाया हो अथवा उसमें थोड़ा बहुत देवद्रव्य उपयोग किया हो तो उसमें कोई भी सामान्य धार्मिक प्रवृत्ति नहीं की जा सकती । इसमें अधिक से अधिक जिनमंदिर बनाकर परमात्मा की प्रतिमा बिराजमान कर जिनभक्ति ही की जा सकती है ।

शंका-३२ : देवद्रव्य से किसी संघ ने उपाश्रय-आराधना भवन बनाया हो और श्रीसंघ सामान्य कार्यों में उसका उपयोग भी करता हो तो उस स्थान का उपयोग करने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के लिए नकरा दें तो चल सकता है ? देवद्रव्य की पूंजी का ब्याज देते रहें तो चल सकता है ?

समाधान-३२ : देवद्रव्य से उपाश्रय बना दिया हो तो गीतार्थ गुरु का मार्गदर्शन लेकर जितनी रकम देवद्रव्य की उपयोग हुई हो वह मूल रकम उसके बाजार में चल रहे ब्याज दर से आज तक के ब्याज की रकम के साथ देवद्रव्य में भरपाई कर देनी चाहिए । देवद्रव्य अथवा देवद्रव्य से बनी किसी भी वस्तु को श्रावक के कार्य में सीधा या परोक्ष रूप से उपयोग करना भयंकर कोटि का पाप है । यह दुर्गति की परम्परा बनाने वाला महापाप है । इसलिए उसकी शास्त्र-सापेक्ष मार्ग से तुरंत शुद्धि कर ही देनी चाहिए ।

ऐसे स्थान पर श्री संघ को श्री जिनभक्ति के अतिरिक्त अन्य कोई भी आराधना करनी-करानी नहीं चाहिए । ऐसे स्थान पर 'देवद्रव्य से यह उपाश्रय बना है ।' अथवा 'इस उपाश्रय में देवद्रव्य उपयोग किया गया है' ऐसे भाव का बड़े अक्षरों में बोर्ड रखना हितकर है ।

जब तक शुद्धि का कार्य संभव न हो तब तक मूल पूंजी का बाजार भाव से चलता ब्याज भरना ही चाहिए । मात्र संघ द्वारा निर्धारित अथवा मनमाने ढंग से नकरा देकर ऐसे स्थान का उपयोग करना भी आत्मनाश का ही मार्ग है ।

देवद्रव्य प्राचीन मंदिरों के जीर्णोद्धार, नूतन मंदिरों के निर्माण आदि शास्त्रविहित कार्य में ही उपयोग किया जा सकता है । इसमें से उपाश्रय निर्माणादि करना कदापि उचित नहीं है ।

शंका-३३ : साधु-साध्वी की वैयावच्च का द्रव्य महात्मा की व्हील-चेयर के लिए आवंटित किया जा सकता है ?

समाधान-३३ : व्हील-चेयर उपयोग करना साधु-साध्वी के संयम के लिए अत्यंत घातक है । इसलिए उसे प्रोत्साहन देना बिलकुल योग्य नहीं । व्हील-चेयर इस्तेमाल करने के गंभीर नुकसानों के बारे में 'व्हील-चेयर की बीस व्यथाएँ' नामक लेख पू.आ. श्री **अशोकसागरसूरिजी** महाराज ने प्रकाशित किया है । इसी प्रकार वि.सं. २०४४ के कुंभोजगिरि तीर्थ में पू.आ.श्री **भुवनभानुसूरिजी** महाराज तथा उनके समुदाय के वरिष्ठ साधु-भगवंतों की निश्रा में उनकी आज्ञा से एक महात्मा ने व्हील-चेयर के उपयोग के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भयंकर नुकसानों के बारे में दर्द भरे शब्दों में प्रकाश डाला है । यह प्रवचन **'दिव्यदर्शन'** साप्ताहिक में भी शब्दशः मुद्रित हुआ है । संयमप्रेमी वयपर्यायवृद्ध पू.आ.श्री विजय **रामसूरिजी** महाराज ने (डहेलावाला) भी व्हील-चेयर के उपयोग के प्रति सख्त नाराजगी एवं असहमति बार-बार दर्शाई है ।

आज व्हील-चेयर के लिए वैयावच्च की रकम आवंटित की जाएगी तो कल मोटरकार अथवा रेल्वे आदि के लिए भी वैयावच्च की रकम के उपयोग करने की बात आएगी । इसलिए ऐसे अनिष्टों में साधु-साध्वी वैयावच्च के पैसों का उपयोग न करना ही हितकर है ।

शंका-३४ : इन्द्रमाला आदि की बोलियां यतियों के समय में शुरु हुई हैं। ऐसा कुछ लोग कहते हैं - यह बात सही है ?

समाधान-३४ : इन्द्रमाला आदि की बोलियां-उछामणी की प्रथा काफी प्राचीन है । कई शास्त्रों में इससे सम्बंधित उल्लेख देखने को मिलते हैं । ऐतिहासिक प्रबंध, चरित्र तथा पट्टावलियों में भी अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं ।

कलिकाल सर्वज्ञ पू.आ.श्री हेमचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा की निश्रा में महाराजकुमार-पाल के संघ के अवसर पर शत्रुंजय-१, गिरनार-२ तथा प्रभासपाटण-३ में उछामणी द्वारा तीन बार संघमाला गृहीत करके पहनने-पहनाने की क्रिया हुई थी । इसलिए उस समय में (विक्रम की बारहवी-तेरहवीं सदी) उछामणी की प्रथा अत्यंत दृढ़मूल एवं सार्वत्रिक बनी थी । इस माला का द्रव्य विविधतीर्थ के देवद्रव्य में जमा हुआ है ।

'युगप्रधान गुर्वावली' में चौदहवीं सदी के छ'री पालक संघों के तीर्थयात्रा के अवसर पर उछामणी के तथा उनका द्रव्य देवद्रव्य में जमा होने के अनेक उल्लेख मिले हैं । यहां इनमें से दो-चार उल्लेख का वर्णन करते हैं ।

विक्रम संवत्-१३२९ में पालनपुर से संघ निकला । यह संघ तारंगा आया । यहां इन्द्रमाला आदि की आय ३००० द्रम्म हुई थी । आगे खंभात आने पर पुनः इन्द्रमाला आदि होने पर आय ५००० द्रम्म हुई थी । शत्रुंजय तीर्थ में १७,००० द्रम्म की आय हुई थी । गिरनार पर ७,०९७ द्रम्म की आय हुई थी । यह आय अक्षयपद पर अर्थात् गुप्त भंडार में हुई थी । गुप्त भंडार (नीवि) देवद्रव्य का होता था ।

अलग-अलग उछामणी द्वारा जो आय देवद्रव्य में हुई थी, उसका संक्षिप्त उल्लेख

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करनेवाले इस ग्रंथ में कहा गया है कि, **'शत्रुंजये देवभाण्डागारे उद्देशतः सहस्त्र २० उज्जयन्ते सहस्त्र १७ संजाता ।'**

भावार्थ : 'शत्रुंजय में देव के भंडार में विविधलाभों के चढ़ावे से २० हजार द्रम्म तथा गिरनार में १७ हजार द्रम्म की आय हुई थी ।'

वि.सं. १३६६ के उल्लेखानुसार **'बीजडप्रमुखसकलसुश्रावकैः श्री इन्द्रपदादि प्रोत्सर्पणा विहिता ।'**

भावार्थ : बीजड़ आदि सभी सुश्रावकों द्वारा श्री इन्द्रपद आदि की प्राप्ति के लिए प्रोत्सर्पणा की गई ।

प्रोत्सर्पणा अर्थात् उछामणी । प्र. + उत्सर्पणा = प्रोत्सर्पणा शब्द बनता है । विशिष्ट प्रकृष्ट ढंग से धन का त्याग करके ऊंचा चढ़ने के क्रिया करके लाभ प्राप्त करने की रीत अर्थात् प्रोत्सर्पणा । जो आज बोली-उछामणी आदि के नाम से प्रसिद्ध है ।

वि. सं. १३८० में दिल्ली से आए संघ की शत्रुंजय पर माला होने पर उसमें प्रतिष्ठा माला, इन्द्रपद प्राप्त करना, कलश स्थापना करना, ध्वजा चढाने आदि समस्त लाभ सम्बंधी उछामणी होने पर कुल ५० हजार द्रम्म की आय हुई थी । यह भी **'श्री युगादि-देवभाण्डागारे-'** श्री आदिनाथदादा के भंडार में अर्थात् देवद्रव्य में जमा हुई थी ।

इसी प्रकार वि.सं. १३८१ में भी भीलड़ी से शत्रुंजय आए संघ की माला आदि की उछामणी के १५ हजार द्रम्म हुए थे वे भी **'श्री युगादिदेवभाण्डागारे'** अर्थात् दादा के भंडार में जमा हुए थे ।

ये और ऐसे अनेक उल्लेखों को देखने के बाद इन्द्रमालादि को पहनने आदि के लाभ प्राप्त करने के लिए होनेवाली उछामणी बोलियों की प्रथा को 'यतियों के समय में शुरू हुई' ऐसा कहना-प्रचारित करना बिल्कुल अर्थहीन और सत्य से परे है । इसी प्रकार श्री जिनेश्वर देव को उद्देशित करके होनेवाली इन मालाओं आदि का द्रव्य देवद्रव्य में ही जमा होना चाहिए यह और ऐसे उल्लेखों से भी सिद्ध होता है ।

शंका-३५ : देवद्रव्य का विनाश होता हो तो साधु को उसे रोकना चाहिए । न रोके तो उसके महाव्रतों की शुद्धि नहीं रहती । ऐसा धर्मसंग्रह में पढ़ने को मिलता है । इस बात को कहनेवाला कोई पाठ किसी आगम में भी है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-३५ : 'पंचकल्प' नामक छेदग्रंथ में यही बात इन शब्दों में कही गई है ।

x x **जया पुण पुव्वपवन्नाणिखेत्त - हिरण्णाणि दुपय-चउप्पयाई जइ भंडं वा चेइयाण लिंगत्था वा चेइयदव्वं राउलबलेण खायंति, रायभडाइ वा अच्छिंदेज्जा, तथा तवनियम-संपउत्तो वि साहू जइ न मोएइ, वावारं न करेइ तया तस्स सुद्धी न हवइ, आसायणा य भवइ ।**

भावार्थ : जिनमंदिर को मिले खेत, स्वर्ण, दास-दासी, पशु, बर्तन (उपकरण) अथवा चैत्य (देव) द्रव्य को राजा की सेना (सैनिक) नष्ट करने का प्रयास करें तब तप-नियम में रत साधु देवद्रव्य को उनसे न बचाए, इसके लिए पुरुषार्थ न करे तो उसकी (महाव्रतों की) शुद्धि नहीं होती; परमात्मा की आशातना भी होती है ।

'संबोध प्रकरण' जैसे ग्रंथरत्न में तो उपेक्षा करनेवाले साधु- 'अनंत संसारी' होते हैं, ऐसा कहा गया है । अनेक ग्रंथों में यह गाथा इस प्रकार दर्शायी गई है ।

चेइयदव्वविणासे तद्दव्वविणासणे दुवियभेए ।
साहू उविक्खमाणो अणंतसंसारिओ भणिओ ।।

भावार्थ : 'चैत्य द्रव्य के विनाश के समय, दो प्रकार के चैत्य द्रव्य के विनाश में यदि साधु उपेक्षा करता है तो वह 'अनंत संसारी' कहा गया है ।'

शंका-३६ : तीर्थों में जिनबिंब बहुत होते हैं । कई स्थानों पर इस कारण प्रक्षालपूजा नहीं होती । पुजारी आकर भींगे पोंछे से साफ कर जाता है । आशातना टालने के लिए प्रतिमाजी कम नहीं की जा सकती ?

समाधान-३६ : 'स्तवपरिज्ञा' आदि प्राचीन अनेक ग्रंथों में कहा गया है कि जिनप्रतिमा की प्रक्षालपूजा प्रतिदिन होनी ही चाहिए । प्राचीन तीर्थों में अनेक जिनबिंब होने से ऐसा हो सकता है । ऐसा हो तब ट्रस्टी तथा संचालकों को प्रतिदिन प्रक्षालादि पूजा ठीक से हो ऐसा प्रबंध करना ही चाहिए । ऐसी व्यवस्था यदि संभव न हो तो प्रतिमाजी रखने का मोह कम करके जरूरतवाले स्थानों में सम्मान बना रहे इस प्रकार प्राचीन प्रतिमाजी देने चाहिए । जितने भी जिनबिंब रखें उनकी प्रतिदिन प्रक्षालादि पूजा तो होनी ही चाहिए ।

शंका-३७ : श्रावक के लिए प्रभु की आज्ञाएं क्या हैं ? उन्हें कहां से जानें ?

समाधान-३७ : योगशास्त्र, श्राद्धदिन कृत्य, श्राद्धविधि एवं धर्मसंग्रह भाग-१ आदि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रंथ गुरु भगवंत के पास बैठकर बराबर पढ़ने-समझने से श्रावक के लिए प्रभु की क्या आज्ञाएं हैं, इसका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । इसके अलावा धर्मक्षेत्र के संचालन की जिम्मेदारी सिर पर हो ऐसे पुण्यात्मा श्रावक को द्रव्य सप्ततिका ग्रंथ भी उपरोक्त पद्धति से पढ़ना चाहिए ।

शंका-३८ : जिनेश्वर परमात्मा की मूर्ति घर जिनालय में है, किन्तु उनके साथ ही हनुमानजी तथा लक्ष्मीजी आदि अन्य धर्मियों की मुद्रावाली मूर्तियां भी हैं तो ऐसे घर जिनालय के दर्शनार्थ जाएं ?

समाधान-३८ : घर जिनालय अथवा संघ जिनालय में मात्र जिनेश्वर परमात्मा, सद्गुरु-निर्ग्रंथ तथा मूलनायक परमात्मा के शासन की सुरक्षा की जिम्मेदारी जिन पर समवसरण में खुद परमात्मा ने डाली है, उन्हीं शासनदेव-यक्ष-यक्षिणी की शिल्पविधि अनुसार प्रतिमा स्थापित की जा सकती है और जहां इसी तरह से प्रस्थापित की गई हो, वहीं पर संघ को दर्शन-पूजनार्थ जाना चाहिए । अन्य धर्मियों के देवी-देवताओं तथा गुरुओं की मूर्तियां जहां प्रस्थापित की जाती हैं, उन स्थानों पर जाने से मिथ्यात्व लगता है । वहां जाने से श्री जिनराज तथा जैनधर्म की लघुता करने का पाप लगता है ।

'दादा भगवान' के नाम से प्रचारित गृहस्थ मत के मंदिरों में मूल गभारा में श्री सीमंधरस्वामीजी की तथा बगलवाले गर्भगृहों में श्री कृष्ण की तथा श्री शंकर भगवान की प्रतिमा प्रस्थापित देखने को मिलती है । ऐसे स्थान पर जाना भी मिथ्यात्व की ही करनी है । वहां जाकर श्री सीमंधर प्रभु को देखने-पूजनेवाला मिथ्यात्व को आमंत्रण देकर अपने आत्मघर में लाता है ।

शंका-३९ : शरीर की असहनीय गर्मी के कारण घर जिनालय अथवा संघ जिनालय में गभारा अथवा बाहर शांति से तीन-चार घंटे जिनभक्ति हो सके इसके लिए ए.सी. (एयरकंडीशनर) मशीन रखे जा सकते हैं ?

समाधान-३९ : घर जिनालय हो अथवा संघ जिनालय, इनमें कहीं भी ए.सी. तो क्या पंखा भी नहीं लगाया जा सकता । जिनभक्ति शांति से हो, इस बहाने से यह और ऐसी अन्य कई बातें, दलीलें पेश की जाएगी । इसलिए विवेकवान प्रभुभक्तों को इस मार्ग पर न चलना ही हितकर है । यह शीथिलाचार की ओर धकेलने व छःकाय जीवों की हिंसा का मार्ग है । इसलिए ऐसे सुविधागामी और आरामतलब मार्ग से बचना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंका-४० : चांदी को चौबीसी के भगवान अलग हो गए हैं । पूजा में काम आ सकते हैं या फिर विसर्जन कर दें ?

समाधान-४० : कुशल कारीगर के पास विधि का जतन करते हुए चांदी को तार आदि द्वारा प्रतिमाजी को फिर से सुयोग्य स्थान पर स्थापित कर देना हितावह है । यूं ही विसर्जन करने का मार्ग योग्य नहीं है । चौबीसी के अलग हुए भगवान स्वयं खंडित हो गए हों तो विसर्जन के बारे में विचार करना जरूरी हो जाता है । इस बारे में प्रत्यक्ष देखने पर ही जरूरी परामर्श दे सकते हैं ।

शंका-४१ : भगवान के अंग पर बरास-पूजा हो सकती है या नहीं ? फिलहाल ऐसी किंवदंती सुनाई देती है कि बरास में केमिकल आता है । सत्य क्या है, यह बताने की विनंती है ।

समाधान-४१ : बरास में केमिकल आता हो, तो उसके बदले केमिकल-रहित बरास प्राप्त करने का पुरुषार्थ करना चाहिए । ऐसा पुरुषार्थ करने की बजाय 'केमिकल' का काल्पनिक भय खड़ा कर बरास के प्रयोग का ऐकांतिक निषेध करना - यह किसी भी तरह से योग्य प्रतीत नहीं होता । 'केमिकल' नाम मात्र से वस्तु का विरोध या निषेध कर देने का सिद्धांत यदि स्थापित कर दें, तो ज्यादातर विधियों का आज ही उच्छेद कर देना पड़ेगा । ऐसा करने से तो आलंबन ही नष्ट हो जाए । विधिमार्ग की स्थापना जब तक सर्वांश में न की जाए, तब तक प्रचलित विधि में हो रही अविधि को आगे कर समूल-विधि का विरोध कर समूल उच्छेद नहीं कर सकते । क्योंकि ऐसा करने से पूरा विधि-मार्ग ही खतरे में आ गिरेगा ! केसर, कस्तूरी, बरास, भीमसेन कपूर, शुद्ध कपूर आदि सुगंधी द्रव्यों से मिश्रित चंदन से जिनबिंब की पूजा करने के अनेक विधान, उल्लेख एवं पाठ मौजूद हैं । अतः बरास मिश्रित चंदनपूजा शास्त्रोक्त ही है । इसमें कोई शंका न करें । वस्तु अच्छी व सच्ची प्राप्त हो इसका ध्यान जरुर रखें ताकि जिनभक्ति सुंदर हो सके ।

शंका-४२ : बडे तीर्थों में कुछ देवलियों पर श्रीफल के तोरण लगाए जाते हैं, उसका क्या महत्त्व है ? क्या यह शास्त्रीय है ?

समाधान-४२ : किसी भी तीर्थ या जिनालय में या अन्य किसी भी देव-देवी के स्थानों में भी, देवलियों के ऊपर इस तरह श्रीफल के तोरण बांधना-लगाना; इसमें किसी शास्त्रीय विधि का पालन हो रहा है - ऐसा बिल्कुल नहीं लगता है । यह एक देखादेखी से शुरु हुआ रिवाज है और भोग भूखे लोगों ने सांसारिक वासनाओं की पूर्ति हेतु ऐसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिवाज शुरु किए हों - ऐसा देखा जाता है । धर्मार्थीजन ऐसी कोई प्रवृत्ति न करें यही उचित है । अजैनों में कुछ स्थानों में यह प्रथा है, उसको देखादेखी अपने यहाँ भी कुछ लोगों द्वारा यह प्रवृत्ति शुरु की गई है, जो उचित नहीं है ।

शंका-४३ : शास्त्र में कहा है कि संघर्ष न करें, लेकिन धार्मिक बातों के विवाद खड़े कर, संघर्ष कर जो कोर्ट तक मामला ले जाया जाता है, वह कितना जायज है ?

समाधान-४३ - धर्म जब आत्मीय लगेगा, तभी यह बात समझ में आएगी । सौ-दोसौ रुपयों जैसी नाचीज चीजों के लिए सगे बाप या भाई के खिलाफ तीन-तीन कोर्टों तक जानेवाले लोग धर्म-सिद्धांतों की रक्षा के अवसर पर "मौन व शांति" की बातें करते हैं - तब आश्चर्य होता है ।

शास्त्रों में पौद्गलिक, त्याज्य चीजों हेतु संघर्ष करने की मनाही है । व्यक्तिगत मान-अपमान के वशीभूत होकर संघर्ष करने की मनाही है । लेकिन, धर्म, धर्म के सिद्धांत, धर्मगुरु का गौरव, धर्म स्थानों की स्वायत्तता, तीर्थरक्षा, जिनाज्ञा... ऐसे-ऐसे सभी आत्म-हितकर व सर्वजीव-कल्याणकर मुद्दों की रक्षा हेतु अनिवार्य रूप से संघर्ष करने की कहीं भी मना नहीं है । शासन रक्षा हेतु संघर्ष करना - यह भी एक आराधना है । ऐसे अवसर पर मौन रहने में तो साधु के भी पांचों महाव्रतों का भंग हो जाता है ।

हाँ, एक बात जरुर है कि यह संघर्ष करते समय भी हृदय के किसी भी कोने में किसी भी व्यक्ति के प्रति व्यक्तिगत अदावत या वैरभाव, द्वेष, तिरस्कार आदि की भावना नहीं होनी चाहिए । इस संघर्ष में हार-जीत की कषायिक परिणतियाँ भी नहीं स्पर्शनी चाहिए । यह संघर्ष भी विवेक को त्याग कर नहीं होना चाहिए ।

न्यायपूर्वक, विनय-विवेकपूर्ण सभी प्रयत्न करने के बावजूद भी यदि सत्य-सिद्धांतों को निःश्वास बनाया जाता हो, सत्य के आराधकों को अवरुद्ध किया जाता हो, सत्य के आराधकों को कहीं भी खड़े रहने की जगह न रहे ऐसी परिस्थिति का आयोजन किया जाता हो, तब अंतिम उपाय के तौर पर न्यायपीठ में गए बिना और कोई चारा नहीं रहता । दिगंबरों ने श्वेतांबर तीर्थों का कब्जा-पूजा आदि का अधिकार पाने के लिए तकलीफें देनी शुरु की, तब श्वेतांबर संघ को उनके सामने न्याय पाने हेतु आखिरकार कोर्ट का ही आश्रय लेना पड़ा था । आज भी लेना पड़ रहा है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वकाल में जैनाचार्यों द्वारा असत्य का प्रतिकार करने के लिए राज्याश्रय से चलती कोर्टों में जाने के अनेक प्रसंग इतिहास में उत्कीर्ण हैं ।

आठ प्रभावक जैनाचार्यों में एक 'वादी' नामक प्रभावक हैं । सत्य-सिद्धांत रक्षा के प्रसंग पर ऐसे वादीजन राजा की कोर्टों में जाकर असत्य-वादियों को परास्त कर जैन-शासन का विजयध्वज लहराते थे ।

वीतराग जैसे स्वयं वीतराग परमात्मा को भी ऐसे श्रेष्ठ वादियों की पर्षदा होती थी । यह सब इतना स्पष्ट होने पर भी 'कोर्ट' के नाम से संघ के अबुध आराधकों को भड़काने की कोशिश करना कितना उचित है ? यही विचारणीय है ।

शंका-४४ : फिलहाल कुछ स्थानों पर 'बर्ख मांसाहार है' इस आशय को जताते चतुरंगी छवियों से भरे चौपन्ने धड़ल्ले से बांटे जा रहे हैं; उनमें दावे से साथ कहा गया है कि - बर्ख मांसाहारी चीज़ है' तो क्या यह बात सत्य है ? क्या बर्ख इस्तेमाल करने से या खाने से मांसाहार का पाप लगता है ?'क्या भगवान को आंगी में इसका इस्तेमाल किया जाए ?

समाधान-४४ : 'बर्ख मांसाहार है' ऐसा प्रचार बिल्कुल खोखला व न्यायहीन है । अहमदाबाद व मुंबई में भी बर्ख बरसों से बनते हैं । इसके ग्राहक ज्यादातर जैन ही हैं । कई जैन अग्रणी तो होलसेल में बर्ख रखते हैं । इस हेतु वे हमेशा बर्ख बनानेवाले कारीगरों से सम्पर्क किए रहते हैं । उनकी दुकानों-कारखानों में भी अनेकबार आते-जाते करते रहते हैं । अहमदाबाद में तो बर्ख-निर्माण का कार्य रोड़ से गुजरते आसानी से नजर आता है । इन सभी जैनों की आंखों में धूल फेंककर "बर्ख बनाने हेतु मांसआंत आदि का इस्तेमाल होता है" ऐसा मानना अतिशयोक्तिपूर्ण है । कहीं कभी-कभार वैसे ही बनता है - ऐसे कहना योग्य नहीं है । कुछेक सालों पहले अनेक आचार्यदेवों ने एक-आवाज से 'बर्ख मांसाहारी' होने की बात को नकारा था ।

प्रतिष्ठा के प्रसंग पर धातु के भगवानों को तथा ध्वजादण्ड-कलश आदि को सोना चढ़ाया जाता है । यह सोना सोने का बर्ख बनाकर चढ़ाया जाता है । इसलिए बर्ख बनानेवाले कारीगरों को नियुक्त किया जाता है । इन कारीगरों को काम करते कईयों ने देखा है । उनके कार्य में किन-किन चीजों का इस्तेमाल होता है ? - इसका काफी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सावधानी एवं सतर्कता से जायजा सुश्रावकों ने लिया है : उसमें कहीं भी बर्ख बनाने हेतु 'मांस' पदार्थ का इस्तेमाल होना ज्ञात नहीं हुआ है ।

बर्ख बनानेवाले कारीगर निश्चित प्रकार के कागज से बनी किताब बनाते हैं । उसके एक-एक पन्ने के बीच चांदी या सोने का पतरा रख कर, किताब को बंद कर, बाहर चमड़े के जाड़े पटल रखकर उसे हथोड़े से ठोकते हैं । इस तरह बर्ख बनते हैं । इस समूची प्रोसेस में चांदी / सोने के पतरे (बर्ख) को कहीं भी, कभी भी चमड़े का स्पर्श नहीं होता है । अतः हर स्थान पर बनते बर्ख हेतु 'बर्ख मांसाहारी है - अभक्ष्य है - भगवान की आंगी या मीठाई के ऊपर लगा नहीं सकते' ऐसी बातें करना गलत है । फिर भी किसी स्थान पर उसी प्रकार से बर्ख बनाते हों, तो पूरी जांच कर शुद्ध बर्ख का इस्तेमाल करना चाहिए ।

'चमड़े से स्पर्श हो जाने भर से वस्तु अभक्ष्य-अपवित्र बन जाए' ऐसा कोई नियम जैनशासन का नहीं है । कुछ वर्षों पूर्व मारवाड़-कच्छ आदि प्रदेशों में पीने का पानी चमड़ो से बनी पखालों में आता था । पूजा में भी यह जल प्रयुक्त होता था । घी रखने के बर्तन चमड़ो के बने रहते थे । हरेक धर्म के मन्दिरों में व जैनमंदिरों में ढोल-नगाडा-तबला आदि संगीत के साधनों में चमड़े का उपयोग होता था, आज भी होता है । अतः केवल चमड़े का स्पर्श हो जाने भर से बर्ख "अपवित्र, अभक्ष्य, इस्तेमाल नहीं करने योग्य" ऐसा कोलाहल मचाना योग्य नहीं है । ऐसा करके वे जिनभक्ति आदि के एक तारक आलंबन से संघ को वंचित रखने का महादोष भी कर रहे हैं, ऐसा कहें तो इसमें अतिशयोक्ति नहीं है ।

शंका-४५ : बर्ख परमात्मा की अंगरचना में प्रयुक्त होता है, सो प्रभु की शोभा को बढ़ाने के लिए ही इसकी क्या आवश्यकता है ? अंगरचना - रहित प्रतिमा ज्यादा खूबसुरत लगता है । सामान्य जन तो अंगरचना की ही प्रशंसा करते हैं और परमात्मा को भूल जाते हैं ।

समाधान-४५ : भगवान की प्रतिमा के माध्यम से भगवान के जीवन की हरेक अवस्था का चिंतन करने की जिनाज्ञा है । जो चैत्यवंदन महाभाष्य आदि ग्रंथों में स्पष्टरूप से कही गई है । परमात्मा की अनेक अवस्थाओं में से ही एक अवस्था है - **'राज्यावस्था'** । इसका भावन करने के लिए ही आंगी अंगरचना का विधान है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहारभाष्य नामक आगम ग्रंथ में परमात्मा के बिंब का **'शृंगार कर्म'** याने कि अंगरचना करने की बात आती है । अतःएव श्वेतांबर परंपरा में आंगी-अंगरचना करने की बात आती है । श्वेतांबर परंपरा में आंगी-अंगरचना की अस्खलित परंपरा भी देखी जा सकती है ।

परमात्मा की पूजा में जगत की श्रेष्ठ से श्रेष्ठ ऐसी सभी चीजों का प्रयोग करना चाहिए । ऐसा विधान पंचाशक, षोडशक, दर्शन शुद्धि प्रकरण, धर्मसंग्रह, श्राद्धविधि जैसे प्राचीन प्राचीनतर ग्रंथों में देखने को मिलता है । सोना, चांदी व सोना-चांदी से निर्मित चीजें जगत में श्रेष्ठ गिनी जाती हैं । अतः इनका प्रयोग जिनपूजा में किया जाता है । केवल शोभा की अभिवृद्धि का ही उद्देश्य इसमें नहीं होता । परंतु जिनाज्ञा-पालन एवं उपरोक्त उद्देश्य के अलावा, द्रव्यमूर्च्छा का त्याग, बाल जीवों को प्रतिबोध आदि अन्य अन्य अनेक उद्देश्य भी इसके पीछे हैं ।

जिनदर्शन करनेवाला आराधक केवल अंगरचना में ही उलझ जाए, यह भी ठीक नहीं है । अंगरचना यह एक माध्यम है, परमात्मा के साथ अनुसंधान करने का ! अंगरचना से बाह्य सम्बंध स्थापित होता है । बाह्य सम्बंध आंतरिक संबंध का कारण बनता है । परमात्मा की अंगरचना के माध्यम से परमात्मा के 'परमात्म-तत्त्व' के साथ मिलन करना है । यह सब क्रमिक होता है । पहले पिण्डस्थ अवस्था, फिर पदस्थ अवस्था, फिर रूपस्थ अवस्था एवं फिर रूपातीत अवस्था का ध्यान - यह क्रम है । किसी जीव विशेष को उत्क्रम से (क्रम रहित) ध्यान लगे - ऐसा बन सकता है, पर सभी जीवों के लिए ऐसा नियम नहीं बना सकते ।

शंका-४६ : पूजा के कपड़ों में सामायिक हो सकती है ?

समाधान-४६ : पूजा के कपड़ों में सामायिक करना योग्य नहीं है । सामायिक श्वेत-सूती वस्त्र पहनकर करना चाहिए, जबकि पूजा के वस्त्र मूल्यवान, रेशमी आदि होते हैं । सामायिक में ज्यादा समय बैठना होता है, पसीना होने से वस्त्र मलिन-अशुद्ध हो जाते हैं । उन्हें पहनकर पूजा करने से प्रभु की आशातना होती है । अतः ऐसा व्यवहार करना योग्य नहीं है ।

शंका-४७ : फिलहाल पद्मावती पूजन पढ़ाया जाता है सो योग्य है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-४७ : पद्मावती पूजन पढ़ाना योग्य नहीं है । परमतारक परमात्मा की भक्ति को गौण कर देवदेवियों का पूजन पढ़ाना; इसमें त्रिलोकीनाथ परमात्मा की आशातना होती है । यह जैसे शास्त्रदृष्टि से योग्य नहीं, वैसे व्यवहार से भी योग्य नहीं है ।

शंका-४८ : जैन मंदिरों की ध्वजा में कहीं-कहीं हरे रंग का पट्टा दिखने लगा है । तो कुछ जैन मंदिरों की ध्वजा पूरी हरे रंग की ही दिखाई देती है । इसका क्या कारण है ? क्या इस तरह रख सकते हैं ?

समाधान-४८ : जैन मंदिरों की ध्वजा में हरा रंग नहीं रख सकते । मूलनायक प्रभु यदि परिकर वाले हों तो वह परमात्मा की अरिहंत अवस्था गिनी जाती है । अतः बीच में सफेद एवं आजूबाजू में लाल पट्टा तथा मूलनायक यदि परिकर रहित हों याने कि सिद्धावस्था वाले हों तो बीच में लाल एवं आजूबाजू में सफेद पट्टा रखने की विधि है । पर कहीं भी हरा पट्टा रखने की बात नहीं आती । सौराष्ट्र के किसी गाँव में हरी ध्वजा लगाई गई ऐसा सुना जाता है । उसी के अंधअनुकरण रूप अन्य संघों में भी यह सिलसिला शुरू हुआ है और यही प्रवाह बढ़ते-बढ़ते कुछेक जिनालयों की ध्वजा में आखिर एक त्रिकोणाकृति हरे पट्टे को रखने का काम हुआ है । यह बिल्कुल गलत है । सुना गया है कि भावनगर में बनती ध्वजाओं में ऐसा हरा पट्टा रखा जा रहा है । अतः जो भी महानुभाव वहाँ से ध्वजाएँ मंगवाते हों, उन्हें उक्त स्थान पर सूचना देकर ऐसा हरा पट्टा निकलवा देना चाहिए ।

यदि इस कार्य में उपेक्षा की जाए, तो धीरे-धीरे सर्वत्र ऐसी अनुचित प्रवृत्ति शुरु हो जाएगी । फिर तो अविधि ही विधि के रूप में पहचानी जाएगी । अतः श्री संघों को समय रहते चेत जाना चाहिए और इसे रोकना चाहिए ।

शंका-४९ : साधु-संस्था में कहीं-कहीं यांत्रिक, इलेक्ट्रिक, इलेक्ट्रानिक साधनों का और साधु जीवन हेतु सर्वथा अनुचित कहे जाएं ऐसे साधनों का उपयोग होने लगा है, इस कारण से शीथिलता का दायरा बढ़ रहा है, परिणामतः जैनशासन की घोर निंदा होती है तो इसे रोकने हेतु हम श्रावकों को क्या करना चाहिए ?

समाधान-४९ : एक बात समझ लें कि - ज्यादातर साधु दीक्षित होते हैं, सो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैराग्यपूर्वक ही होते हैं । फिर भी यहाँ आने के बाद किसी परिबल वश वे ऐसे साधनों का प्रयोग करने को ललचाते हैं । पर इन साधनों को कौन लाकर देता है ? साधु स्वयं बाजार में जाता नहीं । लोभी गृहस्थ वर्ग साधु भगवंतों की मर्यादाओं को तुड़वाकर उनसे स्वयं के स्वार्थ साधता है । ज्योतिष-मुहूर्त्त, मंत्र-तंत्र, तावीज, रक्षापोटली, यंत्र-मूर्तियाँ, दवा-दारू, वासक्षेप जैसी अनेक प्रकार की अकरणीय प्रवृत्तियाँ साधुओं से कराता है । इसके बदले में वे जो कहें वह ला लाकर देते हैं । इस प्रवृत्ति से ही साधु संस्था में सड़न पैदा हो जाती है । यदि हृदय की व्यथा से यह प्रश्न आपके मन में उठा हो तो आज से ही ऐसा निर्णय कर लेना चाहिए कि –

१ - किसी भी साधु के पास हम संसार के स्वार्थ की बात लेकर नहीं जाएंगे,

२ - साधु को ऐसे कोई भी साधन हम लाकर नहीं देंगे,

३ - जो साधु ऐसे साधनों का प्रयोग करते हों, उन्हें हम प्रोत्साहन नहीं देंगे,

४ - ऐसे साधुओं का विरोध हम से न भी हो सके तो भी कम से कम उनके सहायक तो नहीं ही बनेंगे,

५ - ऐसे साधुओं को आधार मिले ऐसी कोई कार्यवाही हम नहीं करेंगे,

६ - हमारी शक्ति हो तो विवेकपूर्वक हम उन्हें रोकने का प्रयास करेंगे,

७ - किसी भी हालत में उनकी निंदा तो नहीं ही करेंगे, उनके संबंध में खबरें छपवाकर बेइज्जती करने का काम भी नहीं ही करेंगे,

८ - अतिशय गंभीर मामला हो तो, गीतार्थ गुरु के मार्गदर्शन से सभी सुयोग्य उपाय करेंगे ।

इतना भी यदि किया जाए, तो श्रावकों-गृहस्थों के कारण जो शीथिलता प्रारंभ होती है, वह रुक सकती है और श्रमण संघ की निंदा-अवहेलना के पाप को भी ब्रेक लग सकता है ।

शंका-५० : शंखेश्वर पार्श्वनाथ भगवान के अंग से उतरा हुआ वासक्षेप लेकर श्रावक-श्राविका अपने हाथों से स्वयं के या अन्यों के सिर पर डालते हैं, क्या यह योग्य है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाधान-५० : शंखेश्वर पार्श्वनाथ भगवान या अन्य किसी भी भगवान के अंग से उतरा हुआ वासक्षेप या अन्य कोई भी पदार्थ श्रावक-श्राविका अपने हाथों से या अन्यों के हाथों से, स्वयं के या अन्यों के मस्तक आदि अंग पर नहीं डाल सकते । इन चीजों का अन्य कोई उपयोग भी नहीं कर सकते । शास्त्र की मर्यादा के अनुसार भगवान का स्नात्र जल (न्हवणजल) आदरपूर्वक लेकर सिर पर लगाने की विधि है, जिसका वर्णन बृहच्छांति स्तोत्र में आता है ।

शंका-५१ : स्त्री-पुरुषों का एक साथ सामायिक रखना क्या उचित है ? व्याख्यान सभाओं में तो स्त्री-पुरुष साथ में बैठते हैं, यह दृष्टांत समूह सामायिक में दे सकते हैं ?

समाधान-५१ : स्त्री- पुरुषों का एक साथ (संयुक्त) सामायिक रखना उचित नहीं लगता । ऐसी प्रथा चलाने से मर्यादा संबंधी कई प्रश्न खड़े होने की संभावना है । व्याख्यान सभाओं का दृष्टांत लेकर भी इस प्रथा का समर्थन करना उचित नहीं है ।

शंका-५२ : हमारे गाँव में कुछ वर्ष पूर्व निर्मित शिखरबद्ध चतुर्मुख जिनालय में ध्वजा नहीं रखी है । आजुबाजु के बंगले वाले ऐतराज करते हैं कि ध्वजा का परसाया घर पर गिरे तो सर्वनाश होता है । अरिहंत एवं सिद्ध के वर्ण की प्रतीक ध्वजा हजारों मील (mile) से यदि दिखाई दे तो भी वंदनीय है - ऐसा सुना है । तो फिर उसके परसाये के बारे में उठाया गया सवाल भ्रम है या सच है ?

समाधान-५२ : ध्वजा का परसाया घर पर गिरे तो दोषरूप है, यह कहना ठीक नहीं । विधान तो ऐसा है कि - दिन के दूसरे एवं तीसरे प्रहर में ध्वजा का परसाया गिरे तो दोषरूप है । ध्वजा का परसाया दिन के पहले एवं आखिरी प्रहर में बड़ा लम्बा गिरता है एवं दिन के दूसरे-तीसरे प्रहर में तो काफी नजदीक ही गिरता है । इसमें पहले एवं आखिरी प्रहर में घर पे परसाया गिरे तो दोष नहीं है । पर दूसरे-तीसरे प्रहर में यदि वह घर पे गिरे तो शास्त्र दृष्टि से दोष बनता है । घर पर परसाया गिरे इतने से ही वह दोषरूप नहीं बनता । यदि ऐसे ही होता तो फिर पहले-चौथे (आखिरी) प्रहर में परसाये के गिरने में भी दोष होता ! पर वैसे तो है नहीं ! क्योंकि वास्तविकता कुछ और है । 'दूसरे-तीसरे प्रहर की ध्वजा का परसाया घर पर नहीं गिरना चाहिए' - इस विधान के पीछे आशय 'जिनमंदिर से गृहस्थ का घर इतना दूर होना चाहिए कि, जिससे गृहस्थ के गृह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में हो रही प्रवृत्तियों की अशुद्धि के कारण मंदिरजी की आशातना न हो', यह बताना है ।

दूसरे-तीसरे प्रहर में याने सूर्योदय के पश्चात् लगभग तीसरे घण्टे से लगा नौवे घण्टे तक के समय में सूर्य ऊपर चढ़ता होने से ध्वजा का परसाया मंदिर के बिल्कुल नजदीकी प्रदेश में ही गिरता है । अतः जिनमंदिर से घर इतना नजदीक हो, तो मंदिर की आशातना का दोष लगता है । इसलिए गृहस्थ को चाहिए कि मंदिर से अपना घर इतना नजदीक न बनाए ।

संक्षिप्त में कहें तो ध्वजा के परसाये की बात 'जिनमंदिर से घर कितनी दूरी पर होना चाहिए, कितना नजदीक नहीं होना चाहिए' यह मर्यादा बताने हेतु ही है । दूसरे-तीसरे प्रहर में मंदिर की ध्वजा का परसाया गिरे इतना नजदीक गृहस्थ का घर नहीं होना चाहिए । जिस घर पर दूसरे-तीसरे प्रहर में ध्वजा का परसाया गिरता न हो, उस घर पर पहले-चौथे प्रहर का परसाया गिरे तो कोई बाधा नहीं है । क्योंकि वह घर शास्त्र द्वारा निषिद्ध क्षेत्रमर्यादा में नहीं आता ।

अब, कोई व्यक्ति जिनमंदिर पर ध्वजा ही न लगाए, पर ध्वजा हो और उसका परसाया दूसरे-तीसरे प्रहर में गिरे इतने नजदीकी अंतर में अपना गृह बनाए, तो ध्वजा न होने के कारण ध्वजा का परसाया न गिरने पर भी उसे दोष लगता ही है । और ध्वजा होते हुए भी दूसरे-तीसरे प्रहर में ध्वजा का परसाया न गिरता हो इतना दूर यदि घर बनाया हो, वहाँ पहले-चौथे प्रहर का परसाया गिरता भी हो, तो भी उसे कोई दोष नहीं लगता।

लोगों को इस बाबत पूरा ज्ञान न होने से शंकाएँ पैठ गई हो ऐसा प्रतीत होता है ।

शंका-५३ : मंदिर में भगवान को चढ़ाए हुए पुष्प वगैरह दूसरे दिन उतार लिए जाते हैं, उन निर्माल्य पुष्पों का निकास कैसे किया जाए ? उसे स्नात्रजल में स्नात्रजल की कुंडी में या नदी में विसर्जित कर सकते हैं क्या ?

समाधान-५३ : कुंथु आदि अत्यंत सूक्ष्म-त्रस जीव थंडी एवं सुगंध के कारण बहुत दफे पुष्पों का आश्रय लेते हैं । अतः निर्माल्य पुष्पों को स्नात्रजल, स्नात्रजल के भाजन में या नदी में विसर्जन करने पर उनकी हिंसा हो जाती है । अतः उन्हें किसी भी जल में या प्रवाह में नहीं पधरा सकते । उन्हें वहीं पधराना चाहिए, जहाँ किसी का पाँव न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आए, धूप बिना की छाँववाली जगह हो और वहाँ कोई पशु आदि आकर पुष्पों को खा न जाए ।

शंका-५४ : पूज्य साध्वीजी महाराज पुरुषों के समक्ष पाट पर बैठकर या नीचे बैठकर भी क्या प्रवचन कर सकते हैं ?

समाधान-५४ : साध्वीजी महाराज पुरुषों के समक्ष पाट पर बैठकर या नीचे बैठकर भी प्रवचन नहीं दे सकते । प्रवचन करने का अधिकार 'प्रकल्प यति' का है । साध्वीजी प्रकल्प यति नहीं होते, अतः वे पुरुषों के समक्ष प्रवचन नहीं कर सकते । यह शास्त्र मर्यादा है ।

शंका-५५ : साधर्मिक-वात्सल्य में बूफे-भोज कर सकते हैं क्या ? उस समय मानों 'रामपात्र' हाथ में ले खड़े हैं, इस तरह थाली/डीश हाथ में ले कतार में खड़े रह सकते हैं क्या ?

समाधान-५५ : वर्तमान समय में कई अनर्थकारी रीतें धर्मकार्यों में भी प्रविष्ट कर गई हैं, जो जैन धर्म की मर्यादा का भंग करने वाली हैं । साधर्मिक-वात्सल्य, संघ भोज या प्रभावना हो, तब 'साधर्मिक-भक्ति' का लाभ लेना, 'प्रभावना का लाभ लेकर जाइए', ऐसा कहा जाता है, यह बिलकुल उचित नहीं है । 'लाभ लीजिए' ऐसा नहीं कहा जा सकता, बल्कि 'लाभ दीजिएगा' ऐसे कहना चाहिए । 'प्रभावना का लाभ लेकर जाइए' ऐसे नहीं कह सकते, पर 'प्रभावना का लाभ प्रदान करने पधारिएगा' ऐसे बोलना चाहिए।

साधर्मिक जीमने हेतु पधारें तब उनकी अगवानी करनी चाहिए । दूध से उनके पाँव धोने चाहिए । उचित आसन पर उन्हें बिठाना चाहिए । बहुमानपूर्वक परोसना चाहिए । उचित तौर-तरिके से आदरपूर्वक आग्रह (मनुहार) करनी चाहिए । जो कुछ वे लेवें उसका अनुमोदन होना चाहिए । वे पधारते हों, तब 'आपने हमें लाभ देकर बड़ा उपकार किया, फिर से लाभ दीजिएगा,' ऐसी विनंती करनी चाहिए ।

साधर्मिक-वात्सल्य करनेवाला व्यक्ति, जितने भी पुण्यात्मा खाना खा कर पधारें, उनका ऋणभार मस्तक पर चढ़ाएँ । साधर्मिक-वात्सल्य में आनेवाले भी सिर्फ खाने की भावना से ही न आएँ । साधर्मिक की भावना का आदर सम्मान करने हेतु आएं । उचित मर्यादापूर्वक रहें । खाने की आदतों के वशीभूत न बनें । कोई चीज न माँगें । कोई चीज रह गई तो मन में न लाएं । खिलाने वाला 'लीजिए-लीजिए' कहे तब सहजता से,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'नहीं-नहीं' कहने के भाव में हों । खिलानेवाला हाथ जोड़े तो खानेवाला भी सामने हाथ जोड़े । 'मैं भी कब ऐसा साधर्मिक-वात्सल्य करूँ' ऐसा मनोरथ करें ।

साधर्मिक-वात्सल्य, साधर्मिक-भक्ति एवं संघ भोज में ऐसी उत्तम मर्यादाओं का पालन होना चाहिए । इसके विपरीत आज साधर्मिक-वात्सल्य करनेवाले को अन्यों का स्वागत करने का भाव न हो, आनेवाले के प्रति आदर-बहुमान न हो, 'आओ ! खाने का लाभ लो !' ऐसी वृत्ति हो, 'मैंने इतनों को खिलाया, ऐसा-ऐसा खिलाया' - ऐसा भाव हो एवं खाने आनेवालों को भी मानों 'बाकी रह न जाएं' ऐसी वृत्ति हो, थालियां या डीशें हाथ में ले लाईनें लगाकर खड़े हों, खुद ही खुद अपनी थालियाँ या डीशें भर रहे हों, कोई चीज लेनी रह न जाए, उसकी चिंता हो, पाँव में बूट या जूते पहने हों, हाथ में थाली या डीश को पकड़कर खा रहे हों, ऐसे भोजन व्यवहार को साधर्मिक-वात्सल्य, साधर्मिक-भक्ति या संघ भोज का नाम नहीं दे सकते । ऐसा भोजन-व्यवहार जैन धर्म की मर्यादा के अनुरूप तो है ही नहीं, अपितु आर्यदेश की उत्तम मर्यादा एवं प्रणालिका के साथ भी संगत नहीं है । ऐसी प्रवृत्ति से जिनाज्ञा की आराधना नहीं, बल्कि विराधना होती है ।

शंका-५६ : वीशस्थानकजी की पूजा करने के बाद अरिहंत परमात्मा की पूजा हो सकती है या नहीं ?

समाधान-५६ : एक वीशस्थानक की पूजा करने के बाद दूसरे वीशस्थानक की पूजा कर सकते हैं और उसमें मध्यवर्ती पद में तो अरिहंत परमात्मा ही होते हैं । वीशस्थानक कोई व्यक्ति की पूजा नहीं है, पर पद की पूजा है । अतः वीशस्थानक की पूजा करके अरिहंत परमात्मा की पूजा करने में कोई बाधा नहीं है । यही नियम सिद्धचक्रजी में भी समझें ।

शंका-५७ : जैन मंदिरजी के किसी भी खाते के पैसे; जैसे कि देवद्रव्य, साधारण, सर्वसाधारण जैसे खातों में से मंदिरजी की कोई सम्पत्ति न हो उसमें पैसे इस्तेमाल किए जा सकते हैं क्या ? पूरी विगत नीचे मुजब है । एक मंदिरजी के पास में ही सोसायटी का कोमन प्लॉट आया हुआ है । इस कोमन प्लॉट में मंदिरजी की कोई मालिकी नहीं है । मंदिरजी एवं सोसायटी के कोमन प्लॉट का आपस में कुछ लेना-देना भी नहीं है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मंदिरजी के कारोबारी ट्रस्टी ही सोसायटी के भी कारोबारी सदस्य हैं । अतः उन्होंने मंदिरजी के पैसों से सोसायटी के कोमन प्लॉट में फ्लोरींग एवं बाथरूम बनाए हैं । उस हेतु हुए खर्च की रु. ६०००० से ६५००० की रकम मंदिरजी से उठाई है । तो ऐसे मंदिरजी के पैसे सोसायटी के प्लॉट में लगाए जा सकते हैं क्या ? मंदिरजी ट्रस्ट एक्ट अनुसार रजिस्ट्रीकृत है । ऐसी बड़ी रकम चैरिटी कमिश्नर की स्वीकृति के बिना लगा दी है। सोसायटी के कोमन प्लॉट में यह कार्य होने से इसका दोष सोसायटी में रहनेवालों को लगेगा या ट्रस्टियों को ? इस तरह रकम के दुरुपयोग की जिम्मेदारी किसकी ? इस बारे में पूरी विगत के साथ "शंका और समाधान" विभाग में जवाब दे मुझे आभारी करें ।

समाधान-५७ : धर्मक्षेत्र के किसी भी खाते की रकम धर्मक्षेत्र को छोड़ अन्य किसी भी क्षेत्र में नहीं लगा सकते । उसमें भी जो कार्य साधारण में से ही किए जा सकते हैं, उन कार्यों में देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य, साधु-साध्वी द्रव्य, अनुकंपा या जीवदया द्रव्य भी नहीं लगाया जा सकता ।

धर्मेतर कार्यों में ऊपर के द्रव्य की भाँति श्रावक-श्राविका क्षेत्र का द्रव्य भी नहीं लगा सकते ।

जो कार्य सर्वसाधारण (शुभ खाता) में से किए जा सकें ऐसे होते हैं, उन कार्यों हेतु साधारण द्रव्य भी इस्तेमाल नहीं किया जा सकता ।

सात क्षेत्रों हेतु नियम ऐसे हैं कि - श्रावक-श्राविका क्षेत्र का द्रव्य संयोगविशेष में जरूर पड़ने पर साधु-साध्वी क्षेत्र में, जैनागम क्षेत्र में एवं जिनमंदिर-जिनमूर्ति क्षेत्र में इस्तेमाल कर सकते हैं, परंतु जीवदया, अनुकंपा या धर्मेतर कार्यों में इस्तेमाल नहीं कर सकते । तथा जिनमंदिर-जिनमूर्ति खाते का (देवद्रव्य) द्रव्य हो तो वह जिनमंदिर-जिनमूर्ति बिना अन्य किसी भी कार्य में इस्तेमाल नहीं कर सकते । अतःएव मंदिरजी के नजदीक सोसायटी के कोमन प्लॉट, जिसे मंदिर के साथ कोई लेना-देना नहीं है, उसके फ्लोरींग में या संडास-बाथरूम बंधवाने जैसे कार्यों में देवद्रव्य या धर्मक्षेत्र के किसी भी खातों को रकम नहीं लगा सकते।

इस तरह धर्मक्षेत्र की रकम ऐसे कार्यों में इस्तेमाल करनेवाले ट्रस्टी अवश्य दोष के भागी बनते हैं एवं इस सुविधा का उपयोग करनेवाले सोसायटी के निवासी या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनिवासी भी धर्मद्रव्य के उपभोग का दोष अवश्य प्राप्त करते हैं । धर्मद्रव्य का किसी भी रूप से उपभोग करनेवालों को दुर्गति की परंपरा भुगतनी पड़ती है । अतः जल्द से जल्द इस ऋण का ब्याज के साथ भुगतान कर दोषमुक्त बनना चाहिए ।

मंदिरजी में जलते दीपक की रोशनी घर में गिरने पर उस रोशनी में स्वयं का हिसाब-किताब लिखनेवाले को कैसे दुःखद फल भुगतने पड़े हैं, इस बारे में धर्मशास्त्रों का सद्गुरुओं के सानिध्य में वाचन-श्रवण करने से भी इस बात का अच्छा ज्ञान हो सकेगा ।

शंका-५८ : हमारे यहाँ एक पूजन पढ़ाया गया । जिसकी प्रेरिका एवं आगेवान थी एक साध्वीजी महाराज ! उन्होंने उस संदर्भ में एक झोली बनाकर भगवान को भिक्षा देने की प्रेरणा की । उसमें केवल रुपये ही डालने थे एवं लोगों ने वैसा ही किया । तो क्या यह उचित है ? क्योंकि भगवान तो भिक्षा हेतु झोली रखते नहीं एवं भिक्षा में रुपये-पैसे लेते नहीं, ऐसा हमने जाना है । तो ये पैसे कौनसे खाते में जमा करें ?

समाधान-५८ : आप सूचित करते हो वैसे किसी भी पूजन में भगवान की भिक्षा एवं झोली की बात नहीं आती । अतः ऐसा यदि किया गया हो तो यह बिलकुल अनुचित है एवं भगवान की लघुता करनेवाली बात है । साध्वीजी भगवंत हो या साधु भगवंत हो, सुविहित प्रणालिका अनुसार प्रचलित पूजा-पूजन का ही वे केवल उपदेश दे सकते हैं । परंतु सीधे या आड़े रास्ते उस हेतु न तो प्रेरणा दे सकते हैं, न ही उस कार्य की आगेवानी ले सकते हैं । वर्तमान में श्रावक संघ में प्रवर्तमान शास्त्रीय मार्ग संबंधी भीषण अज्ञानवश ऐसी कई प्रवृत्तियाँ चल रही हैं । जो चलानी किसी के भी हित में नहीं है ।

अज्ञानादिवश ऐसा हो चूका ही है तब झोली की वह रकम देवद्रव्य में जमा कर जिनमंदिर के जीर्णोद्धारादि में ही लगाना हितावह है । भगवान भिक्षा हेतु झोली नहीं रखते और भिक्षा में रुपये-पैसे नहीं लेते, ऐसा आपका खयाल सही है ।

शंका-५९ : धार्मिक या अन्य फटी हुई किताबें कहाँ परठावें ? कैसे परठावें ? (इनका त्याग-व्यवस्था कहाँ-कैसे करें ?)

समाधान-५९ : धार्मिक या अन्य फटी किताबें जब इस्तेमाल-योग्य न रहें तब उन्हें परठवने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं होता है । तब उन पुस्तकों को फाड़ कर छोटे-छोटे टुकड़े करने चाहिए । फाड़ते समय व्यक्ति-पशु-पक्षी आदि के चित्र न फटे, इसका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान रखें । तत्पश्चात् उन्हें किसी निर्जन स्थान पर, पहाड़ियों के गड्ढों में या ऐसे ही किसी सूखे स्थान में ध्यानपूर्वक परठावें । परठवने के समय 'अणुजाणह जस्सुग्गहो' और परठवने के पश्चात् 'वोसिरे वोसिरे वोसिरे' ऐसा बोलना चाहिए ।

विशेषकर पानी में, नदी में, तालाब में, समुद्र में या अन्य किसी आर्द्रतावाली जगह में कागज को न परठावें । क्योंकि ऐसा करने से कागज में उत्पन्न हुई दीमक-कीड़े-कुन्थु आदि जीवों की हिंसा-विराधना हो जाती है । उसी तरह जहाँ लोगों का आना-जाना हो ऐसे स्थानों में भी परठना न चाहिए, ताकि उन कागजों का उपयोग जलाने आदि किसी भी कार्य में न हो । यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो कागज पड़े रहते हैं, सड़ जाते हैं, उनमें उपरोक्त जीव-जंतु पैदा हो जाते हैं, उनकी हिंसा होती है । वह न हो अतएव विधिपूर्वक-प्रयत्न करने का ध्यान रखें ।

शंका-६० : जिनमंदिर में ललाट पर कपाली-सोने चांदी की पट्टी लगाई जाती है, वह पट्टी राल में घी डाल कर उसे मसल कर चिपकाई जाती है, पर यह पट्टी गर्मी के दिनों में निकल जाती है । प्रक्षाल के समय भी निकल जाती है । तो उसे राल के बदले स्टीक-फास्ट जैसे किसी पेस्ट से चिपकाया जाए तो अच्छी तरह चिपकती है, निकलती नहीं । हमारे मंदिर में भगवान को ऐसी पट्टी चार महिनों से स्टीक फास्ट से चिपकाई हुई है, जो आज तक फिट रही है । तो चिपकाने में कोई हर्ज ? जो हर्ज-दोष न हो तो फिर चक्षु (आँखें) एवं टीका (तिलक) भी उसी से चिपकाएँ तो निकलेंगे नहीं । देखने में भी अच्छे लगेंगे ।

समाधान-६० : सबसे पहले यह बात जानें कि भगवान के ललाट पर किसी सोने-चांदी की पट्टी लगाने की कोई आवश्यकता ही नहीं है ।

कई बार मुकुट को आधार रहे अतः या फिर एक ने किया सो देख कर-देखादेखी से भी ऐसी चीजें बनवाकर लगा देते हैं । जिनेश्वर भगवान की प्रतिमाजी को चक्षु-टीका आदि कोई भी चीज कायमी तौर पर चिपकाने हेतु 'राल' का ही प्रयोग होना चाहिए । सेन-प्रश्न में ऐसा खुलासा किया गया है । राल में गाय का घी थोड़ा-थोड़ा डालकर बराबर एकरस लेप बन जाने तक कूटना होता है । सभी दाने कूटे जाने पर एकरस एवं सघन क्रीम जैसा बन जाए, बाद में ही चिपकाने में काम लें । इस तरह से चिपकाने के बाद बरास का लेप या फिर भीगे अंगलूछने से उसे ठंडक देकर रखें । इस तरह करने से दो-चार दिनों में ही वह कठोर बन कर जम जाएगी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरा ख्याल यह रखना होता है कि - परमात्मा को प्रक्षाल या अंगलूछना करते समय बड़ी सावधानी से, धीरे-धीरे, एकाग्रतापूर्वक, अपने नन्हें बालक को स्नान कराते समय जैसी सावधानी ली जाती है, उससे अधिक सावधानी बरतनी चाहिए । यदि ऐसा न करो तो लेप हिल जाएगा और चक्षु-टीका-पट्टी भी जमेगी नहीं ।

राल के अलावा, स्टीक फास्ट, एरेल्डाइट, फेविटाईट, इन्स्टन्ट स्टीक आदि किसी भी केमिकल्स को प्रभु के अंग पर प्रयोग नहीं करना चाहिए । ये केमिकल्स भयंकर, हिंसक केमिकल्स हैं । उनसे प्रतिमाजी को नुकसान होने की घटनाएं हुई हैं । अनुभवी व्यक्तियों से पूछकर बराबर प्रयोग करने से राल कैसे बनाना - इस्तेमाल करना : यह जानकर कुशलता पाई जा सकती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-६
देवद्रव्यादि सात क्षेत्रों की
व्यवस्था का अधिकारी कौन ?

अहिगारी य गिहत्थो सुह-समणो वित्तम जुओ कुलजो ।
अखुद्धो धिई बलिओ, मइमं तह धम्मरागी य ।।५।।

गुरु-पूआ-करण रई सुस्सूआइ गुण संगओ चेव ।
णायाऽहिगय-विहाणस्स धणियमाणा-पहाणो य ।।६।। पञ्चाशक ७ ।

द्रव्य सप्ततिका ग्रन्थ में पूज्य महोपाध्याय **श्री लावण्य विजयजी गणिवर्य** उक्त **पंचाशक प्रकरण ग्रन्थ** के अनुसार बताते हैं कि धर्म के कार्य करने में अनुकुल कुटुम्बवाला, 'न्यायनीति से प्राप्त धनवाला', लोको से सन्माननीय, उत्तम कुल में जन्म लेने वाला, 'उदारदिल वाला', धैर्य से कार्य करनेवाला, बुद्धिमान, धर्म का रागी । गुरुओं की भक्ति करने की रति वाला, शुश्रूषादि बुद्धि के आठ गुणों को धारण करनेवाला और शास्त्राज्ञा पालक देवद्रव्यादि सात क्षेत्रों की व्यवस्था करने का अधिकारी होता है ।

विशिष्ट अधिकारी कौन ?

मग्गाऽनुसारी पायं सम्मदिट्ठी तहेव अणुविरइ ।
एएऽहिगारिणो इह, विसेसओ धम्म - सत्थम्मि ।।७।।

मार्गानुसारी, अविरति सम्यग्दृष्टि, देशविरतिवाला, धर्म शास्त्रों के अनुसार व्यवस्था करनेवाला ही प्रायः करके विशेष अधिकारी होता है । **(धर्मसंग्रह से उद्धृत)** ।

जिन पवयण-वृद्धिकरं पभावगं नाणदंसणगुणाणं वड्ढन्तो ।
जिणदव्वं तित्थयरत्तं लहइ जीवो, रक्खंतो जिणदव्वं परित्त संसारिओ होई ।
(श्राद्धदिन-कृत्य गा. १४३-१४४)

जैन शासन की वृद्धि करनेवाला और ज्ञान-दर्शनादि गुणों की प्रभावना करनेवाला देवद्रव्य की वृद्धि शास्त्र के अनुसार करता है, वह जीव तीर्थंकर पद को भी प्राप्त करता है और देवद्रव्यादि की रक्षा करनेवाला संसार को कम करता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मद्रव्य के भक्षण, उपेक्षा और विनाश के दारुण परिणाम - शास्त्र के आधार से ।

जिन-पवयण वृद्धिकरं पभावगं नाणदंसण-गुणाणं ।
भक्खंतो जिणदव्वं अनंत संसारिओ होइ (श्रा.दि.गा. १४२)

जैन शासन की वृद्धि करनेवाला और ज्ञान दर्शनादि गुणों की प्रभावना करनेवाला यदि देवद्रव्य का भक्षण करता है तो वह अनंत संसारी यानी अनंत संसार को बढ़ाता है और देवद्रव्य के ब्याज आदि द्वारा स्वयं लाभ उठाता है, वह दुर्भाग्य और दारिद्रावस्था को प्राप्त करता है और देवद्रव्य का नाश होते हुए भी उपेक्षा करता है, वह जीव दुर्लभबोधि को प्राप्त करता है ।

जिणवरआणारहियं वद्धारंता वि के वि जिणदव्वं ।
बुड्डंति भवसमुद्दे मूढा मोहेण अन्नाणी ।। (संबोधप्रकरण गाथा-१०२)

जिनेश्वर भगवान की आज्ञा के विरूद्ध देवद्रव्य को बढ़ाता है, वह मोह से मूढ अज्ञानी संसार समुद्र में डूब जाता है । द्रव्यसप्ततिका टीका में कहा है कि, **'कर्मादानादि - कुव्यापारं वर्ज्य, सद् - व्यापारादिविधिनैव तद् वृद्धिः कार्या ।'** १५ कर्मादानादि के व्यापार को छोड़कर सद् व्यवहारादि की विधि से ही देवद्रव्य की वृद्धि करना चाहिए ।

भक्खेइ जो उविक्खेइ जिणदव्वं तु सावओ ।
पण्णाहीनो भवे जीवो लिप्पइ पावकम्मुणा ।।

जो श्रावक देवद्रव्य का भक्षण करता है और देवद्रव्यादि का भक्षण करनेवाले की उपेक्षा करता है, वह जीव मंदबुद्धिवाला होता है और पाप कर्म से लेपा जाता है ।

आयाणं जो भंजइ पडिवंन्न - धणं न देइ देवस्स ।
गरहंतं चो - विक्खइ सो वि हु परिभमइ संसारे ।।

जो देवद्रव्यादि के मकानादि का भाड़ा, पर्युषणादि में बोले गए चढ़ावे, संघ का लागा और चंदे आदि में लिखवाई गई रकम देता नहीं है या बिना ब्याज से देरी से देता है और जो देवद्रव्य की आय को तोड़ता है, देवद्रव्य का कोई विनाश करता हो तथा उगाही आदि की उपेक्षा करता हो वह भी संसार में परिभ्रमण करता है । **श्राद्धविधि १२९**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेइदव्व विणासे तद्, दव्व, विणासणे दुविहभेए ।

साहु उविक्खमाणो अणंत-संसारिओ होई ।।

चैत्यद्रव्य यानी सोना चांदी रुपये आदि भक्षण से विनाश करे और दूसरा तद् द्रव्य यानी २ प्रकार का जिनमंदिर का द्रव्य नया खरीद किया हुआ और दूसरा पुराना मंदिर के ईंट, पत्थर, लकडादि का विनाश करता हो और विनाश करनेवाले की यदि साधु भी उपेक्षा करता हो तो वह भी अनंतसंसारी होता है ।

चेइअ दव्वं साधारणं च भक्खे विमूढमणसा वि ।

परिभमइ, तिरीय जोणीसु अन्नाणित्तं सया लहई ।। (संबोध प्रकरण गा. १०३)

संबोध प्रकरण में कहा है कि देवद्रव्य और साधारण द्रव्य मोह से ग्रसित मनवाला भक्षण करता है, वह तिर्यंच योनि में परिभ्रमण करता है और हमेशा अज्ञानी होता है ।

* **पुराण** में भी कहा है कि

देवद्रव्येन या वृद्धि र्गुरु द्रव्येन यद् धनं ।

तद् धनं कुलनाशाय मृतो पि नरकं व्रजेत् ।।

देवद्रव्य से जो धनादि की वृद्धि और गुरुद्रव्य से जो धन प्राप्त होता है वह कुल का नाश करता है और मरने के बाद नरक गति में ले जाता है ।

चेइअदव्वं साधारणं च जो दुहइ मोहिय-मईओ ।

धम्मं च सो न याणइ अहवा बद्धाउओ नरए ।। (संबोध प्रकरण गा. १०७)

जो मनुष्य मोह से ग्रस्त बुद्धिवाला देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य और साधारण द्रव्य को स्वयं के उपयोग में लेता है, वह धर्म को नहीं जानता है और उसने नरक का आयुष्य बांध लिया है, ऐसा समझना चाहिए ।

चेइअ-दव्व-विणासे रिसिघाए पवयणस्स उड्डाहे ।

संजइ-चउत्थभंगे मूलग्गी बोहि-लाभस्स ।। (संबोध प्रकरण गा. १०५)

देवद्रव्य का नाश, मुनि की हत्या, जैन शासन की अवहेलना करना-करवाना और साध्वी के चतुर्थव्रत को भंग करना बोधिलाभ (समकित) रूपी वृक्ष के मूल को जलाने के लिए अग्नि समान है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स च देवद्रव्यादि-भक्षको महापापो प्रहत-चेताः ।

मृतो पि नरकं अनुबंध-दुर्गतिं व्रजेत् ।।

महापाप से नाश हो गया है मन जिसका, ऐसा व्यक्ति देवद्रव्यादि का भक्षण करके मरने पर दुर्गति का अनुबंध कर नरक में जाता है ।

प्रभास्वे मा मतिं कुर्यात् प्राणैः कण्ठगतैरपि ।

अग्निदग्धाः प्ररोहन्ति प्रभादग्धो न रोहयेत् ।। (श्राद्धदिन-कृत्य १३४)

प्राण कंठ में आने पर भी देवद्रव्य लेने की बुद्धि नहीं करनी चाहिए, क्योंकि अग्नि से जले हुए वृक्ष उग जाते हैं, लेकिन देवद्रव्य के भक्षण के पाप से जला हुआ वापिस नहीं उगता ।

अग्निदग्धाः पादप - जलसेकादिना प्ररोहन्ति पल्लवयन्ति परं देवद्रव्यादि - विनाशोग्र - पाप - पावक - दग्धो नरः समूल - दग्ध - द्रुमवत् न पल्लवयति प्रायः सदैव दुखभाक्त्वं पुनर्नवो न भवति ।

अग्नि से जले हुए वृक्ष जल के सिंचन से उग जाते हैं और पल्लवित हो जाते हैं, लेकिन देवद्रव्यादि के विनाश के उग्र पाप रूपि अग्नि से जला हुआ, मूल से जले हुए वृक्ष की तरह वापस नहीं उगता है । प्रायः करके हमेशा दुःखी होता है ।

प्रभा-स्वं ब्रह्महत्या च दरिद्रस्य च यद् धनं ।

गुरु-पत्नी देवद्रव्यं च स्वर्गस्थमपि पातयेत् ।। (श्राद्धदिन-कृत्य-१३५)

प्रभाद्रव्य हरण, ब्रह्महत्या और दरिद्र का धनभक्षण-गुरु पत्नी भोग और देवद्रव्य का भक्षण स्वर्ग में रहे हुए को भी गिरा देता है ।

*** दिगम्बरों के ग्रन्थ** में भी कहा है कि :-

वरं दावानले पातःक्षुधया वा मृतिर्वरम् ।

मूर्ध्नि वा पतितं वज्रं न तु देवस्वभक्षणम् ।।१।।

वरं हालाहलादीनां भक्षणं क्षणं दुःखदम् ।

निर्माल्यभक्षणं चैव दुःखदं जन्म जन्मनि ।।२।।

दावानल में गिरना श्रेष्ठ, भूख से मौत श्रेष्ठ या सिर पर वज्र (शस्त्र) गिर पड़े तो भी अच्छा लेकिन देवद्रव्य का भक्षण नहीं करना चाहिए । विष का भक्षण श्रेष्ठ है, क्योंकि थोड़े काल का दुखदायी होता है । लेकिन निर्माल्य का भक्षण तो जन्म-जन्म में दुःख देनेवाला होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञात्वेति जिन-निर्ग्रन्थ-शास्त्रादीनां धनं नहि ।
गृहीतव्यं महापाप-कारणं दुर्गति-प्रदम् ।।३।।

इस प्रकार जान करके देवद्रव्य, गुरुद्रव्य और ज्ञानादि का द्रव्य ग्रहण नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह महा-पाप का कारण और दुर्गति देनेवाला है ।

भक्खणं देव-दव्वस्स परत्थी-गमणेण च ।
सत्तमं णरयं जंति सत्त वाराओ गोयमा ।।

हे गौतम ! जो देवद्रव्य का भक्षण करता है और परस्त्री का गमन करता है, वह सात बार सातवीं नरक में जाता है ।

श्री शत्रुंजय-माहात्म्य में कहा है कि -

देवद्रव्यं गुरुद्रव्य दहेदासप्तमं कुलम् ।
अङ्गालमिव तत् स्प्रष्टुं युज्यते नहि धीमताम् ।।

देवद्रव्य और गुरुद्रव्य का भक्षण सात कुल का नाश करता है । इसलिए बुद्धिमान् को उसको अंगारे की तरह जान करके छूना भी नहीं चाहिए - अर्थात् तुरन्त दे देना चाहिए।

देवाइ-दव्वणासे दंसणं मोहं च बंधए मूढा ।
उम्मग्ग-देसणा वा जिन - मुनि - संघाइ - सत्तुव्व ।।

देवद्रव्य का नाश करनेवाला, उन्मार्ग की देशना देनेवाला मूढ़ जिन, मुनि और संघादि का शत्रु है और दर्शन - मोहनीय कर्म का बंध करता है ।

जं पुणो जिण-दव्वं तु वृद्धिं निंति सु-सावया ।
ताणं रिद्धी पवड्ढेइ कित्ति सुख-बलं तहा ।।

पुत्ता हुंति सभत्ता सोंडिरा बुद्धि-संजुआ ।
सकललक्खण संपुत्रा सुसीला जाण संजुआ ।।

देवद्रव्यादि धर्म द्रव्याणि की व्यवस्था करनेवाला, प्रभु की आज्ञानुसार नीतिपूर्वक देवद्रव्यादि को बढ़ाता है, उनकी ऋद्धि कीर्ति, सुख और बल बढ़ता है और उनके पुत्र भक्त, बुद्धिमान्, बलवान् सभी लक्षणों से युक्त और सुशील होते हैं ।

एवं नाउण जे दव्वं वुड्ढिं नंति सुसावया ।
जरा-मरण-रोगाणं अंतं काहिंति ते पुणो ।।

इस प्रकार जान करके जो देवद्रव्य को नीतिपूर्वक बढ़ाने वाले होते हैं, वे जन्म, मरण, बुढापा और रोगों का अंत करते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तित्थयर-पवयण-सुअं आयरिअं गणहरं महिड्ढिअं ।
आसायंतो बहुसो अणंत-संसारिओ होइ ।।

जो तीर्थंकर, प्रवचन, श्रुतज्ञान, आचार्य, गणधर, महर्द्धिक की आशातना करता है, वह अनंत संसारी होता है ।

दारिद्द-कुलुप्पत्ती दारिद्दभावं च कुट्ठरोगाइ ।
बहुजणधिक्कारं तह, अवण्णवायं च दोहग्गं ।।

तण्हा छुहामि भूई घायण-बाहण-विचुण्णतीय ।
एआइ - असुह फलाइं बीसीअइ भुंजमाणो सो ।।

देवद्रव्यादि के भक्षणादि से द्ररिद्र कुल में उत्पत्ति, दरिद्रता, कोढ़ के रोगादि, बहुत लोगों का धिक्कार पात्र, अवर्णवाद, दुर्भाग्य, तृष्णा, भूख, घात, भार खेंचना, प्रहारादि अशुभ फलों को भोगता हुआ प्राणी अनंत दुःखी होता है ।

जइ इच्छह निव्वाणं अहवा लोए सुवित्थडं कित्तिं ।
ता जिणवरणिद्दिट्ठं विहिमग्गे आयरं कुणह ।।

हे भव्य प्राणियों ! यदि तुम्हें निर्वाण पद की इच्छा हो अथवा लोक में हमेशा कीर्ति का विस्तार करना हो तो जिनेश्वर-देव के बताए हुए विधिमार्ग का आदर करो ।

वीतराग ! सपयास्तवाज्ञापालनं परम् ।
आज्ञाराद्धा विराद्धा च शिवाय च भवाय च ।। (वीतराग-स्तोत्र)

हे वीतराग ! आपकी पूजा के वनिस्पत आपकी आज्ञा का पालन करना श्रेष्ठ है । क्योंकि आपकी आज्ञा का अनुसरण मोक्ष प्राप्त कराता है और आज्ञा का उलंघन संसार में भ्रमण कराता है ।

उपदेश-सप्ततिका के पांचवें अधिकार में कहा है कि -

ज्ञानद्रव्यं यतोऽकल्प्यं देव-द्रव्यवदुच्यते ।
साधारणमपि द्रव्यं कल्पते सङ्घ-सम्मतम् ।

एकैत्रेव स्थानके देववित्तं क्षेत्र - द्वय्यामेव तु ज्ञानरिक्थम् ।।
सप्त क्षेत्र्यां स्थापनीयं तृतीयं श्रीसिद्धान्ते जैन एवं ब्रवीति ।

देवद्रव्य की तरह ज्ञानद्रव्य भी अकल्पनीय कहलाता है । साधारण द्रव्य भी संघ की सम्मति से सात क्षेत्रों में काम आता है, देवद्रव्य एक ही स्थान (क्षेत्र) में काम आता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है और ज्ञानद्रव्य ऊपर के दो क्षेत्रों में काम आता है । साधारण द्रव्य सातों क्षेत्रों में काम आ सकता है, ऐसा सिद्धान्तों में कहा है ।

पायेणंतदेऊल जिणपडिमा कारिआओ जियेण ।
असमंजसवित्तीए न य सिद्धो दंसणलवोवि ।।

इस जीव ने प्रायः करके अनंत मंदिर और जिन प्रतिमा बनवाई होगी, परंतु शास्त्रविधि के विपरीत होने से सम्यक्त्व का अंश भी प्राप्त नहीं हुआ ।

'न पूइओ होइ तेहिं जिन - नाहो ।'
'पूजाए मणसंति मण - संतिएण सुहवरे णाणं ।'

आज्ञारहित द्रव्यादि सामग्री से जिनेश्वर की पूजा की हो तो भी वास्तविक जिन पूजा नहीं की । पूजा का फल मन की शांति है और मन की शांति से उत्तरोत्तर शुभध्यान होता है ।

उपसर्गाः क्षयं यान्ति छिद्यन्ते विघ्नवल्लयः ।
मनः प्रसन्नतामेति पूज्यमाने जिनेश्वरे ।।

भावभक्ति से जिनेश्वर भगवान को पूजने पर आनेवाले उपसर्गो का नाश होता है, अंतराय कर्म भी टूट जाते हैं और मन की प्रसन्नता भी प्राप्त होती है ।

अतिचार :

तथा देवद्रव्य, गुरुद्रव्य, साधारण द्रव्य भक्षित उपेक्षित प्रज्ञापराधे विणास्यो विणसंतो उवेख्यो छती शक्ति से सार संभाल न कीधी ।

भक्षण करनेवालों को अतिचार : देवद्रव्य-गुरुद्रव्य-साधारण द्रव्य भक्षण किया, भक्षण करनेवाले की उपेक्षा की, जानकारी न होने से देवद्रव्य का विनाश करे और विनाश करनेवाले को उपेक्षा करे और शक्ति होने पर भी सार संभाल नहीं की ।

द्रव्य सप्ततिका स्वोपज्ञ टीका :-

जिणदव्वऋणं जो धरेइ तस्य गेहम्मि जो जिमइ सड्ढो ।
पावेण परिलिंपइ गेण्हंतो वि हु जइ भिक्खं ।।

जो जिन-द्रव्य का कर्जदार होता है, उसके घर श्रावक जीमता है वह पाप से लेपा जाता है, साधु भी आहार ग्रहण करता है तो वह भी पाप से लेपा जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न - देवद्रव्य-भक्षक-गृहे जेमनाय गन्तुं कल्पते ? नवा इति-गमने वा तद् जेमन-निष्क्रय-द्रव्यस्य देवगृहे मोक्तुमुचितम् नवा इति ? मुख्यवृत्त्या तद् गृहे भोक्तुं नैव कल्पते ।

देवद्रव्य का भक्षण करनेवाले के घर जीमने जाना कल्पता है या नहीं ? और जीमने जावे तो वह जीमन का निष्क्रय द्रव्य देवमंदिर में देना उचित है या नहीं ? मुख्यतया उस घर जीमने जाना कल्पता नहीं है ।

चेइअ दव्वं गिणिहंतु भुंजए जइ देइ साहुण ।
सो आणा अणवत्थं पावई लिंतो विदितोवि ।।

व्यवहार-भाष्य में कहा है कि जो देवद्रव्य ग्रहण करके भक्षण करता है और साधु को देता है वह आज्ञाभंग, अनवस्था दोष से दूषित होकर और लेनेवाले और देनेवाले दोनों पाप से लिप्त होते हैं ।

अत्र इदम् हार्दम्-धर्मशास्त्रानुसारेण लोकव्यवहारानुसारेणापि यावद् देवादि ऋणम् सपरिवार-श्राद्धादेर्मूर्ध्नि अवतिष्ठते तावद् श्राद्धादि-सत्कः सर्वधनादि - परिग्रहः देवादि-सत्कतया सुविहितैः व्यवह्रियते संसृष्टवात् ।

यहाँ यह रहस्य है कि धर्मशास्त्र एवं लोक व्यवहार से भी जब तक देवादि का ऋण परिवारवाले श्रावकादि के सिर पर रहता है, तब तक श्राद्धादि का सभी धनादि परिग्रह संपत्ति देवद्रव्यादि-मिश्रित है । इससे उसके घर में भोजन करने से उपरोक्त दोष लगते हैं ।

मूल्लं विना जिणाणं उवगरणं, चमर छत्तं कलशाइ ।
जो वापरेइ मूढो, निअकज्जे, सो हवइ दुहिओ ।।

जो जिनेश्वर भगवान के उपकरण, चामर, छत्र, कलशादि का भाड़ा (किराया) दिए बिना अपने कार्य में लेता है, वह मूढ दुःखी होता है ।

देवद्रव्येण यत्सौख्यं, परदारतः यत्सौख्यम् ।
अन्तान्तदुःखाय, तत् जायते ध्रुवम् ।।

भावार्थ - देवद्रव्य से जो सुख और परस्त्री से जो सुख प्राप्त होता है, वह सुख अनंतानंत दुःख देनेवाला होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

*** एक कोथली से व्यवस्था दोषित है ।**

देवद्रव्यादि धर्मद्रव्य की व्यवस्था एक कोथली से करना दोषपात्र होने से अत्यन्त अनुचित है ।

अमुक गाँवों में एक कोथली की व्यवस्था है । देवद्रव्य के रुपये आए तो उसी कोथली में डाले, ज्ञानद्रव्य के रुपये आए तो उसी कोथली में तथा साधारण के रुपये आए तो भी उसी कोथली में डालते हैं और जब मन्दिरादि के कोई भी कार्य में खर्च करने होते हैं, तब उसी कोथली में से खर्च करते हैं, उस वक्त आगम ग्रन्थ लिखने का या छपवाने का कार्य अथवा साधु-साध्वीजी म.सा. को पढानेवाले पंडितजी को पगार चुकाने का प्रसंग उपस्थित हो, तब उस कोथली में से रुपये लेकर खर्च करते हैं अथवा साधु आदि के वैयावच्चादि के प्रसंग में भी उसमें से ही खर्च करते हैं ।

वास्तव में देवद्रव्य की, ज्ञानद्रव्य की तथा साधारण द्रव्य वगैरह सब की कोथली अलग-अलग रखनी चाहिए । देवद्रव्य आदि के उपभोग से बचने के लिए बहुत ही जरूरी है । मंदिर का कार्य आवे तो देवद्रव्य की कोथली में से धन व्यय करना चाहिए । ज्ञान का कार्य आवे तो ज्ञानद्रव्य की कोथली में से तथा साधारण के कार्य उपस्थित होवें तो साधारण की कोथली में से धन व्यय करना चाहिए । लेकिन ज्ञान, साधारण खाते की रकम न होवे तो देवद्रव्य की कोथली में से लेकर ज्ञानादि के कार्य में देवद्रव्य का व्यय नहीं कर सकते । यद्यपि मंदिर का कोई कार्य आए तो ज्ञानद्रव्य का उपयोग हो सकता है, क्योंकि ऊपर के खाते के कार्य में नीचे के खाते की सम्पत्ति का व्यय करने में शास्त्र की कोई बाधा नहीं है । अतः देवद्रव्यादि सब द्रव्य की एक कोथली रखने से देवद्रव्य का दुरुपयोग होता है जो पाप का कारणभूत है ।

इस हेतु सब द्रव्य की एक कोथली रखना और सर्व कार्यों में उसमें से द्रव्य खर्चना तद्दन गलत है ।

- परिशिष्ट - ६ देवद्रव्यादि का संचालन कैसे हो ?

पुस्तक में से साभार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-७

शास्त्रानुसारी महत्त्वपूर्ण निर्णय

स्वप्नों की घी की बोली का मूल्य बढ़ाकर वह वृद्धि साधारण खाते में नहीं ले जा सकते।

पू. पाद सुविहित आचार्यादि मुनि भगवन्तों का शास्त्रानुसारी सचोट मार्गदर्शन

समस्त भारत वर्ष के श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघों को सदा के लिए मार्गदर्शन प्राप्त हो, इस शुभ उद्देश्य से एक महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है ।

इसकी पूर्व भूमिका इस प्रकार है । वि.सं. १९९४ में शान्ताक्रुझ (बम्बई) में पू. पाद सिद्धान्त महोदधि गच्छाधिपति आचार्य भगवन्त श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराजश्री की आज्ञा से पूज्य मुनिवर श्री [?] पर्युषणा पर्व की आराधना के लिए श्रीसंघ की विनति से पधारे थे। उस समय संघ के कई भाइयों की भावना साधारण खाते के खर्च को पूरा करने के लिए स्वप्नों की बोली में घी के भाव बढ़ाकर उसे साधारण खाते में ले जाने की हुई । यह भावना जब संघ में प्रस्ताव के रूप में रखी गई तो उस चातुर्मास में श्री पर्युषण पर्व की आराधना कराने श्रीसंघ की विनति से पधारे हुए पू. मुनि-महाराजाओं ने उसका दृढ़ता से विरोध करते हुए बताया कि 'ऐसा करना उचित नहीं है । यह न तो शास्त्रानुसारी है और न व्यावहारिक ही । स्वप्नों की बोली में इस प्रकार साधारण खाता की आय नहीं मिलाई जा सकती है । इसमें हमारा स्पष्ट विरोध है ।' उन्होंने यह भी कहा कि - 'संघ को इस विषय में निर्णय लेने के पहले जैन संघ के विराजमान एवं विद्यमान पू. सुविहित शासनमान्य आचार्य भगवन्तों से परामर्श करना चाहिए और उसके बाद ही उनकी सम्मति से ही इस विषय में निर्णय लिया जाना चाहिए ।'

अतः तत्कालीन शान्ताक्रुझ संघ के प्रमुख सुश्रावक जमनादास मोरारजी जे.पी. ने इस बात को स्वीकार करके समस्त भारत के जैन श्वे.मू.पू. संघ में, उसमें भी तपागच्छ श्रीसंघ में विद्यमान पू. आचार्य भगवन्तों को इस विषय में पत्र लिखे । वे पत्र तथा उनके जो प्रत्युत्तर प्राप्त हुए, वह सब साहित्य वि.सं. १९९५ के मेरे [पू.आ.श्री कनकचन्द्रसूरि म.] लालबाग जैन उपाश्रय के चातुर्मास में मुझे सुश्रावक नेमिदास अभेचन्द मांगरोल निवासी के माध्यम से प्राप्त हुआ । उसे मैंने [पू.आ.श्री कनकचन्द्रसूरि म.] पहले 'कल्याण' मासिक में प्रकाशनार्थ दिया और आज फिर से अनेक सुश्रावकों की भावना को स्वीकार कर पुस्तक के रूप में उसे प्रकाशित किया जा रहा है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१)

शान्ताक्रुझ संघ की ओर से लिखा गया प्रथम पत्र

'सविनय निवेदन है कि यहाँ का संघ सं. १९९३ के साल तक स्वप्नों के घी की बोली ढाई रुपया प्रति मन से लेता रहा है तथा उसकी आय को देवद्रव्य के रूप में माना जाता था । परन्तु साधारण खाते की पूर्ति के लिये चालू वर्ष में एक प्रस्ताव किया कि स्वप्नों की बोली के घी के भाव रू. ढाई की जगह रु. पाँच किये जावें । जिसमें से पूर्व की भांति ढाई रुपया देवद्रव्य में और ढाई रुपये साधारण खर्च की पूर्ति के लिए साधारण खाते में जमा किये जावें । उक्त प्रस्ताव में शास्त्रीय दृष्टि से या परम्परा से उचित गिना जा सकता है क्या ? इस सम्बन्ध में आपका अभिप्राय बताने की कृपा करें जिससे वह परिवर्तन करने की आवश्यकता हो तो समय पर शीघ्रता से किया जा सके । श्री सूरत, भरुच, बडौदा, खम्भात, अहमदाबाद, महेसाणा, पाटण, चाणस्मा, भावनगर आदि अन्य नगरों में क्या प्रणालिका है ? ये नगर स्वप्नों की बोली के घी आय का किस प्रकार उपयोग करते हैं ? इस विषय में आपका अनुभव बतलाने की कृपा करें ।'

श्रीसंघ के उक्त प्रस्तावानुसार श्री स्वप्नों की बोली के घी की आय श्री देवद्रव्य ओर साधारण खाते में ले जाई जाय तो श्रीसंघ दोषित होता है या नहीं ? इस विषय में आपका अभिप्राय बतलाने की कृपा करें ।

संघ-प्रमुख

जमनादास मोरारजी

(२)

दुबारा इस विषय में श्रीसंघ द्वारा लिखा गया दूसरा पत्र

'सविनय निवेदन है कि यहाँ श्रीसंघ में स्वप्नों के घी की बोली का भाव ढाई रुपया गत वर्ष तक था । वह आमदनी देवद्रव्य की समझी जाती थी, परन्तु साधारण खर्च की पूर्ति के लिए श्रीसंघ ने विचार करके एक प्रस्ताव किया कि मूल २।।) रु. आवें ये सदा की भांति देवद्रव्य में ले जाये जावें और २।।) रु. जो अधिक आवें वे साधारण खाते की आमदनी में ले जाये जावें । उक्त ठहराव शास्त्र के आधार से ठीक है या नहीं, इस विषय में आपका अभिप्राय बतलाने की कृपा करियेगा । श्री सूरत, भरूच, बडौदा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खम्भात, अहमदाबाद, महेसाणा, पाटण, चाणस्मा, भावनगर आदि श्रीसंघ स्वप्नों की बोली की आय का किस किस प्रकार उपयोग करते हैं, वह आप के ध्यान में हो तो बताने की कृपा करें ।'

शान्ताक्रुझ श्रीसंघ की तरफ से लिये गये पत्रों के उत्तर रूप में पू. पाद सुविहित शासन मान्य आचार्य भगवन्तों की तरफ से जो जो प्रत्युत्तर श्रीसंघ के प्रमुख सुश्रावक जमनादास मोरारजी जे. पी. को प्राप्त हुए, वे सब पत्र यहां प्रकाशित किये जा रहे हैं । उन पर से स्पष्ट रूप से प्रतीत होगा कि **स्वप्नों की आय में वृद्धि करके प्राप्त की गई रकम भी साधारण खाते में नहीं ले जाई जा सकती है ।'** इस प्रकार सचोट एवं दृढ़ता के साथ पू. पाद शासनमान्य आचार्य भगवन्तों ने फरमाया है । ऐसी स्थिति में जो वर्ग सारी स्वप्नद्रव्य की आय को साधारण खाते में ले जाने की हिमायत कर रहा है, वह वर्ग शास्त्रीय सुविहित मान्य परम्परा के कितना दूर-सुदूर जाकर, श्री वीतरागदेव की आज्ञा के आराधक कल्याणकामी अनेक आत्माओं का अहित करने की पापप्रवृत्ति को अपना रहा है, यह प्रत्येक सुज्ञ आराधंक आत्मा स्वयं विचार कर सकता है ।

(१)

पू. पाद आचार्यदेवादि मुनिवरों के अभिप्राय

ता. २३-१०-३८

'अहमदाबाद से लि० पूज्यपाद आराध्यपाद आचार्यदेव श्रीश्रीश्री **विजयसिद्धि सूरीश्वरजी महाराजश्री** की ओर से तत्र शान्ताक्रुझ मध्ये देवगुरु पुण्य प्रभावक सुश्रावक जमनादास मोरारजी वि० श्रीसंघ समस्त योग्य ।'

मालूम हो कि आपका पत्र मिला । पढ़कर समाचार जाने । पूज्य महाराजजी सा. को दो दिन से ब्लड-प्रेशर की शिकायत हुई है । इसलिये ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने की झंझट से दूर रहना चाहते हैं । इसलिए ऐसे प्रश्न यहाँ न भेजें क्योंकि डाक्टर ने मगजमारी करने और बोलने की मनाही कर रखी है । तो भी यदि हमारा अभिप्राय पूछते हो तो संक्षेप में बताते हैं कि **'स्वप्नों की आमदनी के पैसे हम तो देवद्रव्य में ही उपयोग में लिखाते हैं । हमारा अभिप्राय उसे देवद्रव्य मानने का है ।** अधिकांश गांवों या नगरों में उसे देवद्रव्य के रूप में ही काम में लेने की प्रणाली है ।'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधारण खाते में कमी पड़ती हो तो उसके लिए दूसरी पानड़ी (टीप) करना अच्छा है, परन्तु स्वप्नों के घी की बोली के भाव २।।) के बदले ५) का भाव करके आधे पैसे देवद्रव्य में ले जाना उचित नहीं है । तथा यदि श्रीसंघ ऐसा करता है तो वह दोष का भागीदार है । ऐसा करने की अपेक्षा साधारण खाते अलग पानडी करना क्या बुरा है ? इसलिए **स्वप्नों के निमित्त के पैसों को साधारण खाते में ले जाना हमको ठीक नहीं लगता है । हमारा अभिप्राय उसे देवद्रव्य में ही काम में लेने का है ।'**

पू. महाराजश्री की आज्ञा से -
द. : मुनि **'कुमुदविजयजी'**

(२)

'साणंद से आचार्य महाराज **श्री विजयमेघसूरीश्वरजी म.** आदि की तरफ से-'

'बम्बई मध्ये देवगुरु भक्तिकारक सुश्रावक जमनादास मोरारजी योग धर्मलाभ । यहाँ सुखशाता है । आपका पत्र मिला । उसके सम्बन्ध में हमारा अभिप्राय यह है कि **स्वप्नों की बोली सम्बन्धी जो कुछ आय हो उसे देवद्रव्य के सिवाय अन्यत्र नहीं ले जाई जा सकती है।** अहमदाबाद, भरुच, सूरत, छाणी, प्राटण, चाणस्मा, महेसाणा, साणंद आदि बहुत से स्थानों में प्रायः ऊपर कही हुई प्रवृत्ति चलती है । यही धर्मसाधन में विशेष उद्यम रखें ।' **द. : सुमित्रविजय** का धर्मलाभ

(३)

उदयपुर आ.सु. ६
मालदास की शेरी

'जैनाचार्य विजय **नीतिसूरीश्वरजी** आदि ठाणा १२ शान्ताक्रुझ मध्ये सुश्रावक भक्तिकारक श्रावकगुण सम्पन्न शा. जमनादास मोरारजी जोग धर्मलाभ वांचना । देवगुरु प्रताप से सुखशाता है । उसमें रहते हुए आपका पत्र मिला । बांचकर समाचार जाने । पुनः भी लिखियेगा । **पुरानी प्रणालिका अनुसार हम स्वप्नों की आय को देवद्रव्य में ले जाने के विचारवाले हैं ।** क्योंकि तीर्थंकर की माता स्वप्नों को देखती है, वह पूर्व में तीर्थंकर नाम बांधने से तीर्थंकर माता चवदह स्वप्न देखती है । वे च्यवन कल्याणक के सूचक हैं । अहमदाबाद में सपनों की उपज को देवद्रव्य माना जाता है । यही जो याद करे उसे धर्मलाभ कहियेगा ।' द. : 'पंन्यास **सम्मतविजयजी** गणी के धर्मलाभ'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(४)

ता. २८-९-३८

सिद्धक्षेत्र पालीताणा से लि० आचार्य श्री **विजयमोहनसूरिजी** आदि । तत्र देवगुरु भक्तिकारक सुश्रावक सेठ जमनादास मोरारजी मु. शान्ताक्रुझ योग्य धर्मलाभ के साथ-यहाँ देवगुरु प्रसाद से सुखशाता है । आपका पत्र मिला । समाचार जाने ।

पर्वाधिराज श्री पर्युषण पर्व में स्वप्नों की बोली के द्रव्य को किस खाते में गिनना, यह पूछा गया तो इस विषय में यह कहना है कि-गज, वृषभादि जो चौदह महास्वप्न श्री तीर्थंकर भगवन्त की माता को आते हैं, वे त्रिभुवन पूज्य श्री तीर्थंकर महाराज के गर्भ में आने के प्रभाव से ही आते हैं । अर्थात् माता को आनेवाले स्वप्नों में तीर्थंकर भगवान् ही कारण हैं।

उक्त रीति से **स्वप्न आने में जब तीर्थंकर भगवन्त कारण हैं तो उन स्वप्नों की बोली के निमित्त जो द्रव्य उत्पन्न होता है, वह देवद्रव्य में ही गिना जाता है** । ऐसा हमको उचित लगता है । जिस द्रव्य की उत्पत्ति में देव का निमित्त हो वह देवद्रव्य ही गिना जाना चाहिए, ऐसा हम मानते हैं । इतना ही । धर्मकरणी में विशेष उद्यत रहें । स्मरण करनेवालो को धर्मलाभ कहें।

आसोज सु. ३ सोमवार

द. : **धर्मविजय** का धर्मलाभ

वर्तमान में पू.आ.म. श्री विजयधर्मसूरीश्वरजी म.

आप के यहाँ आज तक बोली का भाव प्रति मन ढाई रुपया था और वह सब देवद्रव्य गिना जाता था । वह ढाई रुपया देवद्रव्य का कायम रखकर मन का भाव आपने पांच रुपया करना ठहराया । **शेष रुपये ढाई साधारण खाते में ले जाने का आपने नक्की किया, यह हम को शास्त्रीय दृष्टि से उचित नहीं लगता । आज तो आपने स्वप्नों की बोली में यह कल्पना की, कल प्रभु की आरती पूजा आदि की बोली में भी इस प्रकार की कल्पना करेंगे तो क्या परिणाम आवेगा ? अतः जो था वह सर्वोत्तम था** । स्वप्नों की बोली के ढाई रुपये कायम रखिये और साधारण की आय के लिए स्वप्नों की बोली में कोई भी परिवर्तन किये बिना दूसरा उपाय ढूंढिये; यह अधिक उत्तम है । इतना ही । धर्मकरणी में उद्यत रहें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(५)

ईडर आ.सु. १४

पूज्य आचार्य महाराज श्रीमद् विजय **लब्धिसूरिजी महाराज** की आज्ञा से तत्र सुश्रावक देवगुरु भक्तिकारक जमनादास मोरारजी योग्य धर्मलाभ बांचना ।

आप का पत्र मिला । बांच कर समाचार जाने । **आप देवद्रव्य के भाव २।। को पांच करके २।। साधारण खाते में ले जाना चाहते हो; यह जाना परन्तु ऐसा होने से जो पच्चीस मन घी बोलने की भावनावाला होगा; वह बारह मन बोलेगा, इसलिए कुल मिलाकर देवद्रव्य की हानि होने का भय रहता है, अतः ऐसा करना हमें उचित नहीं लगता ।** साधारण खाते की आय को किसी प्रकार के लाग द्वारा बढ़ाया जाना ठीक लगता है । दूसरे गांवों में क्या होता है, इसकी हमें खास जानकारी नहीं है । जहां जहां हमने चौमासे किये हैं वहां अधिकांश देवद्रव्य में ही स्वप्नों की आय जमा होती है । कहीं कहीं स्वप्नों की आय में से अमुक भाग साधारण खाते में ले जाया जाता है । परन्तु ऐसा करनेवाले ठीक नहीं करते, ऐसी हमारी मान्यता है । धर्मसाधन में उद्यम करियेगा ।

द. : '**प्रवीणविजय** के धर्मलाभ'

(६)

प.पू. पाद् आचार्यदेव श्री **विजयप्रेमसूरीश्वरजी म.** तरफ से शान्ताक्रुझ मध्ये देवगुरु भक्तिकारक सुश्रावक जमनादासभाई योग्य धर्मलाभ । आप का पत्र मिला । पढ़कर समाचार जाने । **सूरत, भरूच, अहमदाबाद, महेसाणा और पाटन में मेरी जानकारी के अनुसार किसी अपवाद के सिवाय स्वप्न की आय देवद्रव्य में जाती है । बड़ौदा में पहले हंसविजयजी लायब्रेरी में ले जाने का प्रस्ताव किया था परन्तु बाद में उसे बदलकर देवद्रव्य में ले जाने की शुरुआत हुई थी । खम्भात में अमरचन्द शाला में देवद्रव्य में होता जाता है । चाणस्मा में देवद्रव्य में जाता है ।** भावनगर की निश्चित जानकारी नहीं है ।

अहमदाबाद में साधारण खाता के लिए प्रतिघर से प्रतिवर्ष अमुक रकम लेने का रिवाज है, जिससे केसर, चन्दन, धोतियां आदि का खर्च हो सकता है । ऐसी योजना अथवा प्रतिवर्ष शक्ति अनुसार पानड़ी की योजना चलाई जाय तो साधारण खाते में ले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाना तो उचित नहीं लगता । **तीर्थंकर देव को लक्ष्य में रखकर ही स्वप्न हैं तो उनके निमित्त से उत्पन्न रकम देवद्रव्य में ही जानी चाहिए ।**

'गप्प दीपिका समीर' नाम की पुस्तक में प्रश्नोतर में पूज्य स्व. आचार्यदेव विजयानन्दसूरिजी का भी ऐसा ही अभिप्राय छपा हुआ है ।

सबको धर्मलाभ कहना ।

द. : **'हेमन्तविजय** के धर्मलाभ'

(७)

जैन उपाश्रय, कराड़

आचार्य श्री **विजयरामचन्द्रसूरि** की तरफ से धर्मलाभ । **स्वप्न उतारने की क्रिया प्रभु-भक्ति के निमित्त ही होती है । अतः इसकी आमदनी कम हो, ऐसा कोई भी कदम उठाने से देवद्रव्य की आय को रोकने का पाप लगता है इसलिए आपका प्रस्ताव किसी भी तरह योग्य नहीं है परन्तु शास्त्र विरुद्ध है** । साधारण की आय के लिये अनेक उपाय किये जा सकते हैं ।

अहमदाबाद आदि में स्वप्नों की उपज जीर्णोद्धार में दी जाती है । **जिन-जिन स्थानों में गड़बड़ी होती है या हुई है तो वह अज्ञान का ही परिणाम है । अतः उनका उदाहरण लेकर आत्मनाशक वर्ताव किसी भी कल्याणकारी श्रीसंघ को नहीं करना चाहिए ।**

सब जिनाज्ञा के रसिक और पालक बनें, यही अभिलाषा ।

(८)

श्री मुकाम पाटण से लि० **विजयभक्तिसूरि** तथा पं. कंचनविजयादि ठा. १९ तरफ से-

मु. शान्ताक्रुझ मध्ये देवगुरु भक्तिकारक धर्मरागी जमनादास मोरारजी योग्य धर्मलाभ वांचना । आपका पत्र पहुँचा । समाचार जाने । आपने स्वप्नों की बोली के सम्बन्ध में पूछा उसके उत्तर में लिखना है कि-

पहले ढाई रुपये के भाव से देरासरजी (मन्दिरजी) में ले जाते थे । अब पांच रुपये का प्रस्ताव करके आधा साधारण खाते में ले जाने का विचार करते हो, यह विचारणीय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न है। क्योंकि जब ढाई रुपये के पांच रुपये भाव करेंगे तो स्वाभाविक रूप से कम घी बोला जावेगा। इसलिए मूल आवक में परिवर्तन हो सकता है । साथ ही मुनि सम्मेलन के समय-आधा साधारण खाते में ले जाने का निर्णय नहीं हुआ है । **तो भी आप वयोवृद्ध आचार्यश्री विजयसिद्धिसूरिजी तथा विजयनेमिसूरिजी महाराज को पूछ लेना ।**

आप जैसे गृहस्थ धारें तो साधारण में लेशमात्र भी कमी न आवे । न धारें तो कमी आने की है ! **सब से उत्तम मार्ग तो जैसा पहले है वैसा ही रखना है** । कदाचित् आप के लिखे अनुसार आधा-आधा करना पड़े तो ऊपर सूचित दो स्थानों पर पूछकर कर लेना । यह बराबर ध्यान में लेना । धार्मिक क्रिया करके जीवन को सफल करना । अहमदाबाद तक कदाचित् आने का प्रसंग आवे तो पाटण नगर के देरासरजी की यात्रा का लाभ लेना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-८

स्वप्नों की आय का द्रव्य, देवद्रव्य ही है !

पूज्यपाद सुविहित आचार्यादि महापुरुषों का शास्त्रानुसारी महत्वपूर्ण आदेश

विक्रम संवत् १९९४ में पू. पाद सुविहित शासन मान्य गीतार्थ आचार्य भगवन्तों का शास्त्रानुसारी स्पष्ट एवं दृढ़ उत्तर यही प्राप्त हुआ कि स्वप्नों की आय को देवद्रव्य ही माना जाए और उसमें जो भी वृद्धि हो वह भी साधारण खाते में न ले जाते हुए देवद्रव्य में ही ले जाई जाए । इसके पश्चात् पुनः वि.सं. २०१० में इसी महत्त्वपूर्ण प्रश्न के सम्बन्ध में वर्तमानकालीन समस्त तपागच्छ के श्वे.मू.पू. संघ के पूज्य सुविहित शासन-मान्य आचार्य भगवन्तों के साथ पत्र-व्यवहार करके उनके स्पष्ट एवं सचोट निर्णय तथा शास्त्रीय मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए वेरावल निवासी सुश्रावक अमीलाल रतिलाल ने जो पत्र-व्यवहार किया और जो उन पू.पाद आचार्य भगवन्तों के उत्तर प्राप्त हुए वे 'श्री महावीर शासन' में प्रसिद्ध हुए । उन्हें पुस्तकाकार प्रदान करने हेतु अनेक भव्यात्माओं का आग्रह होने से तथा वह साहित्य चिरकाल तक स्थायी रह सके इस दृष्टि से पुनः उन्हें प्रकाशित किया जा रहा है ताकि आराधक भाव में रूचि रखनेवाले कल्याणकामी आत्माओं के लिए वह उपयोगी एवं उपकारक बने ।

(१)

अहमदाबाद, श्रावण सुदी १२

परम पूज्य संघ-स्थविर आचार्यदेव श्रीमद् **विजयसिद्धिसूरीश्वरजी** महाराज सा. आदि की तरफ से-

वेरावल मध्ये श्रावक अमीलाल रतिलाल जैन ! धर्मलाभ । आपका पत्र मिला । पढ़कर समाचार ज्ञात हुए । आप के पत्र का उत्तर इस प्रकार हैं :-

चौदह स्वप्न, पारणा, घोडियाँ तथा उपधान की माला की बोली का घी-ये सभी आय शास्त्र की दृष्टि से देवद्रव्य में ही जाती है और यही उचित है । तत्सम्बन्धी शास्त्र के पाठ 'श्राद्धविधि' 'द्रव्य सप्ततिका' एवं अन्य सिद्धान्त-ग्रन्थों में हैं । अतः **यह आय**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवद्रव्य की ही है । इसे साधारण खाते में जो ले जाते हैं वे स्पष्ट रूप से गलती करते हैं । धर्मसाधन में उद्यत रहें ।

लि. आचार्यदेव की आज्ञा से

द. : 'मुनि कुमुदविजय की और से धर्मलाभ'

(२)

अहमदनगर, खिस्ती गली जैन धर्मशाला, सुदी १४

पू. पाद आचार्यदेव श्री **विजयप्रेमसूरीश्वरजी म.** की तरफ से सुश्रावक अमीलाल रतीलाल योग धर्मलाभ वांचना । तारीख १० का आपका पत्र मिला । चवदह स्वप्न, पारणा, घोड़ियां तथा उपधान की मालादि के घी (आय) को अहमदाबाद मुनि सम्मेलन ने शास्त्रानुसार देवद्रव्य में ले जाने का निर्णय किया है । वही योग्य है । धर्मसाधना में उद्यमवंत रहें ।

द. : 'त्रिलोचन विजय का धर्मलाभ'

(३)

पालीताना साहित्य मन्दिर, ता. ५-८-८४ गुरुवार

पू.आ.भ.श्री **विजय भक्तिसूरीश्वरजी** म. की तरफ से मु. वेरावल श्रावक अमिलाल रतिलाल योग्य धर्मलाभ । आपका पत्र मिला । निम्नानुसार उत्तर जानिए :-

(१) उपधान की माला का घी देवद्रव्य के सिवाय अन्यत्र नहीं ले जाया जा सकता ।

(२) चौदह स्वप्न तथा घोडियाँ-पारणा का घी भी देवद्रव्य में ले जाना ही उत्तम है । इन्हें देवद्रव्य में ही ले जाना धोरी मार्ग है । अहमदाबाद के मुनि सम्मेलन में भी यही निर्णय हुआ है कि इसे मुख्यमार्ग के रूप में देवद्रव्य ही माना जाय । इत्यादि समाचार जानना । देवदर्शन में याद करना ।

लि. विजयभक्तिसूरि (द : स्वयं)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(४)

पावापुरी, सु. १४

पू. परम गुरुदेव श्रीमद् **विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी** म. की तरफ से देवगुरु भक्तिकारक सुश्रावक अमीलाल योग धर्मलाभ । तारीख १० का आपका पत्र मिला । उत्तर में ज्ञात करें कि स्वप्नद्रव्य, पारणा, घोडियां इत्यादि श्री जिनेश्वर देव को उद्देश्य करके घी की बोलियां बोली जाती हैं उनका द्रव्य शास्त्र के अनुसार देवद्रव्य में ही गिना जाना चाहिए । इससे विपरीत रीति से उसे उपयोग में लेनेवाला देवद्रव्य के नाश के पाप का भागोदार होता है ।

धर्म की आराधना में सदा उद्यत रहो यही सदा के लिए शुभाभिलाषा है ।

द. : चारित्रविजय के धर्मलाभ

(स्व. उपाध्यायजी श्री चारित्रविजयजी गणिवर)

(५)

श्रावण सुद ७ शुक्रवार ता. ६-८-५४

गुडा बालोतरा (राजस्थान)

पूज्य आचार्य महाराज श्री **विजय महेन्द्रसूरीश्वरजी** म. आदि की तरफ से-

वेरावल मध्ये सुश्रावक शाह अमीलाल रतिलाल योग धर्मलाभ । आपका पत्र मिला । पढ़कर समाचार ज्ञात हुए । उत्तर में लिखा जाता है कि उपधान की आय देवद्रव्य में जाती है ऐसा ही प्रश्न में उल्लेख है । दूसरी बात यह है कि स्वप्नों की आय के लिए स्वप्न उतारना जब से शुरु हुआ है तब से यह आमदनी देवद्रव्य में ही जाती रही है । इसमें से देरासर के गोंठी को तथा नौकरों को पगार (वेतन) दिया जाता है । साधु सम्मेलन में इस प्रश्न पर चर्चा हुई थी । परम्परा से यह राशि देवद्रव्य में गिनी जाती रही है इसलिए देवद्रव्य में ही इसे ले जाने हेतु उपदेश देने का निर्णय किया गया । यहाँ सुखशान्ति है, वहाँ भी सुखशान्ति वरते । धर्मध्यान में उद्यम करना । नवीन ज्ञात करना ।

द. : 'मुनिराज श्री अमृतविजयजी'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(सुविहित आचार्यदेवों की परम्परा से चली आती हुई आचरणा भी भगवान् की आज्ञा की तरह मानने हेतु भाष्यकार भगवान् सूचित करते हैं । निर्वाह के अभाव में देवद्रव्य में से गोठी को या नौकर को पगार दी जाए, यह अलग बात है परन्तु जहाँ निर्वाह किया जा सकता है वहाँ यदि ऐसा किया जाए तो दोष लगता है - ऐसा हमारा मन्तव्य है ।)

(६)

स्वस्ति श्री राधनपुर से लि. आचार्य श्री विजय **कनकसूरिजी** आदि ठाणा १० तत्र श्री वेरावल मध्ये सुश्रावक देवगुरुभक्तिकारक शा. अमीलाल रतिलाल भाई योग्य धर्मलाभ पहुंचे। यहां देवगुरु कृपा से सुखशाता वर्तें है । आपका पत्र मिला । उत्तर निम्न प्रकार से जानना :-

चौदह स्वप्न, पारणा, घोडिया तथा उपधानमाला आदि का घी या रोकड रुपया बोला जाय वह शास्त्र की रीति से तथा सं. १९९० के अहमदाबाद मुनि सम्मेलन में ९ आचार्यों की हस्ताक्षरी सम्मति से पारित प्रस्ताव के अनुसार भी देवद्रव्य है । सम्मेलन में सैंकडों साधु-साध्वी तथा हजारों श्रावक थे । उस प्रस्ताव का किसी ने विरोध नहीं किया । सबने उसे स्वीकार किया ।

धर्मकरणी में भाव रखना, यही सार है । श्रावण सुदी १४

लि. 'विजयकनकसूरि का धर्मलाभ'

(वागडवाला)

पं. दीपविजय का धर्मलाभ वांचना

(स्व. पू.आ.भ. श्री **विजयदेवेन्द्रसूरि** म.)

(७)

भायखला जैन उपाश्रय, लवलेन

बम्बई नं. २७ ता. १५-८-५४

लि. **विजयामृतसूरि. पं. प्रियंकरविजयगणि** (वर्तमान में पू.आ.भ.श्री.विजय प्रियंकरसूरिजी म.) आदि की तरफ से देवगुरु भक्तिकारक श्रावक अमीलाल रतिलाल योग्य धर्मलाभ । आपका कार्ड लालबाड़ी के पते का मिला । यहां प्रातः स्मरणीय गुरु महाराजश्री के पुण्य प्रसाद से सुखशाता वर्त रही है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवद्रव्य के प्रश्न का शास्त्रीय आधार से चर्चा करके साधु सम्मेलन में निर्णय हो चुका है । **अखिल भारतवर्षीय साधु सम्मेलन की एक पुस्तक प्रताकार में प्रकाशित हुई है,** उसे देख लेना । वहाँ आ.विजय अमृतसूरिजी तथा मुनि श्री पार्श्वविजयजी आदि हैं - उन से स्पष्टीकरण प्राप्त करना तथा उनकी सुखशाता पूछना । यही अविच्छिन्न प्रभावशाली श्री वीतराग शासन को पाकर धर्म की आराधना में विशेष उद्यमवंत रहना- यही नरजन्म पाने की सार्थकता है ।

(पू.आ.भ. श्री विजयनीति सू.म. श्री के समुदाय के)

(८)

अहमदाबाद दि. ११-१०-५४

सुयोग्य श्रमणोपासक श्रीयुत् शा. अमीलालभाई जोग, धर्मलाभ । पत्र दो मिले । कार्यवशात् विलम्ब हो गया । खैर । आपने चौदह स्वप्न, पालना, घोडियां और उपधान की माला की घी की बोली की रकम किस खाते में जमा करना-आदि के लिए लिखा । **उसका उत्तर यह है कि परम्परा से आचार्य देवों ने देवद्रव्य में ही वृद्धि करने का फरमाया है । अतः वर्तमान वातावरण में उक्त कार्य में शिथिलता नहीं होनी चाहिये अन्यथा आपको आलोचना का पात्र बनना पड़ेगा** । किमधिकम् ।

द. : 'वि. हिमाचलसूरि का धर्मलाभ'

(९)

पालीताणा से लि. **भुवनसूरिजी का** धर्मलाभ । कार्ड मिला । समाचार जाने। स्वप्नों की बोली का पैसा देवद्रव्य में ही जाना चाहिए । साधारण खाते में वह नहीं ले जाया जा सकता। पूज्य सिद्धिसूरिजी म. लब्धिसूरिजी म., नेमिसूरिजी म., सागरजी म. आदि ५०० साधुओं की मान्यता यही है । आराधना में रत रहना । पारणा की बोली भी देवद्रव्य में हो जाती है । सुदी १२

(१०)

दाठा (जि. भावनगर) श्रावण सु. १२

पू.पा.आ.श्री. **ऋद्धिसागरसूरिजी** म. सा. तथा मुनि श्री **मानतुंगविजयजी म.** की ओर से-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मलाभ पूर्वक लिखने का है कि यहाँ सुखशाता है । आपका पत्र मिला । समाचार जाने। प्रश्न के उत्तर में जानिये कि **चौदह स्वप्न माता को प्रभुजी के गर्भवास के कारण पुण्यबल से आते हैं इसलिए तत्सम्बन्धी वस्तु देव सम्बन्धी ही गिनी जानी चाहिए** । मालादि के सम्बन्ध में भी यही बात है । प्रभुजी के दर्शन या भक्ति निमित्त संघ निकलते हैं तब संघ निकालनेवाले संघपति को तीर्थमाला पहनायी जाती थी अर्थात् तीर्थमाला भी प्रभुजी को भक्ति निमित्त हुए कार्य के लिए पहनायी जाती थी; इस कारण उसकी बोली की रकम भी देव का ही द्रव्य गिना जाता है । सब प्रकार की मालाओं के लिए ऐसी ही समझना । तथा **सं. १९९० के साल में अहमदाबाद में प्रस्ताव हुआ है । उस प्रस्ताव में इस द्रव्य को देवद्रव्य ही माना गया है ।**

(११)

भावनगर श्रावण सुदी ६

लि. आचार्य महाराज श्री **विजयप्रतापसूरिजी** म. श्री की तरफ से देवगुरु भक्तिकारक सुश्रावक अमीलाल रतिलाल योग्य धर्मलाभ वांचना ।

यहाँ धर्मप्रसाद से शान्ति है । आप का पत्र मिला । समाचार जाने । आपने १४ स्वप्न, घोडियां, पारणा तथा उपधान की माला की बोली का घी किस खाते में ले जाना । इसके विषय में मेरे विचार मंगवाये । ऐसे धार्मिक विषय में आपकी जिज्ञासा हेतु प्रसन्नता है । आपके यहाँ चातुर्मास में आचार्यादि साधु है तथा वेरावल में कुछ वर्षों से इस विषय की चर्चाएँ, उपदेश, विचार-विनिमय चलता ही रहता है । **मुनिराज इस विषय में दृढ़तापूर्वक घोषणा करते हैं कि वह द्रव्य, देवद्रव्य ही है** । वे शास्त्रीय आधार से कहते हैं अपने मन से नहीं । शास्त्र की बात में श्रद्धा रखनेवाले उसे स्वीकार करनेवाले भवभीरु आत्माएँ उनको बात को उसी रूप में मान लेती है ।

द. : '**चरणविजयजी** का धर्मलाभ'

(१२)

श्री जैन विद्याशाला, बिजापुर (गुजरात)

लि. आचार्य **कीर्तिसागरसूरि, महोदयसागरगणि** आदि ठाणा ८ की तरफ से श्री वेरावल मध्ये देवगुरु-भक्तिकारक शा. अमीलाल रतिलाल भाई आदि योग्य-धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि आपका पत्र मिला । पढ़कर और समाचार जानकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आनन्द हुआ है । हम सब सुखशाता में हैं । आप सब सुखशाता में होंगे ।

आपने लिखा कि स्वप्न, पारणा, घोडियां तथा उपधान की माला की बोली का घी किस खाते में ले जाना ? इसका उत्तर है कि **पारणा, घोडिया तथा श्री उपधान की आय या घी देवद्रव्य खाते में ले जाई जाती है । साधारण खाते में नहीं ले जाई जाती** । अतः उपधान आदि घी की आय देवद्रव्य में ले जानी चाहिए । धर्मसाधना करियेगा ।

(१३)

पगथिया का उपाश्रय. हाजा पटेल की पोल

अहमदाबाद श्रावण सुदी १४

सुश्रावक अमीलाल रतिलाल योग धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि देवगुरु प्रसाद से यहां सुखशाता है । तारीख १०-९-५४ का लिखा हुआ आपका पत्र मिला । समाचार जाने । इस विषय में लिखना है कि –

चौदह स्वप्न, पारणा, घोडियाँ सम्बन्धी तथा उपधान की माला सम्बन्धी आय **देवद्रव्य में आती है । साधारण खाते में उसे ले जाना उचित नहीं है । इस सम्बन्ध में राजनगर के जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक मुनि सम्मेलन का ठहराव स्पष्ट निर्देश करता है ।** धर्मसाधना में उद्यमशील रहना ।

लि. 'आ. विजयमनोहरसूरि का धर्मलाभ'

(१४)

तलाजा ता. १३-८-५४

लि. विजयदर्शनसूरि आदि ।

तत्र देवगुरु भक्तिकारक शा. अमीलाल रतिलाल योग्य वेरावल बन्दर; धर्मलाभ । आपने चवदह स्वप्न, घोडिया, पारणा तथा उपधान की माला की उपज साधारण खाते में ले जाना या देवदव्य खाते में ? यह पूछा है । इस विषय में लिखना है कि **जो प्रामाणिक परम्परा चली आ रही है उसमें परिवर्तन करना उचित नहीं है । एक परम्परा तोड़ी जावेगी तो दूसरी परम्परा भी टूट जाने का भय रहता है । अब तक तो वह आय देवद्रव्य खाते ही ले जाई जाती रही है । अतः उसी तरह वर्तन करना उचित प्रतीत होता है ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यद्यपि चवदह स्वप्न दर्शन प्रभु की बाल्य अवस्था के हैं परन्तु वे इसी भव में तीर्थंकर होनेवाले हैं इसलिए बाल्यवयरूप द्रव्य निक्षेप को भाव निक्षेप का मुख्य कारण मानकर शुभ कार्य करने हैं अर्थात् त्रिलोकाधिपति प्रभु भगवंत को उद्देश्य में लेकर ही स्वप्न आदि उतारे जाते हैं । जिस उद्देश्य को लेकर कार्य किया जाता हो उसी उद्देश्य में उसे खर्च करना उचित समझा जाता है । अतः त्रिभुवननायक प्रभु को लक्ष्य में रखकर स्वप्नादिक का घी बोला जाता है, इसलिए देवद्रव्य में ही वह आय लगाई जाय, यह उचित मालूम होता है ।

(पू.आ.भ.श्री **विजयनेमिसूरीश्वरजी म.** श्री के पट्ट प्रभावक आचार्य महाराजश्री विजय **दर्शनसूरीश्वरजी** भ. श्रीजी का उक्त अभिप्राय है ।)

(१५)

भुज ता. १२-८-८४

धर्मप्रेमी सुश्रावक अमीलाल भाई,

लि. **भुवनतिलकसूरि** का धर्मलाभ । पत्र मिला । जिनदेव के आश्रित जो घी बोला जाता है वह देवद्रव्य में ही जाना चाहिए, ऐसे शास्त्रीय पाठ हैं । **'देवद्रव्य-सिद्धि' पुस्तक पढ़ने की भलावन है । मुनि सम्मेलन में भी ठहराव हुआ था । देवाश्रित स्वप्न, पारणा या वरघोड़ा आदि में बोली जानेवाली बोलियों का द्रव्य तथा मालारोपण की आय-यह सब देवद्रव्य ही है।** देवद्रव्य के सिवाय अन्यत्र कहीं भी किसी भी खाते में उसका उपयोग नहीं किया जा सकता ।

कुछ व्यक्ति इस सम्बन्ध में अलग मत रखते हैं, परन्तु वह अशास्त्रीय होने से अमान्य है । **देवद्रव्य की वृद्धि करने की आज्ञा है परन्तु उसकी हानि करनेवाला महापापी और अनन्त संसारी होता है, ऐसा शास्त्रीय फरमान है ।** आज के सुविहित शास्त्र-वचन श्रद्धालु आचार्य महाराजाओं का यही सिद्धान्त और फरमान है क्योंकि वे भवभीरु हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१६)

अहमदाबाद शाहपुर, मंगलपारेख का खांचा
जैन उपाश्रय सुदी १४

धर्मश्रद्धालु सुश्रावक भाई अमीलाल रतिलाल भाई मु. वेरावल योग्य धर्मलाभ । आप का पत्र मिला । सब समाचार जाने । **चौदह स्वप्न, पारणा, उपधान की माला का घी देवद्रव्य में ले जाना उचित है ।** शास्त्र तथा परम्परा के आधारों को साक्षात में शान्ति से समझाया जा सकता है । धर्म भावना में वृद्धि करना ।

द. धर्मविजय का धर्मलाभ

(उक्त अभिप्राय पू.आ.म. श्री **विजयप्रतापसूरीश्वरजी** म. के पट्टधर पू.आ.म. श्री **विजयधर्मसूरिजी महाराज का** है ।)

(१७)

श्री जैन ज्ञानवर्धक शाला, वेरावल
श्रावण वद १०

परम पूज्य प्रातः स्मरणीय आचार्यदेव श्रीमद् विजय **अमृतसूरीश्वरजी महाराज** तथा पू. मुनिराज **श्री पार्श्वविजयजी म.** आदि ठाणा ६ की तरफ से-

देवद्रव्य भक्तिकारक सुश्रावक अमीलाल रतिलाल जैन योग्य धर्मलाभ । आप की ओर से पत्र मिला । पढ़कर समाचार जाने । उत्तर में लिखना है कि-

चवदह स्वप्न, पारणा, घोडिया तथा उपधान की माला की बोली का घी शास्त्रीय आधार से देवद्रव्य में ही ले जाना चाहिए । उसे साधारण खाते में ले जाना शास्त्र और परम्परा के अनुसार सर्वथा अनुचित है । इस संबंध में शास्त्रीय पाठ है ।

द. जिनेन्द्र विजय का धर्मलाभ

(स्व. पू. आ. श्री जिनेन्द्रसूरिजी म.)
मु. लीम्बडी श्रा.सु. ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१८)

धर्मविजय आदि की तरफ से–

सुश्रावक अमीलाल रतीलाल मु. वेरावल योग्य ।

धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि आप का पत्र मिला । समाचार विदित हुए । उत्तर में लिखना है कि स्वप्न, पारणा आदि की बोली के घी की आय शास्त्र दृष्टि से देवद्रव्य में जाती है । इसी तरह तीर्थमाला, उपधान की माला आदि के घी की आय भी देवद्रव्य में जाती है । इसके लिए शास्त्र में पाठ है । इसलिए देवद्रव्य में ही उसे ले जाना योग्य है । धर्म साधना में उद्यम करना ।

द. धर्मविजय का धर्मलाभ

(उक्त अभिप्राय पू.आ.म. श्री विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा के शिष्य रत्न उपाध्यायजी धर्मविजयजी महाराज का है ।)

(१९)

नागपुर सिटी नं. २ इतवारी बाजार

जैन श्वे. उपाश्रय ता. ११-८-५४

धर्मसागरगणि आदि ठाणा ३ की तरफ से–

सुश्रावक देव-गुरु-भक्तिकारक शाह अमीलाल रतिलाल वेरावल योग्य । धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि आपका पत्र ता. ९-८-५४ का आज मिला । पढ़कर समाचार ज्ञात हुए ।

(१) चवदह स्वप्न, पारणा, घोडिया तथा उपधान की माला आदि का घी शास्त्रोक्त रीति से तथा परम्परा और ज्ञानियों की आज्ञानुसार देवद्रव्य में ले जाया जाता है । इस सम्बन्ध में अहमदाबाद में सं. १९९० के सम्मेलन में समस्त श्वे. मूर्तिपूजक श्रमण संघ ने एकमत से निर्णय लिया है । वह मंगवाकर पढ़ लेना । इस निर्णय का छपा हुआ पट्टक सेठ आनंदजी कल्याणजी पेढ़ी अहमदाबाद से मिल सकेगा । उसमें स्पष्ट है कि प्रभु जिनेश्वर देव के समक्ष या उनके निमित्त देरासर या उसके बाहर भक्ति के निमित्त जो बोली की रकम आवे वह देवद्रव्य गिनी जाय ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न उदारता तीर्थंकर भगवान का च्यवन कल्याणक हैं । प्रभास पाटण में हमारे गुरुदेव पू. आ.श्री चन्द्रसागरसूरिजी महाराज के हस्त से अंजन शलाका हुई थी । उसमें पांचों कल्याणक की आय देवद्रव्य में ली गई है । तो स्वप्न, पारणा, च्यवन-जन्म-महोत्सव को प्रभुभक्ति के निमित्त बोली गई बोली देवद्रव्य ही गिननी चाहिये । इसमें शंका का कोई स्थान नहीं है । तथापि स्वप्न तो भगवान की माता को आते हैं आदि खोटी दलीलें दी जाती है । इस विषय में जो प्रश्न पूछने हो पूछ सकते हैं । सब का समाधान किया जावेगा ।

इस सम्बन्ध में लगभग सब आचार्यों का एक ही अभिप्राय है जो शान्ताक्रुझ संघ की तरफ से पुछाये गये प्रश्न के उत्तर रूप में 'कल्याण' मासिक में प्रसिद्ध भी हुआ है । 'सिद्धचक्र' पाक्षिक में पू.स्व. आगमोद्धारक श्री सागरजी महाराजा ने भी देवद्रव्य में इस राशि को ले जाना बताया है ।

अहमदाबाद, सूरत, खम्भात, पाटन, महेसाणा, पालीताना आदि बड़े संघ परम्परा से इस राशि को देवद्रव्य में ले जाते हैं । केवल बम्बई का यह चेपी रोग कुछ स्थानों पर फैला हो, यह संभावित है । परन्तु बम्बई में भी कोई स्थानों पर आठ आनी या दशआनी या अमुक भाग साधारण खाते में ले जाया जाता है, परन्तु वह देवद्रव्य मन्दिर के साधारण अर्थात् पुजारी, मन्दिर की रक्षा के लिए भैया, मन्दिर का काम करनेवाले नौकर के वेतन आदि में काम लिया जाता है न कि साधारण अर्थात् सब जगह काम में लिया जा सके इस अर्थ में। इस संबंध में जिसको समझना हो, प्रभु की आज्ञानुसार धर्म पालना हो, व्यवहार करना हो तो प्रत्येक शंका का समाधान योग्य रीति से किया जावेगा ।

(२) उपधान के लिए श्रमण संघ के सम्मेलन का स्पष्ट ठहराव है कि वह देवद्रव्य में ले जाया जाय । इसमें कोई शंका नहीं है, सब जगह ऐसी ही प्रवृत्ति है । बम्बई में दो वर्ष से ठाणा और घाटकोपर में वैसा परिवर्तन करने का प्रयत्न किया गया, परन्तु वहां भी संघ में मतभेद है । अतःएव उसे निर्णय नहीं कहा जा सकता ।

तात्पर्य यह है कि उक्त दोनों प्रकार की आय को देवद्रव्य में ले जाना शास्त्र सम्मत एवं परंपरा से मान्य है । यदि कोई समुदाय अपनी मति-कल्पना से इच्छानुसार प्रवृत्ति करे तो वह वास्तविक नहीं मानी जा सकती । सुज्ञेषु किं बहुना ? धर्म ध्यान करते रहना ।

लि. धर्मसागर का धर्मलाभ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

टिप्पण-गत वर्ष हमारा चातुर्मास बम्बई आदीश्वरजी धर्मशाला पायधुनी पर था । स्वप्न, पारणा आदि सब आमदानी देवद्रव्य में ले जाने का निश्चित् ठहराव कर श्रीसंघने हमारी निश्रा में स्वप्न उतारे थे । यह आपकी जानकारी हेतु लिखा है । इस संबंध में विशेष कोई जानकारी चाहिए तो खुशी से लिखना । भवभीरुता होगी तो आत्मा का कल्याण होगा । संघ में सब को धर्म लाभ कहना ।

(उक्त अभिप्राय पू.आचार्य म. श्री सागरानन्दसूरीश्वरजी म. श्री के प्रशिष्य रत्न **स्व. उपाध्यायजी म. श्री धर्मसागरजी महाराज** का है ।)

(२०)

श्री नेमीनाथजी उपाश्रय
बम्बई नं. ३ ता. १२-८-५४

लि धुरंधरविजय गणि,

तत्र श्री देवगुरु-भक्तिकारक अर्मीलाल रतिलाल जैन योग्य धर्मलाभ । आपका पत्र मिला । यहां श्री देवगुरु प्रसाद से सुख शान्ति है । स्वप्नादि की घी की आय के विषय में पूछा सो हमारे क्षयोपशम के अनुसार सुविहित गीतार्थ समाचारी का अनुसरण करनेवाले भव्यात्मा उसे देवद्रव्य में ले जाते हैं । हमें वही उचित प्रतीत होता है । विशेष स्पष्टीकरण साक्षात् में किया जा सकता है । धर्माराधना में यथासाध्य उद्यमवंत रहें ।

(उक्त अभिप्राय पू.आ.म. श्री विजय नेमिसूरीश्वरजी म. श्री के पट्टालंकार पू.आ.म. श्री विजय अमृतसूरीश्वरजी म. श्री के पट्टालंकार स्व. पू.आ.**भ. श्री विजय धर्मधुरन्धरसूरीश्वरजी म.** का है ।)

(२१)

राजकोट ता. ८-८-५४

पं. कनकविजय गणि आदि ठाणा ६ की तरफ से तत्र देव-गुरु-भक्तिकारक श्रमणोपासक सुश्रावक अर्मीलाल रतिलाल योग्य धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि यहाँ देवगुरु कृपा से सुखशाता है । आपका ता. ४-८-५४ का पत्र मिला । उत्तर में लिखना है कि स्वप्न, पारणा इन दोनों की आय देवद्रव्य में गिनी जाती है । अब तक सुविहित शासनमान्य पू. आचार्य देवों का यही अभिप्राय है । श्री तीर्थंकर देवों की माता इन स्वप्नों को देखती है । अतः उस निमित्त जो भी बोली बोली जाती है वह शास्त्र-दृष्टि से तथा व्यवहारिक दृष्टि से देवद्रव्य ही गिनी जाती है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेन प्रश्न के तीसरे उल्लास में पं. विजयकुशलगणिकृत प्रश्न (३९ वें प्रश्न) के उत्तर में बताया गया है कि देव के लिए जो आभूषण करवाये हों वे गृहस्थ को नहीं कल्पते हैं। क्योंकि उनका उद्देश्य और संकल्प देव-निमित्त है, अतः गृहस्थ को उनका उपयोग नहीं कल्पता है । उसी प्रकार संघ के बीच में स्वप्नों या पारणों के निमित्त जो बोली बोली जाती है, वह स्पष्ट रूप से देव निमित्त होने से उसकी आय देवद्रव्य मानी है । सं. १९९० के साधु सम्मेलन में भी पू.आचार्य देवों ने मौलिक-रीति से स्वप्नों के द्रव्य को देवद्रव्य मानने का निर्णय दिया है । तदुपरान्त १९९० [१९९४] के वर्ष में शान्ताक्रुझ (बम्बई) के संघ ने ऐसा ठहराव करने का विचार किया कि साधारण खाते में घाटा रहता है, इसलिए स्वप्नों के घी के भाव बढ़ाकर उसका अमुक भाग साधारण खाते में ले जाना । जब गच्छाधिपति स्व. पू.आ.भ. श्री विजय प्रेमसूरीश्वरजी म. श्री को यह बात मालूम हुई, तब उन्होंने श्रीसंघ के प्रसिद्ध विद्यमान पू. आचार्य देवों की सेवा में इस विषयक अभिप्राय परामर्श मांगने हेतु श्रीसंघ को पत्र व्यवहार करने की सूचना की । इस पत्र व्यवहार में जो उत्तर प्राप्त हुए वे सब मेरे पास थे जो 'कल्याण' के दसवें वर्ष में प्रसिद्ध करने हेतु भेजे गये थे । वे आप देख सकते हैं । उससे भी सिद्ध होता है कि स्वप्नों की आय तथा पारणों की आमदनी देवद्रव्य गिनी जाती है । 'उपदेश सप्ततिका' में स्पष्ट उल्लेख है कि देवनिमित्त के द्रव्य का देव-स्थान के सिवाय अन्य स्थान में उपयोग नहीं किया जा सकता ।

माला का द्रव्य देवद्रव्य गिना जाता है । मालारोपण के विषय में 'धर्मसंग्रह' में स्पष्ट उल्लेख है कि ऐन्द्री अथवा माला प्रत्येक वर्ष में देवद्रव्य की वृद्धि हेतु ग्रहण करनी चाहिए। 'श्राद्धविधि' में पाठ है । माला परिधापनादि जब जितनी बोली से किया हो वह सब देवद्रव्य होता है । इसी तरह श्राद्धविधि के अन्तिम पर्व में स्पष्ट प्रमाण है कि श्रावक देवद्रव्य की वृद्धि के लिए मालोद्घाटन करे उसमें इन्द्रमाला अथवा अन्य माला द्रव्य उत्सर्पण द्वारा अर्थात् बोली द्वारा माला लेनी चाहिए। इन सब उल्लेखों से तथा 'द्रव्य सप्ततिका' ग्रन्थ में देव के लिए संकल्पित वस्तु देवद्रव्य है ऐसा पाठ है । देवद्रव्य के भोग से या उसका नाश होता हो तब शक्ति होते हुए भी उसकी उपेक्षा करने से दोष लगते हैं । इस विषय में विशेष स्पष्टता चाहिए तो वहाँ विराजमान पू.आ.म. श्री विजय अमृतसूरीश्वरजी म. श्री से प्राप्त की जा सकती है । पत्र द्वारा अधिक विस्तार क्या किया जाय ?

(उक्त अभिप्राय पू.पाद आचार्यदेव श्रीमद् विजयरामचन्द्रसूरि के पट्टालंकार **आ.भ. श्री विजयकनकचन्द्रसूरि महाराज** का है ।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२२)

सादडी श्रा.सु. ७ शुक्रवार पाटी का उपाश्रय

श्रावक अमीलाल रतिलाल !

लि. मुनि **संबोधविजयजी,** धर्मलाभपूर्वक लिखना है कि पत्र मिला । समाचार जाने ।

स्वप्नों का द्रव्य, देवद्रव्य में जावे ऐसी घोषणा गतवर्ष श्री 'महावीर शासन' में हमारे पू.आ.महाराजश्री के नाम से आ गई है । जैसा हमारे पू. महाराजश्री करें उसी प्रकार हम भी मानते हैं और करते हैं । 'श्राद्धविधि ग्रन्थ' तथा 'द्रव्य-सप्ततिका' में स्पष्ट बताया गया है। मुनि सम्मेलन में एक कलम देवद्रव्य के लिए निर्णीत कर दी गई है । उस पर हस्ताक्षर भी है । कि बहुना ।

[पिछले कुछ वर्षों से ऐसी हवा जान बूझकर फैलाई जा रही है कि पू. पाद आचार्य म. श्री विजयानन्दसूरि महाराजश्रीने राधनपुर में स्वप्नों की आय साधारण खाते में ले जाने का आदेश दिया था । वि.सं. २०२२ के हमारे राधनपुर के चातुर्मास में इस बात का सख्त प्रतिकार करने का अवसर प्राप्त हुआ था । उस समय हमारी शुभनिश्रा में श्री जैन शासन के अनुरागी श्रीसंघ ने प्रस्ताव करके राधनपुर में स्वप्नों की आय को देवद्रव्य में ले जाने का निर्णय किया था । इसके पश्चात् तो समस्त राधनपुर श्रीसंघ में सर्वानुमति से स्वप्नों की आय देवद्रव्य में ही जाती है ।

परन्तु पू. पाद आत्मारामजी महाराजजी जैसे शासनमान्य सुविहित शिरोमणि जैन शासन स्तम्भ महापुरुष के नाम से ऐसी कपोलकल्पित मनघडन्त बातें फैलाई जाती हैं, यह सचमुच दुःख का विषय है । उनके द्वारा रचित **'गप्प दीपिका समीर'** नाम के ग्रन्थ में से एक उद्धरण नीचे दिया जा रहा है जो बहुत मननीय और मार्गदर्शक है ।

स्थानकवासी सम्प्रदाय की आर्या श्री पार्वतीबाई द्वारा लिखित 'समकित सार' पुस्तक की समालोचना करते हुए पू. पाद श्री विजयानन्दसूरीश्वरजी महाराज ने स्वप्न की आय के विषय में जो स्पष्टीकरण किया है उससे स्पष्ट होता है कि 'स्वप्न को उपज देवद्रव्य में ही जाती है।'

यह पुस्तक पू. पाद आत्मारामजी म. श्री के आदेश से उनके **प्रशिष्यरत्न पू. मुनिराज श्री वल्लभविजय महाराजश्रीने** सम्पादित की है, जो बाद में **पू.आ.म. श्री विजयवल्लभसूरि म.श्री के नाम से प्रसिद्ध हुए ।]**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'स्वप्न की आय देवद्रव्य में ही जाती है'

पू. पाद श्री आत्मारामजी महाराज का शास्त्रमान्य एवं सुविहित परम्परानुसार स्पष्ट अभिप्राय ।

(१)

प्रश्न - स्वप्न उतारना, घी चढ़ाना, फिर नीलाम करना और दो तीन रुपये मन बेचना, सो क्या भगवान का घी सौदा है ?

उत्तर - स्वप्न उतारना, घी बोलना आदि धर्म की प्रभावना और जिनद्रव्य की वृद्धि का हेतु है । धर्म की प्रभावना करने से प्राणी तीर्थंकर गोत्र बांधता है, यह कथन श्री ज्ञातासूत्र में है । जिनद्रव्य की वृद्धि करनेवाला भी तीर्थंकर गोत्र बांधता है, यह कथन सम्बोध सत्तरी शास्त्र में है । घी की बोली के वास्ते जो लिखा है उसका उत्तर यों जानो कि जैसे तुम्हारे आचारांगादि शास्त्र भगवान की वाणी दो या चार रुपये में बिकती है, वैसे ही घी के विषय में भी मोल समझो ।

- 'समकित सारोद्धार' में से

[बीसवीं सदी के अद्वितीय शासन प्रभावक, जंगमयुग प्रधानकल्प न्यायांभोनिधि पू. पाद आचार्य भगवन्त श्रीमद् विजयानन्दसूरीश्वरजी महाराजश्री के विशाल सुविहित साधु-समुदाय में भी स्वप्न-द्रव्य की व्यवस्था के विषय में उस समय शास्त्रानुसारी मर्यादा का पालन कितना चुश्तता से और कठोरता से होता था, यह बात निम्नलिखित पत्र-व्यवहार से स्पष्ट प्रतीत होती है । पूज्य आत्मारामजी म. श्री के शिष्यरत्न पू. प्रवर्तक श्री कान्तिविजयजी महाराजश्री के शिष्यरत्न पू. **विद्वान् मुनिप्रवर श्री चतुरविजय महाराजश्री** जो विद्वान् पू. मुनिराज श्री पुण्यविजयजी म.श्री के गुरुवर है, वे नीचे प्रकाशित किये जानेवाले पत्र में स्पष्टरूप से कहते हैं कि 'मेरे सुनने में कभी नहीं आया कि स्वप्नों का द्रव्य उपाश्रय में खर्च करने की सम्मति दी हो ।'

इससे यह स्पष्ट है कि स्वप्न द्रव्य की आय कदापि उपाश्रय में प्रयुक्त नहीं की जा सकती। आज इस पत्र को लिखे कितने ही वर्ष हो चुके हैं, उससे इतना तो समझा जा सकता है कि स्वयं उस समय अर्थात् आज से ६४ वर्ष पहले भी पूज्यपाद आ.भ. श्री

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विजया-नन्दसूरिजी महाराजश्री के श्रमण-समुदाय में अरे स्वयं पू.आ.भ. श्री विजयवल्लभसूरिजी महाराजश्री के समुदाय में भी स्वप्नद्रव्य को उपज देवद्रव्य में ही जाती थी । यह शास्त्रानुसारी और सुविहित परम्परामान्य प्रणाली है, जिसे पू. विद्वान् मुनिराजश्री चतुरविजयजी म. जैसे साहित्यकार और अनेक शास्त्र-ग्रन्थों के सम्पादक-संशोधक तथा पू.आ.भ. श्री विजय-वल्लभसूरि महाराजश्री के आज्ञावर्ती भी मानते थे और उसके अनुसार प्रवृत्ति करते थे ।

नीचे प्रकाशित किया जानेवाला उनका यह पत्र हमें इस बात की प्रतीति कराता है ।]

(२)

पू. पाद आत्मारामजी महाराज का श्रमण-समुदाय भी स्वप्नों की आय को देवद्रव्य में ले जाने का पक्षधर था और है । एक महत्वपूर्ण पत्र व्यवहार :

ता. ६-७-१७

बम्बई से **लि. मुनि चतुरविजयजी** की तरफ से-

भावनगर मध्ये चारित्रपात्र मुनि श्री भक्तिविजयजी तथा यशोविजयजी योग्य अनुवंदना सुखशाता वांचना । आप का पत्र मिला । उत्तर क्रम से निम्नानुसार है -

पाटन के संघ की तरफ से, आप के लिखे अनुसार कोई ठहराव हुआ हो, ऐसा हमारे सुनने में या अनुभव में नहीं हैं, परन्तु पोलीया उपाश्रय में अर्थात् यति के उपाश्रय में बैठनेवाले स्वप्नों के चढ़ावे में से अमुक भाग उपाश्रय खाते में लेते हैं, ऐसा सुना है, जब कि पाटन के संघ की तरफ से ऐसा (स्वप्नों की आय को उपाश्रय में ले जाने के लिए) कोई ठहराव नहीं हुआ है । तो गुरुजी को अनुमति-सम्मति कहां से हो, यह स्वयं सोचने की बात है । विघ्नसंतोषी व्यक्ति दूसरों को हानि करने के लिए यद्वा तद्वा कुछ कहे उससे क्या ? यदि किसी के पास महाराज के हाथ की लिखित स्वीकृति निकले तो सही हो सकती है अन्यथा लोगों के गप्पों पर विश्वास नहीं करना । मेरी जानकारी के अनुसार कोई भी प्रसंग ऐसा नहीं आया जब स्वप्नों की आय के पैसे उपाश्रय में खर्च करने की उन्होंने सम्मत्ति दी हो । अभी इतना ही ।

द. : चतुरविजय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आत्मारामजी म. के ही आज्ञावर्ती मुनिराजश्री भी स्पष्ट कहते हैं कि स्वप्न की आय देवद्रव्य में ही जाती है ।

[दूसरा महत्त्वपूर्ण पत्र यहाँ प्रकाशित हो रहा है । यह भी बहुत ही उपयोगी बात पर प्रकाश डालता है । पू.आ.भ. श्री विजयानन्दसूरिजी म. श्री अपरनाम पू. आत्मारामजी महाराजश्री के समुदाय में उनके स्वयं के हस्त दीक्षित प्रशिष्यरत्न पू. शान्तमूर्ति मुनिराज हंसविजयजी महाराज-जो पू.आ.भ. श्री विजयवल्लभसूरिजी महाराजश्री के श्रद्धेय तथा आदरणीय थे - ने पालनपुर श्रीसंघ द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर में जो जो बातें शास्त्रीय प्रणाली और गीतार्थ महापुरुषों को मान्य हो इस रीति से बताई हैं, वे आज भी उतनी ही मननीय और आचरणीय है । उनमें देवद्रव्य की व्यवस्था, ज्ञानद्रव्य तथा स्वप्नों की आय आदि की शास्त्रानुसारी व्यवस्था के सम्बन्ध में उन्होंने बहुत ही स्पष्ट और सचोट मार्गदर्शन दिया है, जो भारतभर के श्रीसंघों की अनन्त उपकारी परमतारक श्री जिनेश्वर भगवन्त की आज्ञा की आराधना के आराधकभाव को अखण्डित रखने के लिए जागृत बनने की प्रेरणा देता है । सब लोग सहृदय भाव से उस प्रश्नोत्तरी पर विचार करें ।)

श्री पालनपुर संघ को मालूम हो कि आपने आठ बातों का स्पष्टीकरण करने हेतु मुझे प्रश्न पूछे हैं । उनका उत्तर मेरी बुद्धि के अनुसार आप के सामने रखता हूँ ।

प्रश्न-१ पूजा के समय घी बोला जाता है उसकी उपज किस खाते में लगाई जाय ?

उत्तर-१ पूजा के घी की उपज देवद्रव्य के रूप में जीर्णोद्धार आदि के कार्य में लगाई जा सकती है ।

प्रश्न-२ प्रतिक्रमण के सूत्रों के निमित्त घी बोला जाता है, उसकी आय किस काम में लगाई जाय ?

उत्तर-२ प्रतिक्रमण सूत्र-सम्बन्धी आय ज्ञान खाते में-पुस्तकादि लिखवाने के काम में ली जा सकती है ।

प्रश्न-३ स्वप्नों के घी की आय किस काम में ली जाय ?

उत्तर-३ इस सम्बन्ध के अक्षर किसी पुस्तक में मुझे दृष्टिगोचर नहीं हुए परन्तु **श्रीसेनप्रश्न** में और **श्रीहीरप्रश्न** नाम के शास्त्र में उपधानमाला पहनने के घी की आय को देवद्रव्य में गिनी है । इस शास्त्र के आधार से कह सकता हूं कि स्वप्नों की आय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

को देवद्रव्य के रूप में मानना चाहिये । इस सम्बन्ध में अकेले मेरा ही यह अभिप्राय नहीं है, अपितु श्री विजयकमलसूरीश्वरजी महाराज का तथा उपाध्यायजी वीरविजयजी महाराज का और प्रवर्तक कान्तिविजयजी महाराज आदि महात्माओं का भी ऐसा ही अभिप्राय है कि स्वप्नों की आय को देवद्रव्य मानना ।

प्रश्न-४ केसर, चन्दन के व्यापार की आय किसमें गिनी जाय ?

उत्तर-४ अपने पैसों से मंगाकर केसर-चन्दन बेचा हो और उसमें जो नफा हुआ हो वह अपनी इच्छानुसार खर्च किया जा सकता है । परन्तु कोई अनजान व्यक्ति मन्दिर के पैसों से खरीदी न करले यह ध्यान रखना चाहिए ।

प्रश्न-५ देवद्रव्य में से पुजारी को पगार दी जा सकती है या नहीं ?

उत्तर-५ पूजा करवाना अपने लाभ के लिए है । परमात्मा को उसकी आवश्यकता नहीं। इसलिए पुजारी को पगार देवद्रव्य में से नहीं दी जा सकती । कदाचित् किसी वसति रहित गाँव में दूसरा साधन किसी तरह न बन सकता हो तो चांवल आदि की आय में से पगार दी जा सकती है ।

प्रश्न-६ देव के स्थान पर पेटी रखी जा सकती है या नहीं ?

उत्तर-६ पेटी में साधारण और स्नान के पानी सम्बन्धी खाता न हो तो रखी जा सकती है, परन्तु कोई अनजान व्यक्ति देवद्रव्य या ज्ञानद्रव्य को दूसरे खाते में भूल से न डाले ऐसी पूरी व्यवस्था होनी चाहिये । साधारण खाता यदि पेटी में हो तो वह देव की जगह में उपार्जित द्रव्य श्रावक-श्राविका के उपयोग में कैसे आ सकता है ? यह विचार करने योग्य है ।

प्रश्न-७ नारियल, चांवल, बादाम की आय किसमें गिनी जाय ?

उत्तर-७ नारियल, चांवल; बादाम की आय देवद्रव्य खाते में जमा होनी चाहिए ।

प्रश्न-८ आंगी की बढोत्री किस में गिनी जाय ?

उत्तर-८ आंगी की बढ़ोत्री निकालना उचित नहीं है । क्योंकि उसमें कष्ट क्रिया लगती है। इसलिए जिसने जितने की आंगी करवाने को कहा है उतने पैसे खर्च करके उसकी तरफ से आंगी करवा देनी चाहिए ।

सद्गृहस्थों ! **जो खाता डूबता हो उसकी तरफ ध्यान देने की खास आवश्यकता है** । आजकल साधारण खाते की बूम सुनाई पड़ती है, अतः उसे तिराने की खास

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जरूरत है । अतः पुण्य करते समय या प्रत्येक शुभ प्रसंग पर शुभ खाते में अवश्य रकम निकालने और निकलवाने की योजना करनी चाहिए, जिससे यह खाता तिरता हुआ हो जावेगा फिर उसकी बूम नहीं सुनाई देगी । यही श्रेय है ।

लि. हंसविजय

(४)

स्वप्न की उपज देवद्रव्य में ही जानी चाहिए ।

स्वप्नों की और मालारोपण की उपज देवद्रव्य में हो जानी चाहिए । इस विषय में पू. **सागरानंदसूरीश्वरजी महाराजश्री का स्पष्ट शास्त्रानुसारी फरमान--**

स्वप्नों की आय के विषय में तथा उपधान तप की माला संबंधी आय के विषय में श्रीसंघ को स्पष्ट रीति से मार्गदर्शन देने हेतु पू. पाद आचार्य भगवंत श्री सागरानन्दसूरीश्वरजी महाराजश्रीने **'सागर समाधान'** ग्रन्थ में जो फरमाया है, वह प्रत्येक धर्माराधक के लिए जानने योग्य है ।

प्रश्न-उपधान में प्रवेश तथा समाप्ति के अवसर पर माला की बोली की आय ज्ञानखाते में न ले जाते हुए देवद्रव्य में क्यों ले जायी जाती है ?

समाधान-उपधान ज्ञानाराधन का अनुष्ठान है, इसलिए ज्ञान खाते में उसकी आय जा सकती है-ऐसा कदाचित् आप मानते हों । परन्तु उपधान में प्रवेश से लेकर माला पहनने तक की क्रिया समवसरण रूप नंदि के आगे होती है । क्रियाएँ प्रभुजी के सम्मुख की जाने के कारण उनकी उपज देवद्रव्य में ले जानी चाहिए ।

प्रश्न-स्वप्नों की उपज तथा उनका घी देवद्रव्य खाते में ले जाने की शुरूआत अमुक समय से हुई है तो उसमें परिवर्तन क्यों नहीं किया जा सकता है ?

समाधान-अर्हन्त परमात्मा की माता ने स्वप्न देखे थे, अतः वस्तुतः उसकी सारी आय देवद्रव्य में जानी चाहिए अर्थात् देवाधिदेव के उद्देश्य से ही यह आय है । ध्यान में रखना चाहिए कि च्यवन, जन्म, दीक्षा - ये कल्याणक भी श्री अरिहंत परमात्मा के ही हैं । इन्द्रादिकों ने श्री जिनेश्वर भगवान की स्तुति भी गर्भावतार से ही की है । चौदह स्वप्नों का दर्शन अरिहन्त भगवान कुक्षि में आवें तभी उनकी माता को होता है । तीन लोक में प्रकाश भी इन तीनों कल्याणकों में होता है । अतः धार्मिक जनों के लिए गर्भावस्था से ही भगवान् अरिहंत भगवान हैं ।

- 'सागर समाधान' से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(५)

स्वप्नादि की उपज देवद्रव्य में ही जावे

वि. सं. १९९० वि.सं. २०१४ इन दोनों श्रमण-सम्मेलन में सर्वानुमति से हुए शास्त्रानुसारी निर्णय

देवद्रव्यादि की व्यवस्था तथा अन्य भी धर्मादा खातों की आय तथा उसका सद्व्यय इत्यादि की शास्त्रानुसारी व्यवस्था के सम्बन्ध में श्रीसंघों को शास्त्रीय रीति से सुविहितमान्य प्रणालिका के अनुसार मार्गदर्शन देने की जिनकी महत्त्वपूर्ण जवाबदारी है, उन जैनधर्म या जैनशासन के संरक्षक पूज्य आचार्य भगवन्तों ने पिछले वर्षों में तीन श्रमण-सम्मेलनों में महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक प्रस्तावों द्वारा श्रीसंघ को जो स्पष्ट और सचोट शास्त्रानुसारी मार्गदर्शन दिया है वे महत्त्वपूर्ण उपयोगी निर्णय यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं । ये निर्णय सदा के लिए भारत वर्ष के श्रीसंघों के लिए प्रेरणादायी हैं । इनका पालन करने की श्रीसंघों की अनिवार्य जवाबदारी है ।

श्रमणसंघ सम्मेलन निर्णय

देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य या अन्य जिनमन्दिर उपाश्रय, ज्ञानभण्डार तथा साधारण खाता आदि के द्रव्य की आय को शास्त्रानुसार किस प्रकार सद्व्यय करना, यह श्रीसंघों की जवाबदारी है । श्रमणप्रधान श्रीसंघों को सुविहितशास्त्रानुसारी प्रणाली के प्रति वफादार रहकर पू.पाद परमगीतार्थ सुविहित आचार्य भगवन्तों की आज्ञानुसार सब धार्मिक स्थावर-जंगम जायदाद का वहीवट, व्यवस्था, संरक्षण एवं संवर्धन करना चाहिए । इस बात को लक्ष्य में लेकर श्री श्रमणसंघ सम्मेलन द्वारा किये गये उपयोगी निर्णय यहां प्रसिद्ध किये जा रहे हैं । उनसे सूचित होता है कि **श्रीसंघों को उन निर्णयों का आवश्यकरूप से पालन करना चाहिए ।**

(६)

वि.सं. १९९० में राजनगर (अहमदाबाद) में एकत्रित श्रमण सम्मेलन द्वारा देवद्रव्य सम्बन्धी किया गया महत्त्वपूर्ण निर्णय

१. देवद्रव्य, जिन चैत्य तथा जिनमूर्ति सिवाय अन्य किसी भी क्षेत्र में काम में नहीं लिया जा सकता ।

२. प्रभु के मन्दिर में या मन्दिर के बाहर किसी भी स्थान पर प्रभु के निमित्त जो जो बोलियाँ बोली जावें, वह सब देवद्रव्य कहा जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३. उपधान सम्बन्धी माला आदि की उपज देवद्रव्य में ले जाना उचित समझा जाता है।

४. श्रावकों को अपने द्रव्य से प्रभु की पूजा आदि का लाभ लेना चाहिए परन्तु किसी स्थान पर सामग्री के अभाव में प्रभु को पूजा आदि में बाधा आती दृष्टिगोचर होती हो तो देवद्रव्य में से प्रभुपूजा आदि का प्रबन्ध कर लिया जाय । परन्तु प्रभु की पूजा आदि तो अवश्य होनी ही चाहिए ।

५. तीर्थ और मन्दिर के व्यवस्थापकों को चाहिए कि तीर्थ और मन्दिर सम्बन्धी कार्य के लिए आवश्यक धनराशि रखकर शेष धनराशि से तीर्थोद्धार और जीर्णोद्धार तथा नवीन मन्दिरों के लिए योग्य मदद देवे, ऐसी यह सम्मेलन भलावन करता है ।

विजयनेमिसूरि,	**जयसिंहसूरिजी**	**विजयसिद्धिसूरि,**
आनन्दसागर,	**विजयवल्लभसूरि,**	**विजयदानसूरि,**
विजयनीतिसूरि,	**मुनिसागरचन्द,**	**विजयभूपेन्द्रसूरि**
श्री राजनगर जैन संघ,		**कस्तूरभाई मणीभाई**
वंडावीला		ता. १०-५-३४

(मुनि सम्मेलन के इन ठहरावों की मूल प्रति का ब्लाक परिशिष्ट में दिया गया है ।)

(७)

वि.सं. २०१४ सन् १९५७ के चातुर्मास में श्री राजनगर (अहमदाबाद) में रहे हुए श्री श्रमण संघ ने डेला के उपाश्रय में एकत्रित होकर सात क्षेत्रादि धार्मिक व्यवस्था का शास्त्र तथा परम्परा के आधार से निर्णय किया उसकी नकल :-

देवद्रव्य

१. जिन प्रतिमा, २. जैन देरासर (मन्दिर)

देवद्रव्य की व्याख्या :-

प्रभु के मन्दिर में या मन्दिर के बाहर-चाहे जिस स्थान पर प्रभु के पंच कल्याणकादि निमित्त तथा माला परिधापनादि देवद्रव्य वृद्धि के कार्य से आया हुआ तथा गृहस्थों द्वारा स्वेच्छा से समर्पित किया हुआ धन इत्यादि देवद्रव्य कहा जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-९

देवद्रव्य की रक्षा तथा उसका सदुपयोग कैसे करना ?

स्वप्नद्रव्य देवद्रव्य ही है, यह विषय इस पुस्तिका में स्पष्ट और सचोट रीति से शास्त्रानुसारी परम्परा से जो सुविहित पापभीरु महापुरुषों द्वारा विहित है - प्रतिपादित और सिद्ध हो चुका है । अब प्रश्न यह होता है कि देवद्रव्य की व्यवस्था और उसकी रक्षा किस प्रकार की जाय ? उसका सदुपयोग किस तरह करना ? इस संम्बन्ध में पू. सुविहित शिरोमणि आचार्य भगवन्त श्री **विजयसेनसूरीश्वरजी महाराज** ने श्री 'सेनप्रश्न' ग्रन्थ में जो फरमाया है, उन प्रमाणों द्वारा इस विषय की स्पष्टता करना आवश्यक होने से वे प्रमाण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

सेनप्रश्न : उल्लास दूसरा पं. श्री कनकविजयजी गणिकृत ।

प्रश्नोत्तर : जिनमें ३७ वां प्रश्न है कि, 'ज्ञानद्रव्य देवकार्य में लगाया जा सकता है या नहीं ?' यदि देवकार्य में लगाया जा सकता है तो देवपूजा में या प्रासादादि के निर्माण में ? इस प्रश्न के उत्तर में स्पष्टरूप से बताया गया है कि, 'देवद्रव्य केवलदेव के कार्य में लगाया जा सकता है और ज्ञानद्रव्य ज्ञान में तथा देवकार्य में लगाया जा सकता है । साधारण द्रव्य सातों क्षेत्र में काम आता है । ऐसा जैन सिद्धान्त है...।'

(**सेन प्रश्न :** पुस्तक : पेज ८७-८८)

इससे यह स्पष्ट है कि स्वप्न द्रव्य सुविहित परम्परानुसार देवद्रव्य ही है तो उसका सदुपयोग देव की भक्ति के निमित्त के अतिरिक्त अन्य कार्यों में किन्हीं भी संयोगों में नहीं हो सकता ।

देवद्रव्य को श्रावक स्वयं ब्याज से ले या नहीं ? श्रावक को देवद्रव्य ब्याज से दिया जा सकता है या नहीं ? तथा देवद्रव्य की वृद्धि या रक्षा कैसी करनी ? इसके सम्बन्ध में 'सेन प्रश्न' में दूसरे उल्लास में, पं. श्री जयविजयजी गणिकृत प्रश्नोत्तर हैं । दूसरे प्रश्न के उत्तर में स्पष्ट कहा गया है कि,

'मुख्यरूप से तो देवद्रव्य के विनाश से श्रावकों को दोष लगता है, परन्तु समयानुसार उचित ब्याज देकर लिया जाय तो महान् दोष नहीं परन्तु श्रावकों के लिए उसका सर्वथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्जन किया हुआ है, वह निःशूकत्व न आ जाय, इसके लिए है । साथ ही जैन शासन में साधु को भी देवद्रव्य के विनाश में दुर्लभ बोधिता और देवद्रव्य के रक्षण का उपदेश देने में उपेक्षा करने से भवभ्रमण बताया है । अतः सुज्ञ श्रावकों को भी देवद्रव्य से व्यापार न करना ही युक्तियुक्त है । क्योंकि किसी समय भी प्रमाद आदि से उसका उपभोग न होना चाहिए । देवद्रव्य को अच्छे स्थान पर रखना, उसकी प्रतिदिन सार सम्भाल करनी, महानिधान की तरह उसकी रक्षा करनी, इन में कोई दोष नहीं लगता, परन्तु तीर्थंकर नामकर्म के बंध का कारण होता है । जैनेतर को वैसा ज्ञान नहीं होने से निःशूकता आदि असम्भव है । अतः गहनों पर व्याज से देने में दोष नहीं । अभी ऐसा व्यवहार चलता है ।'

(सेनप्रश्न : पुस्तक : पेज १११)

इस से स्पष्ट है कि, देवद्रव्य का उपयोग श्रावक के लिए व्यापारादि के हेतु ब्याज से लेने में भी दोष है । तो फिर देवद्रव्य से बंधवाये गये मकान, दुकान या चाली में श्रावक कैसे रह सकते हैं ? निःशूकता दोष लगने के साथ ही, उसके भक्षण का, अल्पभाड़ा देकर या विलम्ब से भाड़ा देकर उसके विनाश के दोष की बहुत सम्भावना रहती है । 'सेनप्रश्न' में स्पष्ट बताया है कि 'साधु भी यदि देवद्रव्य के रक्षण का उपदेश न करे या उसकी उपेक्षा करे तो भवभ्रमण बढ़ता है ।' इसीलिए पू. पाद आचार्यादि श्रमण भगवन्त 'स्वप्नद्रव्य देवद्रव्य ही है' उसका विनाश होता हो तो अवश्य उसका प्रतिकार करने के लिए दृढतापूर्वक उपदेश करते हैं ।

देवद्रव्य की रक्षा करने से तो तीर्थंकर नामकर्म के बंध का कारण बनता है अर्थात् देवद्रव्य जहां साधारण में ले जाया जाता हो वहां श्री चतुर्विध संघ को, जिनाज्ञारसिक संघ को उसका प्रतीकार करना चाहिए । यह उसका धर्म है, कर्त्तव्य है, यह श्री जिनेश्वर भगवन्त की आज्ञा की आराधना है, यह पू. आ.म. श्री विजयसेनसूरीश्वरजी महाराजश्री के द्वारा फरमाये हुए उपर्युक्त विधान से स्पष्ट होता है ।

'श्रावक अपने घर मन्दिर में प्रभुजी की भक्ति के लिए प्रभुजी के आभूषण करावे, कालान्तर में गृहस्थ कारण होने पर अपने किसी प्रसंग पर उन्हें काम में ले सकता है या नहीं ? पं. श्री विनयकुशल गणि के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए 'सेनप्रश्न' में श्री सेनसूरिजी म. श्री फरमाते हैं कि–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'यदि देव के निमित्त ही कराये गये आभूषण हों तो अपने उपयोग में नहीं लिये जा सकते।'

(**सेनप्रश्न** : प्रश्न : ३९, उल्लास : ३, पेज २०२)

इस से यह स्पष्ट है कि देव के लिए कराये गये, देव की भक्ति के लिए कराये गये आभूषण, घर मन्दिर में देव को समर्पित करने के उद्देश्य से कराये गये आभूषण श्रावक को अपने उपयोग में लेना नहीं कल्पता तो स्वप्न की बोली प्रभु भक्ति निमित्त प्रभु के च्यवन कल्याणक प्रसंग को लक्ष्य में रखकर बोली जाने के कारण देवद्रव्य गिनी जाती है उसका उपयोग साधारण खाते में कभी नहीं हो सकता, यह बात खासतौर से ध्यान में रख लेनी चाहिए ।

'सेनप्रश्न' के तीसरे उल्लास में पं. श्री श्रुतसागरजी गणिकृत प्रश्नोत्तर में प्रश्न है कि, 'देवद्रव्य की वृद्धि के लिए उस धन को श्रावकों द्वारा ब्याज से रखा जा सकता है या नहीं ? और रखनेवालों को वह दूषणरूप होता है या भूषणरूप ? इस प्रश्न का उत्तर पू.आ.म. श्री विजयसेनसूरीश्वरजी महाराज स्पष्ट रूप से फरमाते हैं कि,

श्रावकों को देवद्रव्य ब्याज से नहीं रखना चाहिए क्योंकि निःशूकत्व आ जाता है । अतः अपने व्यापार आदि में उसे ब्याज से नहीं लगाना चाहिये । 'यदि अल्प भी देवद्रव्य का भोग हो जाय तो संकाश श्रावक की तरह अत्यन्त दुष्ट फल मिलता है ।' ऐसा ग्रन्थ में देखा जाता है ।

(**सेनप्रश्न** : प्रश्न २१, उल्लास : ३, पेज २७३)

इससे पुनः पुनः यह बात स्पष्ट होती है कि, **देवद्रव्य की एक पाई भी पापभीरु सुज्ञ श्रावक अपने पास ब्याज से भी नहीं रखे ।** तो जो बोली बोलकर देवद्रव्य की रकम अपने पास वर्षों तक बिना ब्याज से केवल उपेक्षा भाव से रखे रहते हैं, भुगतान नहीं करते हैं, उन बिचारों की क्या दशा होगी ? इसी तरह बोली में बोली हुई रकम को अपने पास मनमाने ब्याज से रखे रहते हैं, उनके लिए वह कृत्य सचमुच सेनप्रश्नकार पूज्यपादश्री फरमाते हैं उस तरह 'दुष्ट फल देनेवाला बनता है' यह निःशंक है ।

'देवद्रव्य के मकान में भाड़ देकर रहना चाहिये या नहीं ?' इस विषय में पं. हर्षचन्द्र गणिवर कृत प्रश्न इस प्रकार हैं :-

'किसी व्यक्ति ने अपना घर भी जिनालय को अर्पण कर दिया हो, उसमें कोई भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रावक किराया देकर रह सकता है या नहीं ?' इस प्रश्न के उत्तर में पू.आ.म. श्री सेनसूरिजी फरमाते हैं कि - 'यद्यपि किराया देकर उसमें रहने में दोष नहीं लगता तो भी बिना किसी विशेष कारण के उस मकान में भाड़ा देकर भी रहना उचित नहीं लगता क्योंकि देवद्रव्य के भोग आदि में निःशूकता का प्रसंग हो जाता है ।'

(**सेनप्रश्न,** उल्लास ३ पैज २८८)

पू.आ.म.श्री वि. सेनसूरिजी महाराज ने जो जगद्गुरु आ.म.श्री विजयहीरसूरि म. श्री के पट्टालंकार थे - कितनी स्पष्टता के साथ यह बात कही है । आज यह परिस्थिति जगह-जगह देखने में आती है । देवद्रव्य से बंधवाये हुए मकानों में श्रावक रहकर समय पर भाड़ा देने में आनाकानी करते हैं, उचित रीति से भी किराया बढ़ाने में टालमटोल करते हैं और देवद्रव्य की सम्पत्ति को नुकसान पहुंचता है, इस विषय में उन्हें तनिक भी खेद नहीं होता । देवद्रव्य के रक्षण की बात तो दूर, परन्तु उसके भक्षण तक की निःशूकता आ जाती है । यह कई जगह देखने में जानने में आया है । इस दृष्टि से पू.आ.म. श्री ने स्पष्टता करके बता दिया है कि 'यह उचित नहीं लगता' यह बहुत ही समुचित है ।

देवद्रव्य के विषय में उपयोगी कुई बातें बारबार यहाँ इसीलिये कहनी पड़ रही है कि, 'सुज्ञ वाचकवर्ग के ध्यान में यह बात एकदम स्पष्ट रीति से दृढ़ता के साथ आ जावे कि देवद्रव्य की रक्षा के लिए तथा उसके भक्षण का दोष न लग जावे इसके लिए 'सेनप्रश्न' जैसे ग्रन्थ में कितना जोर दिया गया है ।'

अभी कई स्थानों पर गुरुपूजन का द्रव्य वैयावच्च में ले जाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है । परन्तु सही तौर पर गुरुपूजन का द्रव्य देवद्रव्य ही गिना जाता है । इस बात की स्पष्टता करना यहाँ प्रासंगिक मानकर उस सम्बन्ध में पू. पाद जगद्गुरु तपागच्छाधिपति आचार्य म. श्री.हीरसूरीश्वरजी म. श्री को पूछे गये प्रश्नों के उत्तर रूप 'हीर प्रश्न' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में से प्रमाण प्रस्तुत किये जा रहे है :-

'हीर प्रश्न के तीसरे प्रकाश में पू. पं. नागर्षिगणि के तीन प्रश्न इस प्रकार हैं - (१) गुरु पूजा सम्बन्धी स्वर्ण आदि द्रव्य गुरुद्रव्य कहा जाय या नहीं ? (२) पहले इस प्रकार की गुरुपूजा का विधान था या नहीं ? (३) इस द्रव्य का उपयोग किस में किया जाय ? यह बताने की कृपा करें ।'

उक्त प्रश्नों का उत्तर देते हुए पू.आ.म. जगद्गुरु विजय हीरसूरीश्वरजी म. श्री

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

फरमाते हैं कि 'गुरु पूजा संबंधी द्रव्य स्वनिश्राकृत न होने से गुरुद्रव्य नहीं होता जब कि रजोहरण आदि स्वनिश्राकृत होने से गुरुद्रव्य कहे जाते हैं ।'

(२) पू.आ.म.श्री हेमचन्द्रसूरि महाराजश्री की कुमारपाल महाराजा ने स्वर्ण-कमलों से पूजा की थी, ऐसे अक्षर कुमारपाल प्रबंध में है । तथा धर्मलाभ 'तुम्हें धर्म का लाभ मिले' इस प्रकार दूर से जिन्होंने हाथ ऊंचे किये हैं, 'ऐसे पू. श्री सिद्धसेनसूरिजी म. को विक्रमराजा ने कोटि द्रव्य दिया ।' 'इस गुरु पूजा रूप द्रव्य का उस समय जीर्णोद्धार में उपयोग किया गया था ।' ऐसा उनके प्रबन्ध आदि में कहा गया है । इस विषय में बहुत कहने योग्य है । कितना लिखें...। (**हीर प्रश्न** प्रकाश ३ : पेज १९६)

उपरोक्त प्रमाण से स्पष्ट है कि पू.आ.म. श्री विजयहीरसूरीश्वरजी महाराजश्री जैसे समर्थ गीतार्थ सूरिपुरन्दर भी गुरुपूजन के द्रव्य का उपयोग जीर्णोद्धार में करने का निर्देश करते हैं। इससे स्वतः सिद्ध हो जाता है कि गुरुपूजा का द्रव्य देवद्रव्य ही गिना जा सकता है ।

इस प्रसंग पर यह प्रश्न होता है कि - गुरुपूजन शास्त्रीय है कि नहीं ? यद्यपि इस प्रश्न के उद्भव का कोई कारण नहीं हैं, क्योंकि उपरोक्त स्पष्ट उल्लेख से ज्ञात होता है कि पूर्वकाल में गुरुपूजन की प्रथा चालू थी तथा नवांगी गुरुपूजन को भी शास्त्रीय प्रथा चालू थी। इसीलिए पू.आ.म. की सेवा में पं. नागर्षि गणिवर ने प्रश्न किया है कि 'पूर्वकाल में इस प्रकार के गुरुपूजन का विधान था या नहीं ?' उसका उत्तर भी स्पष्ट दिया गया है कि, 'हाँ परमार्हत श्री कुमारपाल महाराजा ने गुरुपूजन किया है ।' तो भी इस विषय में पं. श्री वेलर्षिगणि का एक प्रश्न है कि, 'रुपयों से गुरुपूजा करना कहाँ बताया है ?' प्रत्युत्तर में पू.आ.म. श्री हीरसूरीश्वरजी महाराज श्री फरमाते हैं कि, 'कुमारपाल राजा श्री हेमचन्द्राचार्य को सुवर्ण-कमल से सदा पूजा करता था ।' कुमारपाल प्रबंध आदि में ऐसा वर्णन है । उसका अनुसरण करके वर्तमान समय में भी गुरु की नाणा (द्रव्य) से पूजा की जाती हुई दृष्टिगोचर होती है । नाणा भी धातुनय है । इस विषय में इस प्रकार का वृद्धवाद भी है कि, श्री सुमति साधुसूरि के समय में मांडवगढ़ में मलिक श्री माफरे ने गीतार्थों की सुवर्ण टांकों से पूजा की थी ।

(**हीर प्रश्न** : ३ प्रकाश : पेज २०४)

उक्त उल्लेख से दीप के समान स्पष्ट है कि गुरुपूजा की प्रणाली प्राचीन और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुविहित परम्परा मान्य है । (३) गुरुपूजन का द्रव्य देवद्रव्य गिना जाता है और जीर्णोद्धार के कार्य में ही लगाया जाता है, यह भी वास्तविक और सुविहित महापुरुषों की परम्परा से मान्य है ।

इस विषय में द्रव्य सप्ततिका आदि अनेक ग्रन्थों में स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होते हैं । परन्तु यहां इस छोटी पुस्तिका में उन सब का विस्तार करना अप्रासंगिक होने से संक्षेप में स्वप्न द्रव्य, देवद्रव्य है और उसका उपयोग प्रभु-भक्ति के कार्य में होता है तथा उसका रक्षण और व्यवस्था कैसी करनी-इत्यादि विषयों को ध्यान में रखकर उपयोगी बातों का बहुत ही स्पष्टता और सचोट रीति से, पुनरुक्ति दोष की चिन्ता न करते हुए प्रतिपादन किया गया है।

सुज्ञ वाचकवर्ग हंसक्षीर न्याय से निष्पक्ष भाव से प्रस्तुत पुस्तिका का अवगाहन करके शान्त-स्वस्थ चित्त से मनन-निदिध्यासन करके सार को ग्रहण करे; यही शुभ-कामना ।

स्वप्न द्रव्य - देवद्रव्य ही है।

पुस्तक में से साभार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-१०

प्रभुपूजा स्वद्रव्य से ही क्यों ?

"विश्व कल्याणकारी, अनंतकरुणानिधान सर्वोत्कृष्ट उपकारी अरिहंत परमात्मा की भक्ति, मुक्ति की दूती है। परमात्मा की भक्ति, भक्त द्वारा स्वयं के अंतःकरण का भक्तिभाव, कृतज्ञभाव, समर्पणभाव व्यक्त करने के लिए करनी होती है। और इसीलिए स्वयं को जो प्राप्त हुआ, वह अपनी शक्ति के अनुसार परमात्मा की सेवा में समर्पित करना है।" इतने स्पष्ट मंतव्य के बाद भी प्रभु पूजा परद्रव्य से क्यों नहीं होती? देवद्रव्य से क्यों नहीं होती? ऐसा प्रश्न वर्तमान काल में चर्चा का विषय बनाया गया है।

ऐसे लोग कहते हैं कि - 'प्रभुपूजा स्वद्रव्य से ही करनी चाहिए'- ऐसा कोई नियम नहीं है। 'क्या ऐसा कोई एकांत नियम है कि प्रभुपूजा परद्रव्य से या देवद्रव्य से नहीं ही की जा सकती'- इस प्रकार एकांत शब्द को निरर्थक प्रस्तुत करके स्वद्रव्य से प्रभुपूजा के शास्त्रीय विधान के सामने अरुचि उत्पन्न करके 'प्रभुपूजा के लिए परद्रव्य या देवद्रव्य का उपयोग किया जा सकता है, इसमें कोई दोष नहीं है परंतु लाभ ही है', इस प्रकार का प्रतिपादन किया जा रहा है; और इस विचारधारा का प्रचार इस प्रकार हो रहा है कि जिससे अज्ञानी अल्प वर्ग भ्रम में पड़े और दुविधा का अनुभव करें।

देवगृहे देवपूजापि	- जिन मंदिर में जिनपूजा
स्वद्रव्येणैव	- भी स्वद्रव्य से ही
यथाशक्ति कार्या	- यथाशक्ति करनी चाहिए
पूजा च वीतरागानां	- वीतराग परमात्मा की
स्वविभवोचित्येन।	- पूजा अपने वैभव के अनुसार करनी चाहिए
'विभवानुसारेण	- वैभव के अनुसार पूजन
यत्पूजनम् ।'	- करना चाहिए
'यथालाभं'	- जैसी आय हो, तदनुसार
नियविहवाणुरूवं ।	- अपने वैभव के अनुरूप
'स्वशक्त्यानुसारेण	- अपनी शक्ति के अनुसार
जिनभक्तिः कार्या'	- जिनभक्ति करना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार के अनेक शास्त्र पाठ विद्यमान होने पर भी और ऐसे पाठ अनेक बार प्रस्तुत करने पर भी, इस प्रकार का प्रचार चल रहा है और चलाया जा रहा है।

स्वनाम धन्य सिद्धांतमहोदधि पूज्यपाद आचार्यदेव **श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराज** की तारक निश्रा में प्रस्तुत विषय पर सुंदर प्रकाश डालने वाला एक अति मानवीय प्रवचन इस समय प्रकाशित किया जा रहा है।

यह प्रवचन विक्रम संवत २००६ की साल में पालिताणा के चातुर्मास में पूज्यपाद **प्रवचनकार श्रीमद विजय रामचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा** ने किया था जो उस समय 'जैन प्रवचन' साप्ताहिक में और उसके बाद 'चारगति के कारण' पुस्तक में प्रकाशित हुआ था। इस प्रकार आजसे ५३(६०) वर्ष पूर्व किया गया यह प्रवचन वर्तमान परिस्थिति में आज भी उतना ही प्रासंगिक, मार्गदर्शक और उपकारक है।

जो भी वाचक पूर्वाग्रह का सर्वथा त्याग करके मुक्त मन से सत्य प्राप्त करने की भावना से इस प्रवचन का पठन करेगा, उसे सत्यमार्ग प्राप्त होगा। ऐसा विश्वास किंचित भी अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा।

x x x देवद्रव्य में से श्रावकों द्वारा पूजा कराने की बातें :

आज इतने अधिक जैन जीवित होने पर भी और उनमें भी समृद्धशाली जैनों के होने के बावजूद एक ऐसा शोर उठ रहा है कि 'इन मंदिरों की रक्षा कौन करेगा? देखरेख कौन करेगा? भगवान की पूजा के लिए केसर आदि चाहिए वह कहाँ से लाएंगे? स्वयं की कहलाती भगवान की पूजा में देवद्रव्य का उपयोग क्यों नहीं हो सकता? आज ऐसा भी प्रचार चल रहा है कि 'भगवान की पूजा में देवद्रव्य का उपयोग करने लगो।' कई स्थानों पर तो ऐसे लेख भी लिखे जाने लगे हैं कि 'मंदिर की आवक में से पूजा की व्यवस्था करिए।' इस प्रकार का पढ़कर या सुनकर मन में यह भाव आते हैं कि क्या जैनों का अस्तित्व खत्म हो गया है ? देवद्रव्य पर सरकार की नजर बिगड़ गयी है इस प्रकार कहा जाता है। परंतु आज बातें तो ऐसी हो रही हैं कि देवद्रव्य पर जैनों की नीयत बिगड़ी है, ऐसा लगता है। अन्यथा भक्ति स्वयं को करनी है और उसके हेतु देवद्रव्य का उपयोग करना है, यह किस तरह हो सकता है?

आपत्ति काल में देवद्रव्य में से भगवान की पूजा की जाय, यह अलग बात है और श्रावकों को पूजा करने की सुविधा देवद्रव्य में से दी जाए, यह अलग बात है। जैन क्या इतने गरीब हो गये हैं कि स्व-द्रव्य से भगवान की द्रव्यपूजा नहीं कर सकते हैं? इस हेतु देवद्रव्य में से उनके द्वारा भगवान की पूजा करानी है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनों के हृदय में यह बात होनी चाहिए कि 'मुझे अपने द्रव्य से ही भगवान की द्रव्य पूजा करनी है।' देवद्रव्य की बात तो दूर है परंतु अन्य श्रावक के द्रव्य से भी यदि पूजा करने को कहा जाय तो जैन कहते थे 'उसके द्रव्य से हम पूजा करें तो इसमें हमें क्या लाभ? हमें तो अपनी ही सामग्री से भक्ति करनी है!'

श्रावक को द्रव्यपूजा क्यों करनी चाहिए? आरंभ और परिग्रहग्रस्त यदि शक्ति होने पर भी द्रव्य पूजा के स्थान पर भाव पूजा करता है तो वह पूजा बाँझ मानी जायेगी। श्रावक परिग्रह के विष को दूर करने के लिए भगवान की द्रव्यपूजा करें। परिग्रह का ज़हर तीव्र है न? उस ज़हर को उतारने के लिए द्रव्यपूजा है। मंदिर में जाएं और कोई केसर की कटोरी दे, उससे पूजा करें, तो इससे क्या परिग्रह का जहर उतरेगा? स्वयं के द्रव्य का उपयोग होता हो तो मन में यह भाव हो 'मेरा धन शरीरादि के लिए तो खूब उपयोग में आया। उसमें जाने वाले धन से पाप में वृद्धि होती है। जब कि तीन लोक के नाथ की भक्ति में यदि मेरे धन का उपयोग हो तो वह सार्थक है।' **स्वयं के द्रव्य से पूजा करने में भाव वृद्धि का जो प्रसंग है वह अन्य के द्रव्य से पूजा करने में नहीं। यदि भाव पैदा करने का कारण ही न हो तो भाव पैदा हों ही कैसे?**

धनहीन श्रावक सामायिक लेकर जिन मंदिर जाए :

सभा : *सुविधा के अभाव में जो जिन पूजा किए बिना रह जाते हों, उन्हें यदि सुविधा दी जाए तो लाभ होगा न?*

जिन पूजा करने की सुविधा कर देने का मन हो ये तो अच्छी बात है। आपको यों होगा कि 'हम तो अपने द्रव्य से प्रतिदिन जिनपूजा करते हैं, परंतु अनेक श्रावक ऐसे हैं जिनके पास सुविधा नहीं। ऐसे लोग भी जिनपूजा के लाभ से वंचित न रह जाएँ तो अच्छा।' ऐसा विचार आपके लिए शोभास्पद है। परंतु ऐसे विचारों के साथ यह भी विचार आने चाहिए कि 'स्वयं के द्रव्य से जिनपूजा करने की जिनके पास सुविधा नहीं है, उन्हें अपने द्रव्य से सुविधा कर देनी चाहिए।' इस प्रकार के भाव मन में आते ही 'जिनके पास पूजा करने की सुविधा नहीं, वे भी पूजा करने वाले बनें इस हेतु हमें अपने द्रव्य का व्यय करना है'- ऐसा निर्णय यदि आप करें, तो वह आपके लिए लाभ का कारण है। परंतु जिन पूजा करने वाले का स्वयं का मनोभाव कैसा हो उसकी यहाँ चर्चा चल रही है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सभा : *अन्य के द्रव्य से पूजा करने वाले के मन में उत्तम भाव आएंगे ही नहीं?*

अन्य के द्रव्य से जिन पूजा करने वाले को अच्छे भाव आने के कारण क्या हैं? स्वयं जिनपूजा के लिए खर्च नहीं कर सकते, इस प्रमाण में उनके पास द्रव्य नहीं है, और जिनपूजा से वंचित रहते हैं, जो उन्हें पसंद नहीं है, अत: वे परद्रव्य से जिनपूजा करते हों तो उसे 'पूजा में परद्रव्य का उपयोग करना पड़ता है और स्व-द्रव्य का उपयोग नहीं कर सकता है।' यह उसे खटकता है, यह तय है । इस दृष्टि से उसकी इच्छा तो स्व-द्रव्य से ही पूजा करने की हुई न? शक्ति नहीं है इस कारण से ही वह परद्रव्य से पूजा करता है न? यदि उसे मौका मिले तो वह स्व-द्रव्य से पूजा करने में कभी भी नहीं चूकेगा। यदि ऐसी मनोवृत्ति हो तो अच्छे भाव आ सकते हैं, क्योंकि जिसने परिग्रह की मूर्च्छा को उतारकर पूजा का साधन प्रदान किया, उसकी तो वह अनुमोदना करता ही है, परंतु विचारणीय बात तो यह है कि आज जो लोग स्व-द्रव्य को व्यय किये बिना ही पूजा करते हैं, क्या वे गरीब हैं या पूजा के लिए कोई खर्च नहीं ही कर सकते?

जो श्रावक धनहीन होते हैं, उनके लिए शास्त्रों में कहा है कि ऐसे श्रावकों को घर पर सामायिक लेना चाहिए। फिर यदि किसी का कोई ऐसा कर्ज न हो कि जिसके कारण धर्म की लघुता होने का प्रसंग उपस्थित हो, तो वह श्रावक सामायिक में स्थिर रहकर एवम् ईर्यासमिति आदि का पालन करते हुए जिनमंदिर में जाए और वहाँ जाकर वह श्रावक देखे कि 'क्या मैं अपने शरीर के श्रम से किसी गृहस्थ की देवपूजा की सामग्री के कार्य में मददरूप हो सकता हूँ?' जैसेकि किसी धनवान श्रावक ने प्रभु पूजा के हेतु पुष्प प्राप्त किये हों और उन पुष्पों की माला बनानी हो, ऐसा कोई कार्य हो तो वह श्रावक सामायिक पालते हुए उस कार्य को करने के साथ द्रव्य पूजा का भी लाभ प्राप्त कर ले।

शास्त्रों ने यहाँ स्पष्ट किया है कि, द्रव्य पूजा की सामग्री स्वयं के पास नहीं है और द्रव्य पूजा के लिए आवश्यक सामग्री का खर्च निर्धनता के कारण यदि स्वयं नहीं कर सकता है, इसीलिए सामायिक का पालन करते हुए अन्य की सामग्री द्वारा वह इस प्रकार का लाभ प्राप्त करे। सो योग्य ही है। **पुनश्च शास्त्रों में यह भी कथन है कि प्रतिदिन जो अष्टप्रकारी पूजा नहीं कर सकता हो वह कम से कम प्रतिदिन अक्षत पूजा करने के द्वारा पूजा का आचरण करे।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संघ की सामग्री से पूजा करने वालों से..... :

शास्त्रों में ऐसी स्पष्ट बातों का कथन होने पर भी श्रावकों द्वारा देवद्रव्य से केसर आदि की पूजा कराने की बातें शास्त्र पाठों के नाम से की जा रही है और उसमें दिनोंदिन सम्मति देनेवालों की वृद्धि होती जा रही है।

जिनपूजा के संबंध में आज अनेक स्थानों पर स्नानादि की व्यवस्था की गई है। परंतु वहाँ क्या होता है वह देखो। नहानेवाले १५०० और पूजा करने वाले ५०० ऐसी दशा है। पूजा करने वाले भी ऐसे पूजा करते हैं मानो उपकार कर रहे हों। पूजा करने के पश्चात् थाली और कटोरी इधर-उधर रख देते हैं और पूजा के वस्त्र उतारकर जहाँ-तहाँ फेंक देते हैं? **पूजा के वस्त्रों के संबंध में भी शास्त्रों में तो इस प्रकार की विधि कही है कि, संभव हो तब तक दूसरों के कपड़े न पहनें और स्वयं के वस्त्र भी शुद्ध रक्खें, अन्यथा आशातना का पाप लगेगा।**

कुमारपाल राजा के पूजा करने के वस्त्रों का एक बार बाहड़ मंत्री के छोटे भाई चाहड़ ने उपयोग किया था, इससे कुमारपाल ने उन वस्त्रों को पूजा के लिए नहीं पहने और चाहड़ से नये वस्त्र लाने को कहा। चाहड़ ने कहा कि ये वस्त्र बम्बेरा नाम की नगरी से आते हैं और वहाँ का राजा जो वस्त्र भेजता है, वह उनका एकबार उपयोग करके ही यहाँ भेजता है। तुरंत ही कुमारपाल ने पूजा के वस्त्र अन्य किसी के द्वारा उपयोग में लिये बिना प्राप्त हों - ऐसी व्यवस्था करने की आज्ञा की। इस हेतु कुमारपाल ने बियुल धनराशि खर्च की। क्योंकि शक्ति के अनुसार भावना जागृत हुए बिना नहीं रहती।

महाराज श्रेणिक प्रतिदिन जवला बनवाते थे। ऐसे-ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं। यह तुमने सुना है या नहीं? सुनने के पश्चात् भी तुम्हारी पूजा की सामग्री तुम्हारी शक्ति के अनुसार है? **अपने यहाँ पश्चानुपूर्वी क्रमानुसार विवेचन उपलब्ध है, पूर्वानुपूर्वी क्रम से भी विवेचन आता है और अनानुपूर्वी क्रम से भी विवेचन आता है। यहाँ देवपूजा की बात बाद में रखी गई और संविभाग की बात पहले प्रस्तुत की गई। उसमें जो हेतु है वह समझने योग्य है। स्वयं की वस्तु का त्याग करने की और उसके सदुपयोग करने की वृत्ति के बिना यदि पूजा की जाय तो ऐसी पूजा का कोई महत्त्व नहीं होता।** सामान्य स्थिति में भी उदार हृदय का श्रावक जिस रीति से देवपूजा कर सकता है, उस प्रकार से तो कृपण श्रीमंत भी देवपूजादि नहीं कर सकता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुछ पूजा करनेवाले भगवान को तिलक करते हैं, वह भी ऐसा अविवेक से करते हैं मानो उन्हें पूजा का कोई ध्यान ही नहीं। भगवान के प्रति उसके अंतःकरण में कितना सम्मान होगा, ऐसा विचार उसे पूजा करता देखकर हो जाता है। **यदि भगवान के प्रति सच्चा भक्तिभाव होता, 'भगवान की पूजा मुझे अपने द्रव्य से ही करनी चाहिए' ऐसा ख्याल होता और 'मैं कमनसीब हूँ कि स्व-द्रव्य से मैं जिनपूजा करने में समर्थ नहीं'- ऐसा लगता होता, तो वह शायद संघ द्वारा की गई व्यवस्था का लाभ लेकर पूजा करता। तब भी वह इस प्रकार करता कि उसकी प्रभुभक्ति और भक्ति करने की मनोजागृति तुरंत ही दृष्टव्य होती। स्व-द्रव्य से पूजा करनेवालों को वह हाथ जोड़ता और स्व-काया से जिनमंदिर की तथा जिनमंदिर की सामग्री की जितनी भी देख-रेख हो सकती हो उसे करने में वह कभी न चूकता। आज तो ऐसी सामान्य बातें भी यदि कोई साधु भी कहे तब भी कुछ लोगों को भारी लगती हैं।**

आपके पास द्रव्य होने पर भी दूसरे के द्रव्य से पूजा करो तो उसमें 'आज मेरा श्रीमंतपना सार्थक हुआ' ऐसा भाव प्रकट करने के लिए कोई अवकाश है क्या? वास्तव में भक्ति के भाव में त्रुटि आई है। इसीलिए आज उल्टे-सीधे विचार सूझते हैं। जिनमंदिर में रखी हुई सामग्री से ही पूजा आदि करनेवालों का विवेकहीनपना दिखाई देता है, उसका कारण क्या? **स्वयं की सामान्य मूल्य की वस्तुओं की भी वह जिस तरह संभाल करता है, उतनी मंदिर की बहुमूल्य वस्तुओं की वह संभाल नहीं करता। वास्तव में तो जिन मंदिर या संघ की छोटी से छोटी, साधारण से साधारण मूल्य की वस्तुओं की भी अच्छे से अच्छे प्रकार से संभाल करनी चाहिए।**

आज 'मुझे स्वद्रव्य से ही जिन पूजा करनी चाहिए'- यह बात बिसरती जा रही है और इसीलिए जिन स्थानों पर जैनों के अधिकाधिक घर होते हैं, उनमें भी संपन्न स्थिति वाले घर होते हैं, वहाँ पर भी केसर और चंदन के खर्च के लिए चिल्ल-पों मचने लगी है। इसके उपाय स्वरूप देवद्रव्य से जिनपूजा करने के बदले, सामग्री संपन्न जैनों को अपनी-अपनी सामग्री से शक्ति के अनुसार पूजा करने का उपदेश देना चाहिए।

देवद्रव्य के रक्षणार्थ भी इस देवद्रव्य में से श्रावकों की पूजा की सुविधा देने का मार्ग योग्य नहीं। देवद्रव्य का दुरुपयोग रोकना हो और सदुपयोग कर लेना हो, तो आज जीर्ण मंदिर कम नहीं हैं। समस्त मंदिरों के जीर्णोद्धार करने का निर्णय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करो तो उन सबके लिए पर्याप्त हो सके इतना देवद्रव्य भी नहीं है। परंतु देवद्रव्य में से श्रावकों के लिए पूजा की व्यवस्था करना और श्रावकों को देवद्रव्य में से प्राप्त सामग्री द्वारा पूजा करनेवाला बना देना यह तो उनके उद्धार का नहीं परंतु उनको डुबा देने का कार्य है।

पूजा स्वद्रव्य से ही करनी चाहिए :

जिनपूजा कायिक, वाचिक और मानसिक - तीन प्रकार की कही गई है। जिनपूजा हेतु आवश्यक सामग्री स्वयं इकट्ठी करना वह कायिक, देशान्तरादि से उस सामग्री को मंगाना वह वाचिक और नंदनवन के पुष्प आदि जो भी सामग्री प्राप्त न की जा सके उसकी कल्पना द्वारा उससे पूजा करना वह मानसिक! दूसरों की सामग्री से पूजा करनेवाले इन तीन में से किस प्रकार की पूजा कर सकते हैं?

शास्त्रों में तो गृह मंदिर में उत्पन्न देवद्रव्य से भी गृहमंदिर में पूजा करने का निषेध किया है। गृह मंदिर में उत्पन्न देवद्रव्य द्वारा संघ के जिनमंदिर में पूजा करने में भी दोष कहा गया है। और स्वद्रव्य से ही जिनपूजा करनी चाहिए, ऐसा विधान किया गया है। तीर्थयात्रा को जाते समय किसी ने धर्मकृत्य में उपयोग करने के लिए कोई द्रव्य दिया हो तो उस द्रव्य को अपने द्रव्य के साथ मिलाकर, पूजा आदि करने का भी शास्त्रों ने निषेध किया है और कहा है कि 'सर्वप्रथम देवपूजा और धर्मकृत्य स्वद्रव्य से ही करना चाहिए और बाद में ही अन्य ने जो द्रव्य दिया हो उसे सब की साक्षी में, अर्थात् 'यह अमुक के द्रव्य से पूजा करता हूँ'- ऐसा कहकर धर्मकृत्य करने चाहिए।

सामुदायिक, सामूहिक धर्मकार्य करने हों, उसमें जिसका जितना हिस्सा हो, यदि वह सबके समक्ष घोषित न करें, तो पुण्य का नाश होता है और चोरी आदि का दोष लगता है, ऐसा शास्त्रों में कहा गया है। यदि शास्त्रों में कथित इन सभी बातों पर विचार किया जाय तो सबको ये सभी बातें समझायी जा सकती हैं, जिससे जिनभक्त ऐसे सर्वश्रावकों को महसूस होगा कि, हमें अपनी शक्ति के अनुसार गाँठ के द्रव्य से ही जिनपूजा करनी चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-११

वर्तमान की समस्या का शास्त्र सम्मत समाधान

सवाल - अधिकांश संघों में देवद्रव्य लाखों रूपियों में संचित होकर बैंकों में पड़ा है । आजकल देवद्रव्य की कोई जरूरत नहीं लगती । तो क्यों न इसे साधर्मिक भक्ति या स्कूल-कॉलेज, शादी की बाड़ी, व हॉस्पीटलों में लगाएँ ? कृपया समाधान दें ।

जवाब - श्री जिनेश्वर देव की भक्ति के लिए एवं श्री जिनेश्वर देव की भक्ति के निमित्त से जिनभक्तों द्वारा समर्पित राशि देवद्रव्य कहलाती है। इस द्रव्य की मालिकी श्रावकों की या संघ की नहीं, परन्तु श्री जिनेश्वर देव की स्वयं-खुद की है ! संघ केवल इसका संचालक-ट्रस्टी है । उसे जिनेश्वर देव के बताए शास्त्रों अनुसार इस द्रव्य का संचालन करने मात्र का ही अधिकार है । इस में वह अपनी मर्जी से काम नहीं ले सकता । शास्त्र-आधारित गीतार्थ गुरु की आज्ञा से ही कार्य करना उसके लिए बंधनरूप है ।

जैन शास्त्रों के आधार से 'देवद्रव्य' की राशि केवल श्री जिनेश्वर देव के मंदिरों के जीर्णोद्धार व नवनिर्माण आदि कार्य में ही इस्तेमाल हो सकती है । अतः देवद्रव्य का इन्हीं कार्यों में उपयोग होना चाहिए । पूरे भारत में आज भी सैंकड़ों जिनमंदिर जीर्णोद्धार मांग रहे हैं । कई स्थानों पर श्रावकों को जिनमंदिर उपलब्ध नहीं हैं, वहाँ नए भी बनवाने जरूरी हैं । इस कार्य में अरबों रुपयों का व्यय अपेक्षित है । तो देवद्रव्य का बैलेन्स ही कहां से होगा ? सकल श्रीसंघ उदारता दिखाकर बैंकों के कब्जे से देवद्रव्य को मुक्तकर जीर्णोद्धार व नवनिर्माण में देवद्रव्य लगा दे तो वर्तमान काल की राजकीय विषमता से भी अपना परमपवित्र देवद्रव्य बच सकेगा । बाकी सरकारी अमलदार कब कलम की नोंक पर इसका कब्जा कर लेंगे यह अब नहीं कहा जा सकता ।

श्रावक का यह कर्तव्य है कि देवद्रव्य में नित नई वृद्धि करें । देवद्रव्य का एक पैसा भी अपने निजी धंधा-व्यापार या भोग-उपयोग में न आ जाए - इसका भी श्रावकों को ख्याल रखना चाहिए । क्योंकि शास्त्र कहते हैं कि -

देवद्रव्य का भक्षण करनेवाला,

देवद्रव्य के भक्षण की उपेक्षा करनेवाला,

देवद्रव्य की निंदा करनेवाला,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवद्रव्य की आवक (वृद्धि) को तोड़नेवाला

देवद्रव्य की बोली आदि राशि नहीं चुकानेवाला

देवद्रव्य की उगाही में शिथिलता बरतनेवाला

श्रावक हो या साधु पाप कर्म से लिप्त बनते हैं । ऐसे लोग अज्ञानी हैं, उन्होंने धर्म जाना ही नहीं है । अंततोगत्वा इस पाप से वे अनंत संसारी बननेवाले हैं । या तो इन लोगों ने नरक का आयुष्य उपार्जित कर लिया लगता है ।

अब आप विचार कीजिए कि इतना पवित्र देवद्रव्य है, इसका प्रयोग साधर्मिक भक्ति में करना याने श्रावकों को भवोभव के लिए नरक व संसार भ्रमण में डालना और पूर्व कर्मों से वर्तमान में दुःख भुगतनेवालों को देवद्रव्य देकर, पापी बनाकर भावी में भी महादुःखी बनाना क्या उचित है ?

परम पवित्र देवद्रव्य सर्वश्रेष्ठ धर्मद्रव्य है । यह किसी भी संयोग में स्कूल-कॉलेज या अस्पतालों के निर्माणादि कार्य में नहीं लगा सकते । स्कूलें - कॉलेजें खोलना-चलाना, अस्पतालों का निर्माण करना-चलाना, शादी-ब्याह के भवन विविधलक्षी हॉल आदि का निर्माणादि : ये सब सामाजिक कार्य हैं । ये सामाजिक कार्य देवद्रव्य से संपन्न नहीं हो सकते । देवद्रव्य से इन कार्यों को करना याने समूचे समाज को पाप से लिप्त कर भवभ्रमण के चक्र में धकेल देना ।

अपने श्रीशत्रुंजय, श्रीगिरनार, श्रीसमेतशिखरजी आदि एक-एक तीर्थ भी ऐसे विशाल व प्रभावक हैं कि उनके जीर्णोद्धार का काम शुरु किया जाए तो शायद कई बरसों तक चले और उसमें अरबों रुपये लग जाए । देवद्रव्य अधिक है ही कहाँ कि उस पर नजर बिगाड़ी जाए ? एक महापुरुष ने भारपूर्वक कहा था कि - "पुण्यशालियों ! देवद्रव्य अपनी सगी माँ जैसा परमपवित्र है । इस पर कभी बुरी नजर मत डालो । अपने निजी कार्य में या समाज के कार्य में कभी भी, भूलचूक से भी देवद्रव्य का एक पैसा भी इस्तेमाल मत करना । यह एक ऐसा महापाप है कि जो आपको और आपकी औलादों को जनमोंजनम तक दुःखी-महादुःखी करता रहेगा ।"

हो सके तो देवद्रव्य में वृद्धि करना, न हो सके तो उसका रक्षण करना, पर उसका नाश या उपभोग तो कभी मत करना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सवाल - साधारण खाता सातों क्षेत्र के कार्य में उपयोगी बनता है । इस खाते में राशि कम आती है तो उसे बढ़ाने के कुछ शास्त्र सापेक्ष उपाय बताने की कृपा करें ।

जवाब - साधारण खाते की राशि १-जिनप्रतिमा, २-जिनमंदिर, ३-जिनआगम-शास्त्र, ४-जिन के साधु, ५-जिन की साध्वी, ६-जिन के श्रावक व ७-जिन की श्राविका इन जैनधर्म में प्रसिद्ध सात क्षेत्रों में जहाँ कहीं भी आवश्यकता हो उस प्रमाण में खर्च कर सकते हैं ।

इन सातों क्षेत्रों में से ऊपरी पांचों क्षेत्रों की राशि ६-श्रावक व ७-श्राविका क्षेत्र में कभी भी नहीं जा सकती । जरूरत पड़ने पर नीचे के क्षेत्र की राशि ऊपर के क्षेत्र में इस्तेमाल कर सकते हैं ।

६-श्रावक व ७-श्राविका ये दोनों क्षेत्र सातों क्षेत्र में धन-राशि की आवक के प्रधान (मुख्य) स्रोत हैं । ये दो क्षेत्र गंगोत्री जैसे हैं, जिनसे गंगा का उद्‌गम होता है । इन दो क्षेत्रों के निमित्त से जो भी बोली-उछामनी या चढ़ावा होता है वह सात क्षेत्र साधारण में जमा होता है । इस में से सातों क्षेत्र में जरूरत अनुसार व्यय कर सकते हैं । पर कोई श्रावक-श्राविका स्वयं इसमें से ग्रहण नहीं कर सकते । संघ देवे तो ले सकते हैं । प्रभावना या संघभोजों जैसे कार्यों में यह राशि खर्च न करें । क्योंकि साधारण खाता बड़ी मुश्किल से खड़ा होता है ।

साधारण खाते की आवक निम्न अनुसार हो सकती है ।

- संघ की ऑफिस का उद्‌घाटन करने का लाभ
- नगर शेठ बनने का लाभ (चढ़ावा)
- संघ के मुनिम (मेहताजी) बनने का लाभ
- स्वामिवात्सल्य करवाने का लाभ
  (स्वामिवात्सल्य होने के बाद बची रकम)
- नवकारसी करवाने का लाभ
  (नवकारसी होने के बाद बची रकम)
- श्रीसंघ के महोत्सव की आमंत्रण पत्रिका में
  जय जिनेन्द्र/प्रणाम/लिखितं लिखने का लाभ
- महोत्सव के आधारस्तंभ, सहयोगी आदि रूप में पत्रिका में नाम लिखने का लाभ
- संघ के उपाश्रय के उद्‌घाटन की बोली
- बोलीयों के प्रसंग पर संघ को बिराजमान करने की, जाजम बिछाने की बोली का द्रव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

- उपाश्रय संबधी अन्य बोलियाँ व चन्दा
- सात क्षेत्र साधारण खाते के भंडार से निकली राशि
- तपस्वी के बहुमान के विभिन्न चढ़ावों की राशि
- दीक्षार्थी के बहुमान समारोह के विभिन्न चढ़ावों की राशि
- दीक्षार्थी का अंतिम बिदाई (विजय) तिलक करने की बोली
- श्रीसंघ को ऑफिस पर नूतन वर्ष के दिन प्रथम रसीद काटने का लाभ
- ऑफिस के स्थान पर या उपाश्रय में कुंकुम के हस्तचिह्न-थापा लगाने का लाभ
- साधारण खाते के स्थान पर बने व प्रभुजी की जिनपर दृष्टि न गिरती हो ऐसे स्थान पर स्थापित शासन मान्य देव-देवी की मूर्ति भरवाना, प्रतिष्ठा प्रवेश करवाना, उनकी पूजा, चूंदरी खेस चढ़ाना, उनके समक्ष के भंडारों की आय आदि भी सातक्षेत्र साधारण खाते की आय गिनी गई है ।
- किसी प्रभावक सुश्रावक, श्राविका की प्रतिमा या प्रतिकृति का उद्घाटन (अनावरण) आदि करने का लाभ
- संघ के प्रतिघर, प्रति रसोई घर, प्रति चूल्हा निश्चित किया शुल्क (लागा-लगान) या चंदा
- संघ के सदस्य बनने हेतु निश्चित किया गया नकरा-शुल्क फी
- साधारण खाते की प्रॉपर्टी - फर्निचर आदि बेचने से आई हुई राशि
- श्रावकों द्वारा साधारण खाते में प्राप्त नगद नारायण व घर-दुकान-बाजार-खेत आदि की आवक
- साधारण खाते के स्थानों का प्राप्त किराया
- साधारण खाते को F.D. से आय ब्याज
- साधारण खाते की राशि से हुए व्यापार का मुनाफा
- इस तरह और भी कई मार्गों से साधारण खाता पुष्ट किया जा सकता है ।

लेकिन इतना जरूर याद रखें कि -

देवद्रव्य, स्वप्न के चढ़ावों आदि किसी भी अन्य पूज्य पवित्र ऊपरी खातों के लाभों के साथ साधारण का सरचार्ज लगाकर साधारण खाता न बनाएँ । देवद्रव्यादि पर टैक्स, सरचार्ज आदि लगाकर साधारण की राशि इकट्ठा करना महापाप है । वह साधारण नहीं अपितु एक प्रकार का देवद्रव्य आदि ही बन जाता है । अतः ऐसी भूल कभी न करें।

स्वप्न द्रव्य भी देवद्रव्य ही है । उसे १००% या ६०% ५०% ४०% आदि किसी भी प्रतिशत से साधारण में न ले जाएँ । वह १००% देवद्रव्य ही है । देवद्रव्य में ही ले जाना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सवाल - ३ चढ़ावा आदि से एकत्र हुआ धर्मद्रव्य भविष्य मे काम आएगा, यह सोचकर अपने संघ में रखना चाहिए अथवा अन्य संघ में जरूरत के अनुसार देना चाहिए ? धर्मद्रव्य लोन के तौर पर अन्य संघ में दिया जा सकता है या नहीं ? देवद्रव्य देकर उसके एवज में साधारण द्रव्य लिया जा सकता है या नहीं ?

जवाब - ३ संघ में जिन मंदिर का नवनिर्माण अथवा प्राचीन जिन मंदिर का जीर्णोद्धार, ज्ञानभंडार निर्माण आदि कोई भी कार्य श्रावक संघ को स्वद्रव्य से ही करना चाहिए। जब संघ स्वद्रव्य से करने में सक्षम न हो तो ही, देवद्रव्य - ज्ञानद्रव्य आदि की उपज से विभिन्न क्षेत्र के लिए संभव स्थानीय संघ के कार्य करने चाहिए। अपने संघ के कार्य भक्तिपूर्ण उदार श्रावकों को स्वयं चढ़ावा आदि की उपज अन्य संघों में देनी चाहिए। इससे दो लाभ प्राप्त होते हैं। (१) शक्तिमान श्रावकों को स्वद्रव्य से जिनभक्ति-गुरुभक्ति व ज्ञानभक्ति आदि का लाभ मिलता है और (२) परगामादि के असमर्थ संघों में द्रव्य के अभाव से अधूरे जिन मंदिरादि के कार्य पूर्ण करने का लाभ मिलता है।

स्थानीय संघ की द्रव्य खर्च करने की क्षमता न हो और कार्य अनिवार्य हो तो संघ में हुई अलग-अलग विभागों की उपज की रकम स्थानीय संघ के ही, संबंधित विभाग में शास्त्रनीति से उपयोग करना निषिद्ध नहीं है। निकट भविष्य में कार्य करने का आयोजन हो तो भी वह द्रव्य स्थानीय संघ में रखने का भी निषेध नहीं है। परन्तु यदि ऐसा कार्य न हो तो निश्चित रूप से अन्य संघों के संबंधित अधूरे कार्य पूरे करने के लिए वह द्रव्य देना ही चाहिए। क्योंकि फलतः तो प्रत्येक संघ, जैनशासन नामक मुख्य संस्था की उप संस्थाएं ही हैं। प्रत्येक संघ में हुई उपज भी जैन शासन की ही उपज है। उपशाखा में हुई उपज जैसे मुख्य शाखा, अपनी अन्य जरूरतमंद उपशाखा में देकर उस शाखा को मजबूत करती है। वैसा ही इसमें भी समझें।

दूसरी बात यह है कि धर्मद्रव्य की राशि 'लोन' के तौर पर दी जा सकती है या नहीं ? इस बारे में यदि अपना श्रीसंघ सक्षम हो तो ऐसा करने की जरूरत नहीं है। अभी एक संघ स्वच्छ भावना से उदारतापूर्वक रकम अन्यत्र देगा तो भविष्य में अन्य संघ भी जरूर ऐसी ही उदारता दिखाएंगे। किन्तु जब स्थानीय संघ में भविष्य में करने योग्य कार्य आंखों के सामने हों तो अल्पकाल के लिए अन्य संघ को लोन के तौर पर रकम देनी चाहिए। उस संघ में कार्य पूर्ण होने पर अनुकूलतानुसार वापस ली जा सकती है। जैन शासन रूपी मुख्य संस्था की उप शाखाएं इस प्रकार एक दूसरे की मदद करें यह उत्तम मार्ग है। अज्ञानतावश अथवा ममत्व के वश होकर उपज की रकम एकत्र ही करें और जरूरत के अनुसार उपयोग न करें अथवा न दें, यह दोष का कारण है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसरी बात देवद्रव्य की रकम देकर एवज में साधारण द्रव्य की रकम मांगना उचित नहीं लगता है। इस प्रकार अदला-बदली से प्राप्त किए गए साधारण द्रव्य का उपयोग करने से देवद्रव्य के भक्षण का आंशिक दोष लगता है। इसी प्रकार साधारण द्रव्य के बदले देवद्रव्य की मांग करना भी योग्य नहीं लगता है। कुछ संघ में सात क्षेत्र की कोई शास्त्रीय व्यवस्था नहीं होती है। प्रत्येक क्षेत्र की आय एक ही थैली में एकत्र करके संचालन किया जाता है। ऐसी संस्था से साधारण के नाम पर द्रव्य लेने से अन्य देवद्रव्य - गुरुद्रव्य - ज्ञान द्रव्य आदि के उपभोग-भक्षण का दोष लगता है। जबकि ऐसी संस्था में देवद्रव्य देने से उसके नाश का दोष लगता है। इस प्रकार कई अनिष्ट होने की संभावना के चलते बदले की उम्मीद से कुछ भी नहीं करना चाहिए।

सवाल - ४ धर्मद्रव्य के संचालन के लिए ट्रस्ट बनाना जरूरी है या नहीं ? यह बताइए।

जवाब - ४ सात क्षेत्र की व्यवस्था तथा धर्मद्रव्य की सुरक्षा करना चतुर्विध श्रीसंघ का कर्तव्य होता है। सात क्षेत्र की संपूर्ण व्यवस्था प्राचीनकाल से श्री जैन संघ करता आया है। श्री श्राद्धविधि, धर्मसंग्रह तथा द्रव्यसप्ततिका जैसे महान ग्रंथों में दर्शाए गुण जिसके जीवन में हों वे सुयोग्य आत्माएं संघ के कर्ताधर्ता बनने और द्रव्य संचालन करने के अधिकारी होते हैं। ऐसे अधिकारी कर्ताधर्ताओं को गीतार्थ गुरु भगवंतों के चरणों में बैठकर द्रव्य संचालन के शास्त्रीय मार्गों को जानना चाहिए। उसी के अनुसार सात क्षेत्र का संचालन व श्री संघ की जिम्मेदारियों का निर्वाह करना चाहिए। संघ के संचालक तथा द्रव्य संचालक गीतार्थ गुरु भगवंत की आज्ञा का पालन करने के लिए समर्पित होने चाहिए। उसी प्रकार गीतार्थ गुरु भगवंत जिनवचन को दर्शानेवाले धर्मशास्त्रों को समर्पित होने चाहिए।

श्रीसंघ व द्रव्य संचालन की यह व्यवस्था आज तक अखंड रूप से चलती आई है। जब तक यह व्यवस्था सुचारू रूप से चलेगी तब तक श्री जैन शासन सुरक्षित तरीके से चलेगा। जहां यह व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई है वहां इसके परिणाम अत्यंत भयंकर आए हैं और अव्यवस्था देखने को मिल रही है।

आज भी जैन धर्मक्षेत्रों की यह मूलभूत व्यवस्था प्रवर्तमान होने से जैन धर्म की कोई भी धार्मिक प्रवृत्ति अथवा धर्मादा (चेरीटेबल ट्रस्ट) प्रवृत्ति करने-कराने के लिए किसी भी सरकारी कानून के अंतर्गत रजिस्ट्रेशन आदि कराने की आवश्यकता नहीं है। इसके बावजूद देश के कुछ राज्यों में (उदाहरणतया महाराष्ट्र, गुजरात) सरकार ने 'पब्लिक ट्रस्ट एक्ट' लागू करके ऐसे कार्य करनेवाले समूहों - संघों के लिए रजिस्ट्रेशन अनिवार्य किया है। जब यह कानून बना तब जैनाचार्यों व जैन नेताओं ने इसका कई मुद्दों पर विरोध भी किया था परन्तु उसकी अवगणना करके यह कानून किया गया था और जैन समूहों-संघों के लिए रजिस्ट्रेशन की अनिवार्यता लागू की गई है इसलिए धार्मिक संस्थाओं के लिए रजिस्ट्रेशन अनिवार्य हो गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परन्तु जैन संस्थाएं जैन धर्म की उपरोक्त मूलभूत व्यवस्था-संचालन - प्रसंचालन पद्धति को ही मानता है, उस पर श्रद्धा रखता है और जब भी ट्रस्ट के अस्तित्व व व्यवस्था संबंधी प्रश्न खड़े हों तब इस मूलभूत व्यवस्था-प्रसंचालन-संचालन पद्धति का ही पूर्ण निष्ठा से अनुसरण करने के लिए कटिबद्ध रहेंगे। यह बात स्पष्ट रहनी चाहिए।

आज वैकल्पिक व्यवस्था के अभाव में धार्मिक व धर्मादा संस्था के कानून व नियमों को ध्यान में रखते हुए संघ की चल-अचल सम्पत्ति की सुरक्षा, खर्च आदि के लिए ट्रस्ट व्यवस्था तैयार करना जरूरी है। संघ के सदस्यों का विश्वास हासिल करने की दृष्टि से भी यह व्यवस्था जरूरी लगती है।

ट्रस्ट की स्थापना रजिस्ट्रेशन करने से कानूनी ढंग से जो सुविधाएं मिलती हैं वे निम्नानुसार हैं।

१. संघ की चल-अचल सम्पत्ति को कानूनी दर्जा प्राप्त होता है। इन सम्पत्तियों के संदर्भ में संस्था के मालिकाना अधिकार सुरक्षित होते हैं।

२. जैन धर्म व संघ के अधिकारों के लिए अदालती कार्यों में वैध दर्जा प्राप्त होता है।

३. जैन धर्म के तीर्थों व स्थानीय संघों की संपत्ति के संदर्भ में कोई व्यक्ति अवैध तरीके से हक जताए अथवा दावा करे तो उसके खिलाफ कानूनी कार्यवाही की जा सकती है।

४. ट्रस्ट स्थापना करने से संघ के सात क्षेत्रों के द्रव्य संचालन में पारदर्शिता आती है। धर्म द्रव्य की आय तथा खर्च के सभी श्रोत, दाताओं के लिए पारदर्शिता रहती है। परिणामस्वरूप दाता का संस्था पर विश्वास मजबूत बनता है।, भविष्य में दान का भाव और प्रवाह बढ़ता है।

५. वैध ट्रस्ट होने से धर्मादा करने वाले व्यक्ति को कर में राहत व मुक्ति भी मिलती है।

६. ट्रस्ट की स्थापना करने से ट्रस्ट के नाम से बैंक में खाते को वैध दर्जा मिलता है। ट्रस्ट के नाम से शास्त्रीय मर्यादानुसार सातों क्षेत्र के अलग-अलग खाते खुलवाकर यदि संचालन किया जाए तो संबंधित खाते का द्रव्य अन्य विभाग में खर्च होने की संभावना नहीं रहती है।

७. धर्मद्रव्य की आय का शास्त्रीय पद्धति से सात क्षेत्रादि में विभागीकरण करके विविध क्षेत्र की रकम का ब्याज हासिल करके विविध क्षेत्र के द्रव्य की वृद्धि करनी चाहिए।

८. धर्मद्रव्य की आय, ट्रस्ट के नाम से रसीद देकर रकम कानूनी ढंग से जमा की जा सकती है। बैंक आदि में एफ.डी. (फिक्स डिपोजिट) आदि की रसीद भी प्राप्त की जा सकती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९. विभिन्न क्षेत्र के विभाग की रकम का ब्याज भी विविध खाते में जमा करना सरल हो जाता है। कुछ ही निश्चित खाते हों तो भी विविध क्षेत्र की रकम का औसत के अनुसार ब्याज भी आवंटित किया जा सकता है।

१०. रजिस्टर्ड ट्रस्ट होने से बैंक में लॉकर-सेफ की भी सुविधा मिलती है। जहां परमात्मा के रजिस्टर्ड गहने, महत्वपूर्ण दस्तावेजों की सुरक्षा हो सकती है।

११. धर्मद्रव्य का शास्त्रीय खर्च भी रसीद लेकर किए जाने से तथा रसीद के आधार पर ही दस्तावेज में उस खर्च का उल्लेख किए जाने से संचालन की स्पष्ट पारदर्शिता बनी रहती है।

१२. संस्था के मुनीम अथवा स्टाफ को भी वैध मस्टर रोल पर लिया जा सकता है। उनके वेतन आदि के खर्च दस्तावेज में बताए जा सकते हैं।

१३. एक ही उद्देश्य से स्थापित अन्य ट्रस्ट को भेंट अथवा लोन देना अथवा लेना हो तो लिया-दिया जा सकता है।

१४. ट्रस्ट न किया जाए तो आज की वैधानिक परिस्थिति के अनुसार दानवीर द्वारा दी गई रकम संघ में जमा न होकर उसका दुर्व्यय होने की संभावना रहती है। दानवीर की ओर से किया गया नकद भुगतान भी यदि ट्रस्ट का वैध लेटरपेड न हो तो अयोग्य मार्ग पर जाने की संभावना रहती है, जबकि ट्रस्ट वैध हो तो ऐसा होने की संभावना नहीं रहती है।

१५. संस्था की किसी भी सम्पत्ति का क्रय-विक्रय ट्रस्ट के नाम से ही हो सकता है। इससे भविष्य में हक-दावे का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। सम्पत्ति के क्रय-विक्रय में हुए लाभ-हानि का भी हिसाबी दस्तावेज में उल्लेख किया जा सकता है।

१६. दानवीर को रजिस्टर्ड ट्रस्ट की रसीद मिलने से दान में विश्वास उत्पन्न होता है।

इसलिए मौजूदा वैधानिक परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए ट्रस्ट का पंजीकरण कराना अनिवार्य बनाया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट -१२

रोकने जैसी एक आशातना

प्रतिमा आत्मारूप, प्रासाद देहरूप, आमलसार ग्रीवा-गर्दनरूप,
कलश मस्तकरूप व ध्वजा केशरूप
सोमपुरा अमृतलाल मूलशंकर त्रिवेदी, पालीताणा

पिछले कुछ समय से मंदिर निर्माण के विषय में आशातना का एक नया ही प्रकार सम्मिलित हुआ है और दिन-प्रतिदिन यह रुढ़-दृढ़ होता जा रहा है। यह आशातना मंदिर के शिखर पर ध्वजा चढ़ाने की अनुकूलता के लिए साधन उपयोग करने के रूप में फैलती जा रही है। इस सुविधा का उपयोग वर्ष में एक ही बार हो सकता है। यह तो ठीक किन्तु शास्त्रीयता का घात करने पूर्वक और बारहों महीने तक मंदिर-शिखर की शोभा को अशोभनीय बनाकर इस सुविधा को अपनाने का जो चलन बढ़ रहा है, यह अत्यंत खेदजनक है। हम प्रतिमाजी को तो पूज्य-पवित्र मानते हैं, किन्तु संपूर्ण मंदिर भी पवित्र व पूज्य है। इसलिए ही मंदिर - शिखर - कलश के अभिषेक करने का विधान है। मंदिर की पवित्रता का ज्ञान नहीं, इसीलिए शिखर पर लोहे व अन्य धातु की जाली, खपेड़ा आदि लगाकर मंदिर की शोभा बिगाड़ने का काम आजकल तेजी से बढ़ता जा रहा है। गतानुगतिक ढंग से अपनाई जाती इस आशातना को लेकर लालबत्ती दिखानेवाला यह लेख सभी को और विशेषकर ट्रस्टियों के लिए पढ़ने योग्य और विचारणीय है। - संपादक

धर्मशास्त्र व शिल्पशास्त्र ने जिसे देवस्वरूप माना है, ऐसे जैन मंदिरों के शिखरों पर वर्तमान में धातु की सीढ़ियां व शिखर के ऊपरी भाग में प्रदक्षिणा की जा सके, ऐसे धातु पिंजरे बनाने का नया प्रचलन शुरू हुआ है।

कोई भी कलाप्रिय अथवा धर्मप्रिय मनुष्य मंदिरों के ऊपरी भाग में ऐसा पिंजरा बना हुआ देखे, तो उसे आघात व ग्लानि हुए बिना नहीं रहती है। ऐसे पिंजरे बनाना यदि जरूरी होता, तो शिल्पशास्त्र की रचना करनेवालों ने इसकी विधि अवश्य बताई होती, परन्तु शिल्पशास्त्र अथवा धर्मशास्त्र के किसी भी ग्रंथ में इसका उल्लेख तक नहीं है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिल्पशास्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि, शास्त्र के मार्ग का त्याग करके अपनी बुद्धि से कोई भी नया प्रचलन शुरू किया जाता है, तो समस्त फल का नाश होता है। हजारों वर्ष से इस देश में मंदिर बनते हैं और उन सबकी ध्वजाएं प्रतिवर्ष सालगिरह पर बदली जाती हैं। पिछले दशक से पहले ध्वजाएं बदलने के लिए सीढ़ियां और पिंजरे नहीं थे, तब भी ध्वजाएं बदली जाती थी। अभी भी शत्रुंजय, तारंगा, गिरनार, राणकपुर आदि जगहों पर सीढ़ी व पिंजरों के बिना ही ध्वजाएं बदली जाती हैं।

ध्वजा बदलने के लिए श्रावकों को मंदिर पर चढ़ना ही चाहिए, ऐसा कोई धार्मिक नियम जानकारी में नहीं है। जिस दिशा से ध्वजा चढ़ानी हो, उसी दिशा से व्यक्ति शिखर पर चढ़ सकते हैं, वे ध्वजा लेकर ऊपर जाएं और ध्वजा बदलने का काम करें। यह पद्धति हजारों वर्ष से चली आ रही है और यही पद्धति ज्यादा योग्य है।

श्रावकों में ऐसी मान्यता है कि, नीचे प्रतिमाजी हों तो उनके ऊपरी भाग में चलना अथवा खड़े नहीं रहना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से दोष लगता है। इस मान्यता के अनुसार तो अनिवार्य जरूरत न हो, तब तक श्रावकों को मंदिर के शिखर पर नहीं चढ़ना चाहिए। क्योंकि मंदिर के पिछले भाग में पिंजरे के जिस भाग में श्रावक खड़े रहते हैं, वहीं नीचे प्रतिमाजी होती हैं। इसलिए स्वयं चढ़ने के बजाय अन्य व्यक्ति से ध्वजा चढ़वाना ज्यादा योग्य है। इसके बावजूद अपने हाथ से ही ध्वजा चढ़ाने का आग्रह हो, तो इसके लिए नीचे खड़े रहकर ध्वजा चढ़ाई जा सके, ऐसा दूसरा मार्ग निकाला जा सकता है। यह हम अंत में देखेंगे।

'आचार दिनकर' नामक वर्धमानसूरीजी द्वारा रचित विधि-विधान के जैन ग्रंथ में तथा शिल्पशास्त्र के ग्रंथों में प्रासाद का देव-स्वरूप में वर्णन किया गया है। इसमें प्रतिमाजी आत्मा हैं और प्रासाद देह है, यह अर्थ दिया गया है। आमलसार ग्रीवा (गर्दन) है और कलश मस्तक है तथा ध्वजा केश है, यह भी कहा गया है। प्रतिमा के देहस्वरूप प्रासाद पर अपनी मान्यतानुसार सुविधा के लिए, जैसे मजदूर के सिर पर टोपली चढ़ाते हैं, वैसे पिंजरा और सीढ़ियां लगाना बहुत बड़ा अविनय माना जाता है।

इस पिंजरे व सीढ़ी से मंदिर की शोभा बिगड़ जाती है, और चबूतरा जैसा दिखाई देता है। इससे शिल्पस्थापत्य का सौंदर्य भी खत्म हो जाता है। दुःख की बात तो यह है कि, अपने बनाए मंदिरों पर ऐसे पिंजरे चढ़ाकर उनका सौंदर्य बिगाड़नेवाले श्रावकों का शिल्पकार भी विरोध नहीं करते। आमलसार को प्रासाद की ग्रीवा अथवा गरदन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माना गया है। खपेड़ों से प्रासाद की गरदन दबाई जाती है और ऐसा करना कई बार अनर्थकारी सिद्ध होता है।

कहने का तात्पर्य यही है कि, वर्तमान समय के इस अल्पकाल में देवस्वरूप प्रासादों पर धातुओं के पिंजरे और पत्थर लगाकर आपमति से मनमाने ढंग से जो अशास्त्रीय व आशातनाकारक रिवाज शुरू किए गए हों उनके दृष्टांत लेकर गतानुगतिक ढंग से अब मंदिरों पर उनका अमल न किया जाए तो अच्छा। इसके अलावा जहां ऐसा निर्माण हुआ हो, वहां से सीढ़ी-खपेड़ा आदि हटा लेना अत्यंत जरूरी है।

प्रासाद देवस्वरूप व प्रतिमाजी के देहस्वरूप होने से प्रतिमाजी की तरह ही उसे भी पवित्र जल से अभिषेक किया जाता है, यह प्रतिष्ठाविधि के जानकारों को समझाने की जरूरत नहीं है। इन जानकारों को इस दुष्टप्रथा की जड़ें और गहरी उतरें, उससे पहले ही उखाड़ फेंकने का पुरुषार्थ करना जरूरी है।

प्रासाद के ऊपर न चढ़ना पड़े और श्रावक अपने हाथ से ध्वजा चढ़ा सकें, ऐसा कैसे संभव हो, यह अब देखते हैं। 'अपराजित पृच्छा' नामक शिल्प ग्रंथ में ध्वजा दंडिका की पाटली के साथ **'चालिके द्वे'** दो धिर्रियां लगाने की आज्ञा दी गई है, जिसके अनुसार वर्तमान में भी बड़ी ध्वज दंडिकाओं की पाटली के साथ धिर्रियां लगाई जाती हैं। इनमें सांकण पिरोकर उसके माध्यम से जिस दंडिका में ध्वजा पिरोई गई है, उसे ऊपर चढ़ाकर ध्वज दंडिका की पाटली के साथ संलग्न कर दिया जाता है। यह सांकण इतनी लंबी रखनी चाहिए कि उसके द्वारा ध्वजा पिरोने की पीतल की दंडिका जगती अर्थात चबूतरे के तल तक नीचे उतारी जा सके और उसमें ध्वजा को ध्वजदंडिका पाटली के साथ संलग्न किया जा सके, इसके बाद जो व्यक्ति शिखर पर गया हो, वह सांकण को ध्वज दंड के साथ मजबूत बांधकर नीचे उतर जाए, तो श्रावकों को शिखर पर न चढ़ना पड़े और वे ध्वजा अपने हाथ से चढ़ा सकें। निर्धारित मार्ग पर ही प्रदक्षिणा भी कर सकें।

सांकण की लंबाई कम रखनी हो, तो सांकण के दोनों सिरे सूत की मजबूत डोरी से बांधे जा सकते हैं। ध्वजा ऊपर जाने के बाद अतिरिक्त डोरी खोल ली जाए और सांकण को ध्वज दंडिका के साथ बांध दिया जाए, ऐसा भी किया जा सकता है। परन्तु पिंजरे तथा सीढ़ियां लगाना धर्मशास्त्र व शिल्पशास्त्र की दृष्टि से बिल्कुल उचित नहीं हैं। क्योंकि शास्त्र विरोधी ऐसी मनमानी का प्रचलन समस्त पुण्य फल का नाश करनेवाला होता है।

(कल्याण वर्ष - ४८ (२६०) अंक - ४ जुलाई - ९१ से साभार)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

मुनिसम्मेलननो निर्णय

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

आनन्दसागर

[illegible]

विजयवल्लभसूरि

विजयभूपेन्द्रसूरि

मुनि सागरचन्द्र

[illegible]

[illegible]

संघपति

बि.सं. १९९०　　राजनगर : अहमदाबाद

मुनि सम्मेलन का शास्त्रीय निर्णय (पट्टक)

पट्टक में पूज्यों के हस्ताक्षर

वीर संवत् २४६०	विजय नेमिसूरि	विजय सिद्धिसूरि
चैत्र वद ६ गुरुवार	आनन्दसागर	विजय दानसूरि
विक्रम संवत १९९०	विजय नीतिसूरि	
चैत्र वद ६ गुरुवार	जयसिंहसूरिजी	
इस्वीसन १९३४	विजय वल्लभसूरि	
एप्रील मास ता. ५ गुरुवार	विजय भूपेन्द्रसूरि	
	मुनि सागरचन्द्र	

अखिल भारतवर्षीय जैन श्वेतांबर मुनि-सम्मेलने सर्वानुमते "पट्टकरूपे" आ नियमो कर्या छे. ते, मने सुप्रत करेल तेज आ "असल पट्टक" में आजरोज अमदावादनी शेठ आणंदजी कल्याणजीनी पेढीने सोंप्यो छे.

वंडावीला : अहमदाबाद　　कस्तूरभाई मणिभाई

ता. १०-४-३४　　संघपति

Jain Education International　For Personal & Private Use Only　www.jainelibrary.org

जिनाज्ञा से विपरीत धार्मिक वहीवट करने से लगते हुए दोष :

❖ भगवंत की आज्ञा का भंग ।

❖ जैन संघ और दाताओं का विश्वास घात ।

❖ कल्याणकारी मोक्षमार्ग के विध्वंस का पाप ।

❖ धार्मिक दान-गंगा सुखाने से कर्मबन्ध ।

❖ गलत और झुठी परंपरा से अनवस्था ।

उपरोक्त दोष लगने से आत्मा अनंतभव तक दुःख, दारिद्य और दुर्गति का भागी बनता है। स्वयं को बचाना अपने हाथ में ही है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस पुस्तक में आप पाओगे !

१. जिनाज्ञानुसार धर्मद्रव्य की आय और व्यय का शास्त्रीय मार्गदर्शन।

२. देवद्रव्य, गुरुद्रव्य, ज्ञानद्रव्य, साधारणद्रव्य और आयंबिल, उपाश्रय, साधर्मिक, पाठशाला, जीवदया, अनुकंपा इत्यादि सभी खातों के संचालन के लिए महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन।

३. नूतन दीक्षा प्रसंग, आचार्य आदि पद प्रदान प्रसंग, उद्यापन, उजमणा प्रसंग, पूज्य साधु-साध्वीजी के कालधर्म के बाद शरीर के अग्निसंस्कार - अंतिम यात्रा निमित्तक कौन कौन सी बोलियां बोली जाती हैं ? और उनकी आय कौन से खाते में ले जानी चाहिए ? उसका उपयोग कहां कर सकते हैं ? ऐसे जिनशासन के सभी अनुष्ठानों का शास्त्रीय मार्गदर्शन।

४. क्या देवद्रव्य से पूजारी वर्ग की तनखा दे सकते हैं ? नहीं तो क्यों नहीं ?

५. प्रभु की आरती-मंगलदीए में आती राशि का मालिक कौन ? पूजारी या परमात्मा ?

६. देवद्रव्य के चढावों पर साधारण आदि का सरचार्ज (वृद्धिदर) क्यों नहीं लगा सकते ?

७. स्वप्नद्रव्य देवद्रव्य ही है ? इस शास्त्रीय सत्य को पुष्ट करनेवाले विविध समुदायों के मुखी आचार्यों के पत्र....

८. प्रभुपूजा श्रावक का निजी कर्तव्य है अतः प्रभुपूजा देवद्रव्य में से नहीं, स्वद्रव्य से ही करनी चाहिए...

९. देवद्रव्य या धर्मद्रव्य होस्पिटलों व स्कूल - कोलेजों के निर्माण में क्या लगा सकते हैं ? नहीं।

१०. साधारण द्रव्य की वृद्धि कैसे करें ?

११. गुरुपूजन के चढावे की आय या सुवर्णमुद्रा, सिक्के चढाकर की हुए गुरुपूजा की राशि का उपयोग साधु साध्वी वैयावच्च के कार्य में नहीं कर सकते।

१२. सातक्षेत्र द्रव्य का उपयोग जीवदया और अनुकंपा के कार्य में नहीं कर सकते।

१३. उपाश्रय की जमीन हेतु या उसे बनाने के लिए ज्ञानद्रव्य, वैयावच्चद्रव्य, देवद्रव्य आदि का उपयोग नहीं कर सकते या उनमें से ब्याजी या बीन-व्याजी लोन भी नहीं ले सकते।

१४. उपाश्रय के मकान या जमीन का उपयोग किसी भी सांसारिक व सामाजिक या शादी-विवाहादि कार्य के लिए किराये से भी नहीं कर सकते।

१५. सातक्षेत्र, जीवदया, साधर्मिक भक्ति, पाठशाला एवं साधारण द्रव्य की पेटी - भंडार जिन मंदिर के अंदरुनी भाग में नहीं रख सकते। उन्हें उपाश्रय में या जिनमंदिर के बाहर सुरक्षित सुयोग्य स्थान में रखें।

आवृत्ति : चतुर्थ
मूल्य : सदुपयोग

जिनाज्ञानुसार सात क्षेत्र द्रव्य संचालन अभियान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Email : Contact@dharm-dhwaj.org, Web : www.dharm-dhwaj.org